

CURRICULAR MATERIAL FOR DIPLOMA IN ELEMENTARY
EDUCATION (D.EL.ED) COURSE IN DIETS OF ARUNACHAL
PRADESH

हिंदी भाषा—शिक्षण

उच्च प्राथमिक स्तर

(कोर्स कोड - 16)

डॉ० नंदलाल
विषय—विशेषज्ञ (हिंदी)
राज्य शैक्षिक अनुसंधान और
प्रशिक्षण परिषद, ईटानगर
अरुणाचल प्रदेश

पाठ्यक्रम

इकाई – 1

(क) व्याकरण – शिक्षण

- वर्ण विचार (वर्णों का वर्गीकरण)
- वर्णों का उच्चारण स्थान व प्रयत्न।
- वर्तनी की अशुद्धियाँ एवं उनका शुद्ध रूप।
- सन्धि – स्वर सन्धि।

(ख) शब्द विचार

- शब्द भेद: रचना के आधार पर, उत्पत्ति के आधार पर एवं अर्थ के आधार पर।
- शब्द रचना, उपसर्ग, प्रत्यय, समास।
- शब्दावली शिक्षण – शब्दार्थ शिक्षण विधियाँ।

(ग) पद एवं उसके भेद (संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, अव्यय)

- लिंग, वचन, कारक (संक्षिप्त परिचय)

(घ) वाक्य विचार

- वाक्य के अंग एवं प्रकार।
- वाक्य रचना के नियम।
- बिराम चिह्न।
- वाक्य गत अशुद्धियाँ।

इकाई – 2

रचना – शिक्षण

- रचना का अर्थ एवं महत्व ।
- रचना शिक्षण के उद्देश्य ।
- रचना शिक्षण की विधियाँ ।
- रचना शिक्षण में होने वाली अशुद्धियाँ ।
- अनुच्छेद रचना ।
- निबन्ध लेखन, पत्र लेखन ।

इकाई – 3

हिन्दी–शिक्षण संबंधी सहायक सामग्री एवं सहगामी क्रिया–कलाप

- कम लागत की शिक्षण सहायक सामग्री का परिचय एवं सहायक सामग्री की उपयोगिता ।
- सहगामी क्रियाओं का वर्गीकरण (वाद–विवाद प्रतियोगिता, भाषण प्रतियोगिता) कहानी एवं कविता वाचन प्रतियोगिता आदि ।

इकाई – 4

बाल–साहित्य

- बाल–साहित्य का स्वरूप तथा महत्व ।
- बाल–साहित्य के विषय ।

- बाल-साहित्य की प्रस्तुति।

इकाई – 5

हिन्दी शिक्षण में मूल्यांकन

- मूल्यांकन का अर्थ एवं उद्देश्य।
- हिन्दी शिक्षण में मूल्यांकन के लिए प्रयुक्त विधियाँ एवं साधन।
- प्रश्नों के स्वरूप के आधार पर प्रश्न-पत्र।

इकाई – 6

पाठ योजना-निर्माण

- व्याकरण शिक्षण पाठ-योजना।
(पाठ्यक्रम के आधार पर)
- रचना शिक्षण पाठ-योजना
(पाठ्यक्रम के आधार पर)

शिक्षण संकेत – (प्राथमिक स्तर की पाठ्य पुस्तक में दिए गए हैं। कृपया वहां देखिए)

व्यावहारिक कार्य (आंतरिक मूल्यांकन)

निर्देश :- प्रथम प्रायोगिक कार्य अनवार्य है तथा शेष प्रायोगिक कार्यों में कोई दो कार्य को करना है।

1. कक्षा छठवीं, सातवीं अथवा आठवीं की एक पाठ्य पुस्तक से शब्दार्थ, पर्यायवाची शब्द, विलोम शब्द, मुहावरे व लोकोक्तियों को छांटकर लिखना।
2. पर्यायवाची शब्द का चार्ट।
3. उपसर्ग एवं प्रत्यय वाले शब्दों का चार्ट।

4. वचन एवं लिंग संबंधी फलैष कार्ड ।
5. निबंध, स्वरचित कविताएँ एवं कहानियों का रचना—कार्य करवाना ।

सन्दर्भ पुस्तकें

प्रारंभिक स्तर पर हिन्दी शिक्षण भाग — II

लेखक डॉ० भगवती प्रसाद डिमरी

प्रकाषक — सुखपाल गुप्त

आर्य बुक डिपो

30, नाई बाला, करोल बाग

नई दिल्ली — 110005

इकाई— 1

(क) व्याकरण शिक्षण

भाषा, मानव मुख से निसृत वाणी को कहते हैं जो सार्थक हों। अपने विचारों और भावों को प्रकट करने के लिए भाषा महत्वपूर्ण साधन है। भाषा याददच्छिक ध्वनि-प्रतीकों की ऐसी व्यवस्था है जिसके द्वारा किसी समाज-विशेष के लोग परस्पर विचारों का आदान-प्रदान करते हैं। भाषा का मूल रूप मौखिक है और किसी भाषा की लिपि होना जरूरी नहीं है। प्रत्येक भाषा का अपना एक अलग व्याकरण होता है। कोई भी भाषा शब्द और अर्थ के मेल से ही बनती है, अतः दोनों का अपना एक अलग महत्व होता है। चूंकि भाषा का माध्यम ध्वनि-संकेत होते हैं और ये ध्वनि-संकेत ऐच्छिक होते हैं। अतः किसी भी भाषा में जब इन शब्दों का अर्थ देते हैं तो वे मात्र प्रतीक होते हैं। भाषा की तीन शब्द शक्तियाँ— अभिधा, लक्षणा और व्यंजना एक ही शब्द का अलग अर्थ देती है, क्योंकि वक्ता और श्रोता दोनों का वस्तु-बोध एक जैसा नहीं होता इसलिए दोनों का अर्थ बोध भी अलग-अलग हो सकता है। इस प्रकार देखा जाय तो भली-भाँति ज्ञात होता है कि शब्द विशेष और अर्थ विशेष के बीच संबंध आरोपित है। वास्तव में शब्द में अर्थ आदृत नहीं होता है, अतः हमें शब्द पर नहीं, अर्थ पर ज्यादा ध्यान देना चाहिए।

भाषा क्या है?:-

इसके प्रत्युत्तर में भाषा की एक सटीक परिभाषा यह हो सकती है— भाषा किसी याददच्छिक ध्वनि-प्रतीकों की ऐसी व्यवस्था है, जिसे किसी समाज का व्यक्ति परस्पर विचार विनिमय के लिए प्रयोग में लाता है। इससे कुछ बातें स्पष्ट हैं—

भाषा एक माध्यम है, लक्ष्य नहीं। भाषा व्यवस्था है। यह व्यवस्था मानव निर्मित है, ईश्वर प्रदत्त या प्रकृत नहीं। भाषा ध्वनियों की व्यवस्था है, लिखित चिह्नों की नहीं। भाषा की यह व्यवस्था ऐच्छिक है— यह व्यवस्था विचारों के आदान—प्रदान के लिए है। इस तरह का आदान—प्रदान समाज में रहकर ही होता है। भाषा की व्यवस्था ही उसका व्याकरण है। अतः ऐसी कोई भाषा नहीं हो सकती जिसका व्याकरण न हो। व्यवस्था से यह भी तात्पर्य है कि यह व्यवस्था पूर्ण होती है। अपने परिवेश को व्यक्त करने के लिए वह भाषा पूर्ण होती है। किसी भाषा की लिपि जरूरी नहीं है। मूलतः भाषा मौखिक है। वह भाषा भी व्यवस्थावद्ध होती है, जो लिखी नहीं जाती। यह सही है कि किसी भाषा को लिखने के लिए कोई लिपि ज्यादा उपयुक्त हो सकती है, कोई कम।

शब्द में अर्थ आरोपित है। यह आरोपण शब्द भाषीय अर्थ का भी हो सकता है, व्याकरणिक अर्थ का भी। शब्द का प्रयोग अपने में निहित और अपने से भिन्न अर्थ को बतलाने के लिए किया जाता है। शब्द सुनने के बाद जो वाक्यार्थ बोध होता है, वह अनुभव का रूप है।

भाषा अधिगम में व्याकरण की भूमिका (Role of Grammar in language learning):

भाषा अधिगम में व्याकरण की भूमिका अहम है। जो इस प्रकार संयोजित एवं नियोजित होता रहता है—

- भाषा परिवर्तनशील है, विकासशील है। व्याकरण उसके इस विकास पर नियंत्रण का कार्य करता है। व्याकरण भाषा को अव्यस्थित होने से बचाता है। अतः भाषा के स्वरूप को शुद्ध रखने, उसको विकृतियों से बचाने के लिए व्याकरण की शिक्षा आवश्यक है।

- व्याकरण भाषा का सहचर है। भाषा का शुद्ध स्वरूप शब्द एवं व्याकरण के समुचित समन्वय का रूप है।
- भाषा अनुकरण से सीखी जाती है पर भाषा को प्रभावशाली बनाने के लिए उसके सर्वमान्य रूप को सीखना होता है। भाषा के सर्वमान्य रूप को जानने के लिए व्याकरण को जानना होता है।
- व्याकरण के बिना कोई भी भाषा शिक्षण अधूरा है। व्याकरण के ज्ञान के अभाव में शुद्ध बोलना और लिखना संभव नहीं है। भाषा में व्याकरण के बिना अराजकता की स्थिति उत्पन्न हो सकती है, अतः भाषा को विकृति से बचाने, उसके शुद्ध रूप को सुरक्षित रखने तथा भाषा में स्थायीत्व लाने के लिए भाषा में व्याकरण की आवश्यकता अहम है।

व्याकरण के अंग: भाषा ध्वनियों पर आधारित होती है। ध्वनियों से शब्द और शब्दों से वाक्य बनते हैं। इस आधार पर व्याकरण के तीन अंग होते हैं—

1. वर्ण विचार
 2. शब्द विचार
 3. वाक्य विचार
- वर्ण विचार के अन्तर्गत वर्णों से सम्बन्धित उनके आकार, उच्चारण, वर्गीकरण तथा उनके मेल से शब्द बनाने के नियम आदि का उल्लेख किया जाता है
 - शब्द विचार के अंतर्गत शब्द से सम्बन्धित उसके भेद, उत्पत्ति, व्युत्पत्ति तथा रचना आदि का विवरण होता है।
 - वाक्य रचना के अंतर्गत वाक्य से सम्बन्धित उसके भेद, अन्वय, विश्लेषण संश्लेषण रचना, अवयव तथा शब्दों से वाक्य बनाने के नियमों की जानकारी दी जाती है।

वर्ण—विचार या वर्ण प्रकरण (Orthography):

मानक हिंदी का जो रूप आज हमारे समक्ष है, वह लगभग दस शताब्दियों के विकास का परिणाम है। इस बीच में जिन भाषिक तत्वों (ध्वनि, पद, वाक्य, शब्दकोष और अर्थ) का विकास हुआ है, उनको तथा आज की हिंदीको दृष्टिगत रखते हुए ही हम हिंदी की प्रकृति को निर्धारित कर सकते हैं। यद्यपि यह सत्य है कि— भाषिक प्रकृति पर भाषा के शैली तत्व तथा वक्ताओं की सांस्कृतिक दृष्टि का विशेष प्रभाव पड़ता है। भाषिक प्रकृति को प्रभावित करने वाले इन तत्वों के विस्तार में न जाकर वर्तमान हिंदी की प्रकृति और स्वरूप का विवेचन इस प्रकार है—

स्वर:

मानक हिन्दी में अ आ, इ ई, उ ऊ, ए ऐ, ओ औ 10 स्वर हैं। संस्कृत की 'ऋ' ध्वनि यहाँ लुप्त है। संस्कृत शब्दों की वर्तनी में 'ऋ' अवश्य विद्यमान है, किन्तु उच्चारण में स्वरवत् उच्चारण लुप्त प्रायः है। उच्चारण ऋ का केवल 'रि' है। हिंदी भाषा की ध्वनियों को दो समूहों में विभक्त कर उनको देखा जाता है जो स्वर और व्यंजन के रूप में होते हैं। इनके लिए लिखित भाषा में जो चिह्न मान लिए गए हैं, वे वर्ण कहलाते हैं। स्वर स्वतन्त्र ध्वनियां होती हैं परन्तु व्यंजनों के प्रयोग में स्वरों की सहायता ली जाती है। इस प्रकार स्वरों की संख्या मुख्य रूप से ग्यारह हैं— अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ऋ, ए, ऐ, ओ, औ।

स्वरों का वर्गीकरण:

स्वरों का वर्गीकरण विभिन्न आधारों पर किया जाता है।

1. मात्रा या उच्चारण की अवधि के आधार पर:

उसके आधार पर स्वरों की गणना तीन प्रकार से की गयी है—

(क) ह्रस्व स्वर:

जिन स्वरों के उच्चारण में एक मात्रा का समय लगता है वे ह्रस्व स्वर कहलाते हैं— अ, इ, उ और ऋ ।

(ख) दीर्घ स्वर:

जिन स्वरों के उच्चारण में दो मात्रा का अर्थात् ह्रस्व स्वर से दुगुना समय लगता है वे दीर्घ स्वर कहलाते हैं यथा— आ, ई, ऊ, ए, ऐ, ओ, औ ।

(ग) प्लुत स्वर:

जिन स्वरों के उच्चारण में ह्रस्व स्वरों से तिगुना अर्थात् तीन मात्राओं का समय लगे वे प्लुत स्वर कहलाते हैं। इनका प्रयोग प्रायः दूर से पुकारने के लिए किया जाता है, यथा राइम्, ओऽम्, ण ।

2. आभ्यांतर प्रयत्न के आधार पर:

मुख विवर और नासिका विवर के अन्दर जो प्रयत्न होते हैं, उन्हें आभ्यांतर प्रयत्न कहते हैं। इसके अनुसार ध्वनियों के निम्न चार भेद हैं—

(क) संवृत स्वर:

वे स्वर जिनका उच्चारण करने में मुख द्वार बहुत सकरा हो जाता है, वे संवृत स्वर कहलाते हैं। जैसे— इ, ई, उ तथा ऊ संवृत स्वर हैं।

(ख) अर्द्धसंवृत स्वर:

वे स्वर जिनका उच्चारण करने में मुख द्वार आधा सकरा हो जाता है, वे अर्द्ध संवृत स्वर कहलाते हैं, यथा— ऐ तथा औ ।

(ग) अर्द्ध विवृत स्वर:

वे स्वर जिनका उच्चारण करने में मुख द्वार आधा खुला रहता है, अर्द्ध विवृत स्वर कहलाते हैं: ऐ, अ, औ, आ इत्यादि ।

(घ) विवृत स्वर:

वे स्वर जिनके उच्चारण में मुख द्वार पूरा खुलता है, विवृत स्वर कहलाते हैं, यथा आ।

3. जिह्वा प्रयत्नानुसारः

जिह्वा के प्रयत्नानुसार स्वर के 3 भेद हैं—

1. **अग्र** : जिन स्वरों के उच्चारण में जिह्वा का अग्र भाग उठता है, यथा— इ, ई, ए तथा ऐ।
2. **मध्य** : जिन स्वरों के उच्चारण में जिह्वा का मध्य भाग उठता है, यथा— 'अ'।
3. **पश्च** : जिन स्वरों के उच्चारण में जिह्वा का पिछला भाग उठता है यथा, आ, उ, ऊ,। ओ, औ, अँ।

उच्चारण की प्रकृति के आधार पर: इन आधार पर स्वर दो प्रकार के होते हैं।

मूल स्वर:— इस स्वर में जीभ किसी एक स्थान पर स्थिर रहती है। जैसे— अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ए, ओ आदि।

संयुक्त स्वर:— इस स्वर में जीभ एक स्वर के स्थान से दूसरे स्वर के स्थान की ओर जाती है। इस चलने की स्थिति में उच्चारण हो जाता है। जैसे— ऐ, औ। ऐ तथा औ पश्चिमी हिंदी क्षेत्र में मूल रूप में उच्चारित होते रहते हैं किन्तु पूर्वी हिंदी क्षेत्र में संयुक्त रूप में। यथा— ऐ (अ+ए) औ (अ+ओ)।

अनुनासिक और अननुनासिक स्वर: सभी स्वरों के उच्चारण दो तरह से होते हैं—

1. केवल मुख से अर्थात् इनको उच्चारण करते समय वायु मुख से निकलती है।
2. मुख और नासिका से, अर्थात् इनका उच्चारण करते समय कुछ वायु मुख से और कुछ वायु नासिका (नाक) से निकलती है।

पहले प्रकार के स्वरों को अननुनासिक या निरनुनासिक कहते हैं। अ से लेकर औ तक सभी स्वर अननुनासिक हैं।

दूसरे प्रकार के स्वरों को अनुनासिक कहते हैं। अनुनासिकता सूचित करने के लिए अ, आ आदि स्वरों के ऊपर चन्द्रबिन्दु (ँ) लगा देते हैं। जैसे— हँसना, काँव, उँगली, ऊँट, सभाएँ आदि स्वरों में अ, आँ, ऊँ, उँ, एँ अनुनासिक स्वर हैं। शिरोरेखा वाले वर्ण पर ँ के स्थान पर ँ लगाना मान्य हो गया है। जैसे— मैं, क्योंकर, चौकना आदि।

स्वर गुच्छ: जहाँ दो या दो से अधिक स्वर परस्पर निकट रहते हुए भी आपस में मिलते नहीं अपितु अलग-अलग सुनाई देते हैं, वहाँ उस स्वर समूह को 'स्वर-गुच्छ' कहते हैं। हिंदी में दो प्रकार के स्वर गुच्छ उपलब्ध होते हैं—

1. दो स्वर वाले स्वर-गुच्छ।
2. तीन स्वर वाले स्वर-गुच्छ।

दो स्वर वाले स्वर-गुच्छ इस प्रकार उपयोग में लाए जाते हैं—

आई — काई, ऊँचाई, रजाई, अंगड़ाई, कढ़ाई, पुताई, बधाई, सिलाई, सफाई।

आइ — आइना, भाइयों, नाइओं, खाइयों।

अई — कई, गई, नई, मई।

अऊ — गऊ, मऊ, (एक स्थान)

अए — गए, भए, नए।

आऊ — कामचलाऊ, खाऊ, उड़ाऊ।

आए — पाए, खाए, चराए, कहलाए।

आओ — पाओ, खाओ, गाओ, जाओ।

इए — लिखिए, पढ़िए, गाइए, चलिए, चाहिए।

उआ — अगुआ, छुआं, बधुआ, दुआ।

उई — छुई, रूई, बलुई, हुई।

उए — छुए, हुए, मुए, मछुए।

उओं — बाबुओं, हिन्दुओं, दयालुओं, बंधुओं।

एई — लेई, ताताथेई।

एऊ — जनेऊ, कलेऊ।

ओई — कोई, खोई, रसोई, धोई।

ओए — रोए, सोए, खोए, डुबोए।

तीन स्वर वाले स्वर—गुच्छः— तीन स्वर वाले स्वर—गुच्छ प्रायः आ और ओ से प्रारम्भ होते हैं—

आ — आइए, खाइए, जाइए, लाइए।

ओ — रोइए, बोइए, सोइए, होइए।

उआई — अगुआई, पशुआई, गुरुआई।

अयोगवाह (अनुस्वार और विसर्ग):— हिंदी वर्णमाला में अनुस्वार (ं) और विसर्ग (ः) को 'अ' के साथ जोड़कर क्रमशः 'अं' और अः लिखा जाता है और प्रायः इन्हे स्वरों के साथ जोड़ा जाता है। यह ठीक है कि अनुस्वार और विसर्ग का उच्चारण स्वरों के साथ ही होता है। जैसे— गंगा, पांडु, प्रातः अतः आदि। किंतु ये स्वर नहीं हैं। इन्हें ही **अयोगवाह** कहा जाता है। अर्थात् इनका तालमेल न स्वरों से है, न व्यंजनों से। इनका उच्चारण व्यंजनों के उच्चारण की तरह स्वर की सहायता से ही होता है। अंतर यह है कि व्यंजनों के उच्चारण के बाद स्वर आता है और अयोगवाहों के उच्चारण से पूर्व स्वर आता है। इसलिए व्यंजनों की प्रकृति से भिन्न होने के कारण इन अयोगवाहों को व्यंजन नहीं माना जा सकता। स्वर और व्यंजन के मध्य की स्थिति होने के कारण इन्हें हिंदी लिपि में स्वरों के बाद और व्यंजनों से पहले रखा जाता है। अनुस्वार का उच्चारण उस वर्ग के पंचमाक्षर के समान होता

है, जिसके पहले वह बोला जाता है जैसे— गंगा = गङ्गा, मंच = मञ्च, संत = सन्त, दंड = दण्ड, पंप = पम्प।

य, र, ल, श, स से पहले यह 'न' सुनाई देता है। जैसे संयम, संरक्षक, संलाप, संषय, संसार। व से पूर्व यह 'म' सुनाई देता है जैसे— संवृत, संवेग। 'अ' के बाद विसर्ग का उच्चारण 'अह' होता है। यथा— स्वतः = स्वतअह, अतः = अतह।

व्यंजन (Consonant): व्यंजन उन ध्वनियों को कहते हैं, जिनके उच्चारण में निर्बाधता नहीं होता है, अपितु जिनका उच्चारण करते समय श्वास, मुख—विवर, कंठ, तालु आदि स्थानों से बाधित होकर निकलता है, उन्हें व्यंजन कहते हैं।

हिंदी वर्णमाला में तैंतीस व्यंजन स्वीकार किए जाते हैं—

क वर्ग — क् ख् ग् घ् ङ्	} स्पर्श व्यंजन
च वर्ग — च् छ् ज् झ् ञ्	
ट वर्ग — ट् ठ् ड् ढ् ण्	
त वर्ग — त् थ् द् ध् न	
प वर्ग — प् फ् ब् भ् म्	

य् र् ल् व् — अंतस्थ व्यंजन

श् ष् स् ह् — उष्म व्यंजन

ड़ ढ़ — उक्षिप्त व्यंजन

विदेशी भाषा से आगत — क्, ख्, ग्, ज्, फ्।

क्ष (क् + ष) — संयुक्त व्यंजन

त् — (त् + र)

ज्ञ — (ज् + ञ)

वर्णों का उच्चारण स्थान व प्रयत्न:

हिंदी वर्णों का वर्गीकरण निम्न आधार पर किया जाता है—

1. उच्चारण स्थान के आधार पर
2. उच्चारण प्रयत्न के आधार पर

1. उच्चारण स्थान के आधार पर:

जिस स्थान से वर्णों का उच्चारण किया जाता है वह वर्णों का उच्चारण स्थान कहलाता है।

- 1) **स्वरयन्त्रमुख** :- जिस व्यंजन का उच्चारण स्वर यन्त्र के मुख से हो जैसे—
हे।
- 2) **अलिजिह्वीय** :- कौए से उच्चरित व्यंजन इस नाम से कहे जाते हैं जैसे
क, ख, ग ध्वनियां। इन्हें जिह्वामूलीय भी कहते हैं।
- 3) **कोमल तालव्य** :- कोमल तालू से उच्चरित व्यंजन। इसे कंट्य भी कहते
हैं, जैसे क, ख, ग, घ, ङ, ओर ह। गले से और गले से थोड़ा नीचे।
- 4) **तालव्य** :- तालुभाग से इनका उच्चारण होता है जैसे— चवर्ग— च छ ज
झ ञ आदि।
- 5) **मूर्धन्य** :- मूर्द्धा से उच्चरित व्यंजन इस नाम से पुकारे जाते हैं। जैसे
टवर्ग— ट, ठ, ड, ढ, ण, ङ, ढ, र, ष इत्यादि। इन्हें मुख की छत से की
भी संज्ञा दी जाती है।
- 6) **वत्सर्य** :- मसूड़े से उच्चरित व्यंजन इस वर्ग में आते हैं जैसे— न, ल, स,
ज इत्यादि।
- 7) **दन्त्य** :- जिन व्यंजनों का उच्चारण दांत से होता है जैसे— त, थ, द, ध
इत्यादि।
- 8) **दन्तोष्ठ्य**:- ऊपर दांत और नीचे के ओष्ठ्य से उच्चरित व्यंजन कहलाते
हैं। जैसे— फ, व

- 9) **ओष्ठ्य :-** दोनों ओष्ठों से उच्चारित व्यंजन इस वर्ग में आते हैं। जैसे—
प, फ, ब, भ, म, म्ह (दोनों ओष्ठों के मिलने से)
- 10) **नासिक्य :-** उ., ज, ण, न, ङ, म, ह्य (मुख और नासिका दोनों से)

2. उच्चारण प्रयत्न के आधार पर:

ध्वनियों के उच्चारण में श्वास की मात्रा, स्वरतंत्री में श्वास के कंपन तथा जिह्वा या अन्य अवयवों द्वारा श्वास के अवरोध की सामूहिक प्रक्रिया का नाम प्रयत्न है। प्रयत्न के आधार पर व्यंजन के निम्न भेद हैं—

- 1) **स्पर्श :-** जिस प्रयत्न में उच्चारण अवयव एक दूसरे को स्पर्श करें। यथा—
क, ख, ग, घ, च, छ, ज, झ, ट, ठ, ड, ढ, त, थ, द, ध आदि स्पर्श व्यंजन हैं।
- 2) **स्पर्श संघर्षी :-** इन व्यंजनों के उच्चारण में स्पर्श तो होता है, पर साथ ही वायु रगड़ खाकर बाहर निकलती है। इसलिए इन्हें स्पर्श संघर्षी कहते हैं।
यथा— च, छ, ज, झ आदि।
- 3) **संघर्ष व्यंजन :-** जिनके उच्चारण में दो अंग एक दूसरे के इतने नजदीक या निकट आ जाये कि बीच से निकलने वाली हवा घर्षण करती हुई निकले जैसे— फ, स, ज, श, ख, ग आदि।
- 4) **पाष्पिक :-** केवल 'ल' व्यंजन ही पाष्पिक है। इसका उच्चारण करते समय हवा जीभ के दोनों पाष्पों (पक्षों) से निकलती है।
- 5) **उक्षिप्त :-** जिसके उच्चारण में जीभ ऊपर उठकर झटके के साथ नीचे आए— ड, ढ।

- 6) **संघर्षहीन सप्रवाह :-** जिसके उच्चारण में हवा बिना संघर्ष के निकलती रहे— य, व।

3. प्राणत्व के आधार पर:

श्वास की मात्रा के आधार पर व्यंजनों के दो भेद हैं—

- 1) **अल्पप्राण :-** वे व्यंजन जिनके उच्चारण में वायु की मात्रा कम होती है। वे अल्पप्राण व्यंजन कहलाते हैं। जैसे क, ग, ङ, च, ज, ञ, ट, ड, ण, त, द, न, प, ब, म अर्थात् प्रत्येक वर्ग के प्रथम, तृतीय और पंचम व्यंजन तथा क, ख, ग, ज, फ, य, र, ल, व, श, ष, स, ह और ङ इत्यादि।
- 2) **महाप्राण व्यंजन :-** जिन व्यंजनों के उच्चारण में अधिक हवा निकलती है वे ख, घ, छ, झ, ठ, ढ, थ, ध, न्ह, फ, म्, म्ह, ल्ह, ढ अर्थात् वर्गों के द्वितीय और चतुर्थ व्यंजन तथा द, न्ह, ल्ह इत्यादि।

म्ह, ल्ह, न्ह ध्वनियों का हिंदी में प्रयोग क्रमशः न, म और ल की महाप्राण की ध्वनियों में होता है। जैसे— नन्हा, उन्होंने, इन्हें, इन्हीं, कुम्हार, दूल्हा आदि।

4. घोषत्व के आधार पर:

उच्चारण के समय स्वर—तंत्रियों में कंपन होता है। इस आधार पर व्यंजनों का वर्गीकरण दो रूपों में किया जाता है—

- 1) **घोष व्यंजन :-** जिन वर्णों के उच्चारण में कंठ के अंदर स्थिर स्वरतंत्रियों में कंपन हो उन्हें घोष कहते हैं। प्रत्येक वर्ग के तीसरे चौथे तथा पाँचवे व्यंजन तथा य र ल व ह ङ ढ भी घोष व्यंजन हैं।
- 2) **अघोष व्यंजन :-** प्रत्येक वर्गों के पहले, और दूसरे तथा श, ष, स अघोष है। इनके उच्चारण के समय स्वर तंत्रियां अलग रहती हैं। फलतः उनमें कंपन नहीं होता है।

अनुनासिक स्वर (Noasal Sound):— मानक हिन्दी में सभी स्वर 'ऋ' को छोड़कर निरनुनासिक और अनुनासिक दोनों रूपों में उच्चरित होते हैं। दोनों के उच्चारण स्थान में कोई अन्तर नहीं पड़ता, केवल उच्चारण प्रयत्न की दृष्टि से निरनुनासिक का उच्चारण मौखिक होता है अर्थात् सारी प्राणवायु मुख से निकाल दी जाती है जबकि अनुनासिक स्वर के उच्चारण में प्राणवायु नासिका—विवर से निकाली जाती है। मानक हिन्दी में अनुनासिकता का ध्वनिग्रामिक महत्व है क्योंकि स्वल्पान्तर—युग्म (Minimal Pair) में प्रयुक्त होकर अनुनासिकता व्यतिरेकात्मक (Contrastive) होकर अर्थ—भेदक हो जाता है। इसलिए हिन्दी में इसे खण्डेत्तर ध्वनिग्राम की संज्ञा दी जाती है। स्वरों के अनुनासिक और निरनुनासिक उच्चारण का अन्तर महत्वपूर्ण है। मानक हिन्दी में अनुनासिकता शब्दों में स्वर के ऊपर वर्णग्राम ऋतंचीमउमद्ध के रूप में आदि, मध्य और अंत तीनों स्थितियों में मिलती है। इसमें भी वर्ण ग्राम (—) तो विशुद्ध अनुस्वार है और सहवर्णग्राम (ँ) अनुनासिकता है।

ऐतिहासिक दृष्टि से अनुस्वार का प्रयोग और अननुनासिकता तो वैदिक काल से ही एक विषिष्ट ध्वनि के रूप में मिलता है। मानक हिन्दी में अनुनासिक स्वरों का विवरण इस प्रकार है।

निरनुनासिक

अ — वश (अधिकार)

आ — बास (गंध)

हं — विधि (ब्रह्मा)

अनुनासिक

वंश (परिवार)

बाँस (वनस्पति)

विधि (विधना या डंक

मारना)

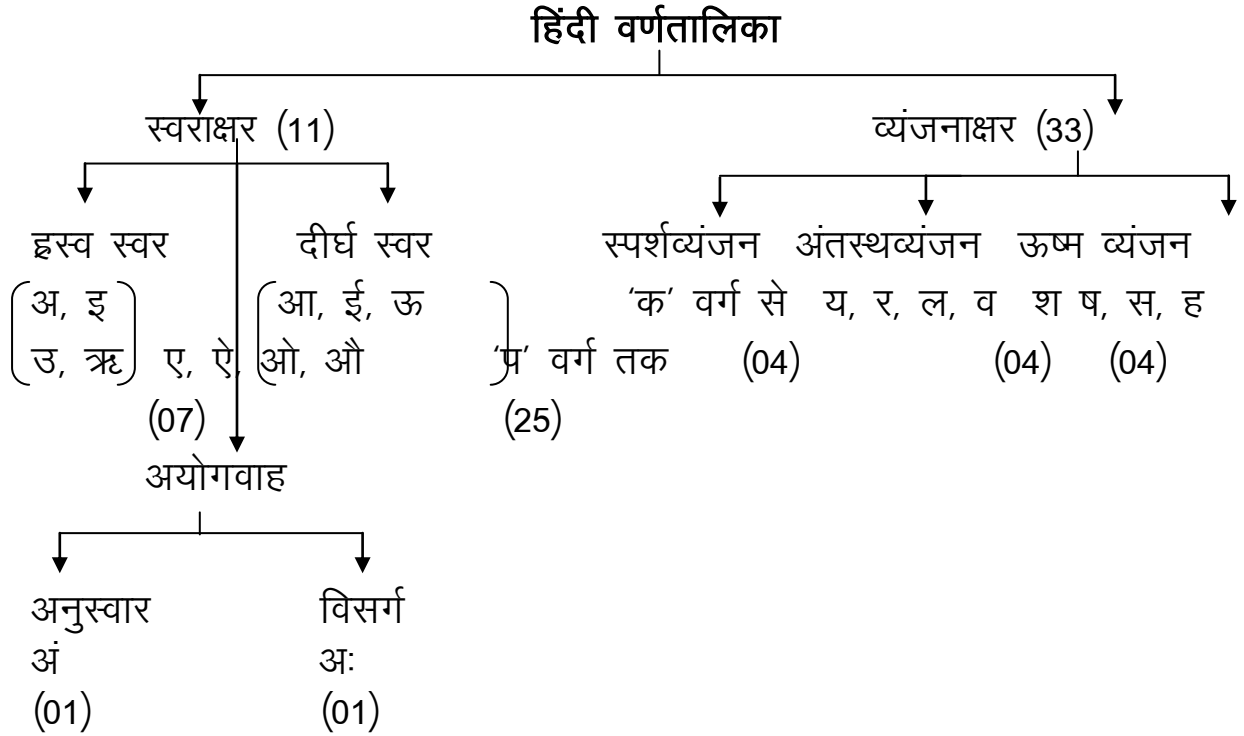
इस प्रकार हिन्दी स्वरों का विवरण वितरण और अनुक्रम मानक हिन्दी में मिलता है जिनका प्रयोग एवं उच्चारण शिक्षण के सन्दर्भ में बहुत ही महत्वपूर्ण है।

हिंदी वर्णमाला :-

अ	आ	इ	ई	उ	ऊ	ऋ	ए	ऐ	ओ	औ	अं	अः
		क	ख	ग	घ	(ङ.)						
		च	छ	ज	झ	(ञ)						
		ट	ठ	ड	ढ	ण	(ड़, ढ)					
		त	थ	द	ध	न	(न्ह)					
		प	फ	ब	भ	म	(म्ह)					
		य	र	ल	व	श	(ष)	स	ह			
		क्ष	त्र	ज्ञ	श्र							

अक्षर: जिस ध्वनि या ध्वनि समूह का उच्चारण एक साँस या प्रयत्न में होता है, वह अक्षर कहलाता है।

(एक अक्षर में एक स्वर अवश्य होता है।)



संयुक्ताक्षर :-

संयुक्ताक्षर में दो या दो से अधिक व्यंजनों का मेल होता है और दोनों के बीच स्वर नहीं रहता।

	“क” वर्ग	क→क्	ख→ख्	ग→ग्	घ→घ्	ङ→ङ्
	“च” वर्ग	च→च्	छ→छ्	ज→ज्	झ→झ्	ञ→ञ्
स्पर्श	“ट” वर्ग	ट→ट्	ठ→ठ्	ड→ड्	ढ→ढ्	ण→ण्
व्यंजन	“त” वर्ग	त→त्	थ→थ्	द→द्	ध→ध्	न→न्
	“प” वर्ग	प→प्	फ→फ्	ब→ब्	भ→भ्	म→म्
	अन्तस्थ व्यंजन	य → य्	र → र्	ल → ल्	व → व्	—
	ऊष्म व्यंजन	श → श्	ष → ष्	स → स्	ह → ह्	—

हिन्दी में संयुक्ताक्षर लिखने के लिए व्यंजनों को तीन भागों में बाँटा जाता है—

1. अंत खड़ी पाई वाले व्यंजन
2. मध्य खड़ी पाई वाले व्यंजन
3. बिना खड़ी पाई वाले व्यंजन

✱ अन्त में — खड़ी पाई वाले वर्णों को किसी दूसरे व्यंजन (‘र’ को छोड़कर) में जोड़ना हो तो खड़ी पाई को हटाकर शेष (बचे) अंश को दूसरे व्यंजन में जोड़ते हैं।

जैसे—

ख → ख् → ख्याति	प → प् → प्यार
ग → ग् → ग्वाला	ल → ल् → बिल्ली
च → च् → कच्चा	श → श् → इष्क
त → त् → सत्य	स → स् → रस्सी

- * मध्य खड़ी पाई वाले वर्णों को दूसरे व्यंजन ('र' के अलावा) जोड़ना हो तो नीचे की ओर झुके हुक (अंश) को हटाकर, उसे दूसरे व्यंजन में जोड़ते हैं।

जैसे—

क → व → क्या, मक्खन, वाक्य, क्लब, क्लेष, क्लास

फ → प → हफ्ता, पलू

- * बिना खड़ी पाई वाले वर्णों को किसी दूसरे व्यंजन ('र' के अतिरिक्त) जोड़ना हो तो वर्ण के नीचे "हल" लगा कर आगे दूसरा वर्ण लिखते हैं।

जैसे—

ट → ट् → लट्ठू

ठ → ठ् → पाठ्य

ड → ड् → बुड्ढा

ढ → ढ् → धनाढ्य

द → द् → द्वार

ह → ह् → ब्रह्म

- * र + व्यंजन:— 'र' में जब कोई व्यंजन जुड़ता है तो 'र' रेफ (') के रूप में उस वर्ण के ऊपर आ जाता है।

र् + म = र्म → कर्म, धर्म, मर्म

र् + ण = र्ण → कर्ण, वर्ण

र् + च = र्च → खर्च

र् + द = र्द → सर्दी, दर्द

र् + र = र्र → गुर्राना

* व्यंजन + र :- जब र किसी व्यंजन में जुड़ता है तो लेखन में उसके दो रूप बनते हैं-

(ˌ) और (˘)

* (ˌ) तिरछी रेखा का प्रयोग-

जैसे- क् + र = क्रम, क्रमिक, चक्र

प् + र = प्र → प्रेम

द् + र = द्र → द्रव, द्रव्य

ह् + र = ह्र → ह्रास, ह्रस्व

* ट तथा ड में 'र' जुड़ने पर 'र' के स्थान पर (˘) प्रयुक्त होता है।

जैसे- ट् + र = ट्र → राष्ट्र, ट्रक, राष्ट्रीय

ड् + र = ड्र → ड्रामा

उदाहरण : राष्ट्रीय कार्यक्रम

संयुक्त व्यंजन :-

क्ष (क्+ष), त्र (त्+र), ज्ञ (ज्+ञ), श्र (ष्+र)

अनुस्वार (शिरोबिंदु) कं

विसर्ग कः

चंद्रबिंदु कँ

अर्धचंद्र कॅ

हल् चिह्न क्

गृहीत/आगत

स्वर ओँ

व्यंजन

ख ज फ

हिन्दी अंक

देवनागरी अंक

1 2 3 4 5 6 7 8 9 0

भारतीय अंकों का अंतरराष्ट्रीय रूप

1 2 3 4 5 6 7 8 9 0

वर्तनी की अशुद्धियाँ एवं उनका शुद्ध रूप :-

कोई भी भाषा तब तक पूर्णरूपेण शुद्ध नहीं कही जा सकती, जब तक कि उसकी वर्तनी में शुद्धता का अभाव हो, वर्तनी के सही ढंग से न लिखे जाने के फलस्वरूप भावों को यथार्थ ढंग से व्यक्त नहीं किया जा सकता है, भाषा के अध्येता के लिए यह अत्यावश्यक है कि वह वर्तनी के शुद्ध रूप से भली-भाँति परिचित हों।

(1) लिंग एवं प्रत्यय से सम्बन्धित अशुद्धियाँ :-

अशुद्ध	शुद्ध	अशुद्ध	शुद्ध
प्रेयसि	प्रेयसी	विहंगिनी	विहंगी
पिशाचिनी	पिशाची	सुलोचनी	सुलोचना
भुजंगिनी	भुजंगी	अनाथिनी	अनाथा
शताब्दि	शताब्दी		

(2) सन्धि से सम्बन्धित अशुद्धियाँ :-

अशुद्ध	शुद्ध	अशुद्ध	शुद्ध
निपेक्ष	निरपेक्ष	सम्वरण	संवरण
पयोपान	पयःपान	अत्योक्ति	अत्युक्ति

निषेध	निशेध	अत्याधिक	अत्यधिक
सम्वाद	संवाद	अद्यपि	यद्यपि
सन्मुख	सम्मुख	अतेव	अतएव
किम्बदन्ती	किंवदन्ती	सन्मान	सम्मान
शिरमणी	शिरोमणी	उज्ज्वल	उज्ज्वल
उतपात	उत्पात	सदोपदेश	सदुपदेश
वयवृद्ध	वयोवृद्ध		

(3) शब्दों की द्विरुक्ति से सम्बन्धित अशुद्धियाँ :-

अशुद्ध	शुद्ध	अशुद्ध	शुद्ध
निश्चित ही	निश्चय ही	तब फिर	फिर तब
स्वयं मैं	मैं अथवा स्वयं	सम तुल्य	तुल्य अथवा सम
प्रायः सभी लोग	सभी लोग अथवा प्रायः		
बहुत अधिक कोई भी	अधिक या बहुत कोई		
केवल आप ही	आप ही अथवा केवल आप		
तब इसके बाद	इसके बाद अथवा तब		
नामक शीर्षक अथवा	शीर्षक अथवा नामक		
लेकिन फिर भी	फिर भी अथवा लेकिन		
सायंकाल के समय परस्पर में	सायंकाल परस्पर		
घातक विष	विषैला अथवा घातक		
अधिकांश भाग	अधिकतर भाग अथवा अधिकांश		
बड़ा कंजूस	बहुत कंजूस		
गुप्त अथवा रहस्य	रहस्य अथवा गुप्त		

(4) समास से सम्बन्धित अशुद्धियाँ :-

अशुद्ध	शुद्ध	अशुद्ध	शुद्ध
पक्षीराज	पक्षिराज	निर्लज्जा	निर्लज्ज

सोभाग्यशील	सौभाग्यशील	सतोगुण	सत्त्व गुण
पिता भक्ति	पितृ भक्ति	माताहीन	मातृहीन
अष्टवक्र	अष्टावक्र	विद्यार्थीगण	विद्यार्थिगण
महाराजा	महाराज	आत्मा पुरुष	आत्म पुरुष
निर्दोषी	निर्दोष	सशंकित	सशंक
राजागण	राजगण	यथावधि	यथाविधि
दुरात्मा गण	दुरात्मगण	योगीश्वर	योगेश्वर

(5) मात्रा अथवा स्वर से सम्बन्धित अशुद्धियाँ :-

अशुद्ध	शुद्ध	अशुद्ध	शुद्ध
प्रदर्षिनी	प्रदर्षनी	अन्त्यक्षरी	अन्त्याक्षरी
सर्जन	सृजन	जमाता	जामाता
भगीरथी	भागीरथी	श्राप	शाप
अगामी	आगामी	रचियता	रचयिता
पहिला	पहला	स्थायीत्व	स्थायित्व
अंजली	अंजलि	रामायन	रामायण
परिणती	परिणति	अहिल्या	अहल्या
ग्रहीत	गृहीत	मट्टी	मिट्टी
अद्वितिय	अद्वितीय	ललायित	लालायित
नरायन	नारायण	साधूवाद	साधुवाद
गृहीता	ग्रहीता	महात्म	माहात्म्य
आधीन	अधीन	द्वारिका	द्वारका
सम्राज्य	साम्राज्य	कवियित्री	कवयित्री

वाहनी	वाहिनी	तिलांजली	तिलांजलि
उचाई	ऊँचाई	कालीदास	कालिदास
वियोगी	वियोगिनी	मुमुषु	मुमूर्षु
ऊषा	उषा	जात	जाति
औद्योगीकरण	उद्योगीकरण	श्रोत	स्त्रोत
स्वालम्बन	स्वावलम्बन	मैथलीसरन	मैथिलीशरण

(6) व्यंजन से सम्बन्धित अशुद्धियाँ :-

अशुद्ध	शुद्ध	अशुद्ध	शुद्ध
हिन्दुस्थान	हिन्दुस्तान	जेष्ठ	ज्येष्ठ
प्रसंषा	प्रशंसा	ज्योत्सना	ज्योत्स्ना
अध्यन	अध्ययन	आर्द	आद्र
श्रद्धा	श्रद्धा	चिन्ह	चिह्न
तत्त्व	तत्त्व	अनिष्ठ	अनिष्ट
वांगमय	वाङ्मय	द्वन्द	द्वन्द्व
भैय्या	भैया	अनुशरण	अनुसरण
गरिष्ठ	गरिष्ठ	स्वास्थ	स्वास्थ्य
अभ्यत	अभ्यस्त	सावन	श्रावण
महत्त	महत्त्व, महत्व	पूज्यनीय	पूजनीय
अमावष्या	अमावस्या	यथेष्ट	यथेष्ट
उपलक्ष	उपलक्ष्य	सत्त्व	सत्त्व
मृत्युमान	म्रियमाण	सौन्दर्यता	सौन्दर्य, सुन्दरता

मानवीयकरण	मानवीकरण	आकांछा	आकांक्षा
उज्ज्वल	उज्ज्वल	संतुष्ट	संतुष्ट
कार्यकर्म	कार्यक्रम		

(7) इतर अशुद्धियाँ :-

अशुद्ध	शुद्ध	अशुद्ध	शुद्ध
राजनैतिक	राजनीतिक	गायकी	गायिका
एकत्रित	एकत्र	ऐक्यता	एकता
अज्ञानता	अज्ञान	मान्यनीय	माननीय
साहित्यक	साहित्यिक	सिंहिनी	सिंहनी
राष्ट्रिय	राष्ट्रीय	औदार्यता	उदारता, औदार्य
अन्तर्राष्ट्रीय	अन्तर-राष्ट्रीय	लौकिक	लौकिक
आधिक्यता	आधिक्य	स्वस्थ	स्वस्थ
सानन्द पूर्वक	सानन्द	दरिद्री	दरिद्र
भाग्यमान्	भाग्यवान	शहरीय	शहरी
धैर्यता	धैर्य	निर्लोभी	निर्लोभ
सदृष्य	सदृष	आवष्यकीय	आवश्यक
शान्तमय	शान्तिमय	दुसाधन	दुःशासन
निर्दोषी	निर्दोष	उत्कर्षता	उत्कर्ष
श्रद्धामान	श्रद्धावान	अभ्योदय	अभ्युदय
सिंघासन	सिंहासन	प्रदर्षिनी	प्रदर्शनी
बारबार	बार-बार		

(8) अनुस्वार एवं चन्द्र बिन्दु का सही ढंग से प्रयोग न करने के कारण भी शब्दों में प्रायः अशुद्धियाँ हो जाती हैं—

अशुद्ध	शुद्ध	अशुद्ध	शुद्ध
हसिया	हँसिया	संवारना	सँवारना
चवर	चँवर	अँधा	अंधा
सांप	साँप	कुअंर	कुँअर
छंटाई	छँटाई	जहां	जहाँ
लंगोट	लँगोट	गाँधी	गांधी
हंसमुख	हँसमुख	जाउंगा	जाउँगा
आंख	आँख	चांद	चाँद
दांत	दाँत	कांच	काँच
उंगली	उँगली		

(9) व्यंजनों के पारस्परिक सहयोग और उससे सम्बन्धित अशुद्धियाँ :-

अशुद्ध	शुद्ध	अशुद्ध	शुद्ध
छेम	क्षेम	अर्च्यना	अर्चना
क्षता	छाता	स्तीत्व	सतीत्व
छमा	क्षमा	क्षात्र	छात्र
षिच्छा	षिक्षा	स्मृद्ध	समृद्ध
अभिग्य	अभिज्ञ	योज्ञ	योग्य
ग्यान	ज्ञान	आग्याँ	आज्ञा
साम्यता	समता	मान्यनीय	माननीय
त्रिस्कार	तिरस्कार		

(10) द्वित्व व्यंजन से सम्बन्धित अशुद्धियाँ :-

अशुद्ध	शुद्ध	अशुद्ध	शुद्ध
निमित	निमित्त	उलंघन	उल्लंघन
स्वर्गीय	स्वर्गीय	उदंड	उद्दंड
सजन	सज्जन	योधा	योद्धा
तत्	तत्त्व, तत्त्व	उपलक्ष	उपलक्ष्य
बुद्धवार	बुधवार	रक्खा	रखा
उतम	उत्तम	चित	चित्त
उतीर्ण	उत्तीर्ण		

वर्तनी लेखन में होने वाली सामान्य अशुद्धियाँ :-

स्वर अथवा मात्रा सम्बन्धी अशुद्धियाँ :-

नागरी लिपि में दो प्रकार की मात्राएँ होती हैं, ह्रस्व (छोटी) और दीर्घ (बड़ी) नागरी लिपि एक आधुनिक वैज्ञानिक लिपि है, इसकी विशेषता ही यह है कि इसमें वर्तनी एवं मात्रा को याद करने की आवश्यकता प्रायः नहीं के बराबर रहती है। जैसा बोलें, वैसा ही लिखें। यदि हम किसी वर्ण या अक्षर अथवा शब्द का उच्चारण ठीक करते हैं, तो हम उसको ज्यों का त्यों लिखते समय वर्तनी की कोई भूल नहीं कर सकेंगे।

किसी पद के उच्चारण में यदि कम समय लगता है यानी हम उसका उच्चारण थोड़ा दबकर करते हैं, तो उस पर ह्रस्व यानी छोटी मात्रा लगेगी, जैसे 'कितना' में 'कि' का उच्चारण करते समय हम हल्के से करते हैं। स्पष्ट है कि 'कि' को क पर छोटी इ (ि) की मात्रा लगाकर लिखा जाएगा। यदि हम किसी पद का

उच्चारण थोड़ा खींचकर बल लगाकर करते हैं, तो उस पर दीर्घ यानी बड़ी मात्रा लगेगी। जैसा कि **कीमत** में **की** का उच्चारण हम थोड़ा खींचकर करते हैं, अतएव यहाँ **क** पर बड़ी **ई** (ी) की मात्रा लगाई जाएगी।

सामान्य नियम यह हुआ कि उच्चारण करते समय कम और अधिक समय लगने के अनुसार ह्रस्व और दीर्घ मात्राएँ लगाई जाती हैं।

स्पष्ट है कि हिन्दी लिखते समय मात्रा सम्बन्धी **अशुद्धियों** का मुख्य कारण गलत अथवा अशुद्ध उच्चारण होता है। इसी दोष के कारण राजेन्द्र का राजिन्दर, व्याकरण को ब्याकरण, सड़क का सरक, तिथि को तिथी, प्रदर्षनी को प्रदर्षिनी, स्टेशन को सटेशन आदि लिख दिया जाता है। इस प्रकार की होने वाली कतिपय भूलों की ओर हम आपका ध्यान आकर्षित करते हैं, यथा—

1. 'आ' की मात्रा :—

अ की मात्रा के लगाने का तो प्रश्न ही उत्पन्न नहीं होता है। 'आ' बड़ी मात्रा है, जहाँ यह मात्रा लगी हुई है अथवा लगाई जानी चाहिए, वहाँ यदि उच्चारण दबा हुआ किया जाएगा, तो तदनुसार उसको लिखते समय गलती हो जाएगी यथा— आजमाना, व्यावहारिक, सांसारिक तथा प्रासंगिक को क्रमशः अजमाना, व्यवहारिक, संसारिक एवं प्रसंगिक लिख दिया जाएगा। इसी प्रकार गलत उच्चारण के कारण जहाँ बड़ी मात्रा नहीं होनी चाहिए, वहाँ बड़ी मात्रा लगा दी जाती है। उदाहरण के लिए हस्तक्षेप, अधीन आजकल, लगान आदि को क्रमशः हस्ताक्षेप, आधीन आजकाल तथा लागान आदि के रूप में लिख दिया जाता है।

2. 'इ' और 'ई' की मात्राएँ :—

अशुद्ध उच्चारण के कारण छोटी (इ) और बड़ी (ई) की मात्राओं में उलट फेर कर दिया जाता है— यानी जहाँ 'ि' की मात्रा लगनी चाहिए वहाँ 'ी' की मात्रा

लगा दी जाती है और जहाँ 'ी' की मात्रा लगनी चाहिए वहाँ 'ि' की मात्रा लगा दी जाती है, यथा—छोटी मात्रा (इ) के स्थान पर बड़ी मात्रा (ई) लगा देने की भूलों के उदाहरण—

अशुद्ध	शुद्ध	अशुद्ध	शुद्ध
अभीयोग	अभियोग	अभीनेता	अभिनेता
क्योंकी	क्योंकि	निवासीयों	निवासियों
शनीवार	शनिवार	कालीदास	कालिदास
प्रगती	प्रगति	पत्रावली	पत्रावलि
हरी	हरि		

बड़ी मात्रा (ई) के स्थान पर छोटी मात्रा (इ) लगा देने की भूलों के उदाहरण—

अशुद्ध	शुद्ध	अशुद्ध	शुद्ध
द्वितिय	द्वितीय	तृतिय	तृतीय
अद्वितिय	अद्वितीय	सूचिपत्र	सूचीपत्र
नमि	नमी		

‘इ’ की मात्रा लगाते समय एक अन्य प्रकार की भी भूल की जाती है। कहीं तो ‘ई’ की मात्रा गायब कर दी जाती है और कहीं अनावश्यक रूप से लगा दी जाती है यानी जहाँ मात्रा नहीं लगाई जानी चाहिए वहाँ लगा दी जाती है। उदाहरण देखिए—

‘इ’ की मात्रा गायब कर देने से होने वाली भूलें—

अशुद्ध	शुद्ध	अशुद्ध	शुद्ध
कवियित्री	कवयित्री	छिपकिली	छिपकली
तिरिस्कार	तिरस्कार	वापिस	वापस
द्वारिका	द्वारका	पहिला	पहला

3. 'उ' और 'ऊ' की मात्राएँ :-

उ और ऊ सम्बन्धी मात्राओं को लगाते समय ह्रस्व के स्थान पर प्रायः दीर्घ मात्रा का प्रयोग कर दिया जाता है, यथा—

अशुद्ध	शुद्ध	अशुद्ध	शुद्ध
ऊँगली	उंगली	ऊत्थान	उत्थान
कूआँ	कुआँ	रूपया	रुपया

कहीं—कहीं 'ऊ' के स्थान पर 'उ' की मात्रा लगा दी जाती है जैसे तूफान को तुफान और ऊधम को उधम करके लिख दिया जाता है, अस्तु, यह भूल 'र' के साथ 'ऊ' की मात्रा लगाते समय प्रायः देखी जाती है, यथा—

अशुद्ध	शुद्ध	अशुद्ध	शुद्ध
गुरु	गुरू	रुठ	रूठ
जरुरत	जरूरत	रुप	रूप

4. 'ए' और 'ऐ' की मात्राएँ :-

'ए' की मात्रा लगाने की भूलें बहुत कम देखी जाती हैं। प्रायः होता यह है कि अशुद्ध उच्चारण के कारण ऐ की मात्रा लगाने में गलती कर दी जाती है, कहीं तो अनावश्यक रूप से लगा दी जाती है। जैसे एक वेष्पा, भाषाएँ आदि को ऐक, वैष्पा, भाषाएँ आदि लिख दिया जाता है और कहीं 'ऐ' की मात्रा के स्थान पर ए की मात्रा लगा दी जाती है, जैसे— दैविक आदि को देहिक, देविक आदि लिख दिया जाता है। कभी 'य' के स्थान पर ऐ की मात्रा लगा दी जाती है, जैसे दयनीय और जय आदि को दैनीय और जै के रूप में लिख दिया जाता है।

5. 'ओ' और 'औ' की मात्राएँ :-

दीर्घ ओ (औ) के स्थान पर प्रायः ह्रस्व ओ (औ) का प्रयोग कर दिया जाता है। उदाहरण देखिए—

अशुद्ध	शुद्ध	अशुद्ध	शुद्ध
त्योहार	त्यौहार	अलोकिक	अलौकिक
झोंपड़ी	झौपड़ी	ओद्योगिक	औद्योगिक
फोरन	फौरन		

कहीं—कहीं ओ (ह्रस्व) के स्थान पर औ (दीर्घ) का प्रयोग कर दिया जाता है। उदाहरण देखिए—

अशुद्ध	शुद्ध	अशुद्ध	शुद्ध
मिजौरम	मिजोरम	कौलाहल	कोलाहल
सौई	सोइ	कौसल	कोसल
रौपना	रोपना	मौहन	मोहन

6. 'ऋ' की मात्राएँ :-

'ऋ' की मात्रा केवल संस्कृत के तत्सम शब्दों में आती है। भूलवश इसका प्रयोग करत समय प्रायः 'रि' का प्रयोग कर दिया जाता है। उदाहरण देखिए—

अशुद्ध	शुद्ध	अशुद्ध	शुद्ध
रिषि	ऋषि	रिग्वैद	ऋग्वेद
रिचा	ऋचा	रित्	ऋत्
क्रिपा	कृपा	द्रष्य	दृष्य
पैत्रिक	पैतृक	प्रथ्वी	पृथ्वी
त्रितीय	तृतीय		

सामान्य नियम यह है कि तत्सम शब्दों में 'ऋ' का प्रयोग तथा तद्भव एवं विदेशी शब्दों में 'र' का प्रयोग किया जाता है।

तत्सम शब्द	तद्भव शब्द	विदेशी शब्द
ऋषि	रिस	रिप्ता
ऋण	रिक्षा	रिष्वत
ऋतु	रिज्ञाना	रियायत
ऋचा	रिमझिम	रिसाला
ऋद्धि	रिनी	रिवाज

कभी—कभी ऐसा भी होता है कि उच्चारण की गड़बड़ी के कारण 'र' के स्थान पर 'ऋ' का प्रयोग कर दिया जाता है, जैसे भ्रष्टाचार एवं द्रष्टव्य अथवा द्रष्टा के स्थान पर भृष्टाचार। दृष्टव्य अथवा दृष्टा लिख दिया जाता है।

7. अनुस्वार और चन्द्र बिन्दु :-

अनुस्वार और चन्द्र बिन्दु के प्रयोग सम्बन्धी बहुत भूलें होती हैं, हम तो यहाँ तक कह सकते हैं कि इनके प्रयोग में जैसी मनमानी चलती है, उतनी और कहीं नहीं। जहाँ नहीं लगाना है, वहाँ भी अनुस्वार चिन्ह (बिन्दी) लगाया जा रहा है। और जहाँ अनुस्वार है, वहाँ चन्द्र बिन्दु लगाया जा रहा है।

अशुद्ध	शुद्ध	अशुद्ध	शुद्ध
जाँति—पाँति	जाति—पाँति	हँस	हंस
कुँआरा	कुंआरा	लँगर	लंगर
दँत	दंत	गंवार	गँवार
गेँहूँ	गेहूँ	आंख	आँख
सँस्कृत	संस्कृत	हंसना	हँसना
दांत	दाँत	रंगना	रँगना

अनुस्वार के प्रयोग— सम्बन्धी सामान्य नियम यह है कि जब पूरे 'न' की ध्वनि हो, तब अनुस्वार का प्रयोग किया जाए और जब अधूरे 'न' (न) की ध्वनि हो अर्थात् 'न' का हल्का उच्चारण हो तब चन्द्र बिन्दु (ँ) का प्रयोग किया जाना चाहिए।

दूसरी बात ध्यान में रखने की यह है कि शब्द के अन्त में किसी मात्रा की अनुनासिक ध्वनि हो जैसे तथ्यों, विचारकों, सर्पों, बरिआई, एकहिं आदि, तो केवल अनुस्वार का प्रयोग किया जाता है। अंतिम ध्वनि अनुनासिक होने पर अनुस्वार का ही प्रयोग किया जाता है।

8. विसर्ग (ः)

विसर्ग का प्रयोग संस्कृत की देन है। हिन्दी में बहुत कम शब्दों में विसर्ग का प्रयोग किया जाता है। विसर्ग का प्रायः 'उ' अथवा 'र' में परिवर्तित करके संधि बना ली जाती है, फिर इसके प्रयोग सम्बन्धी कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं—

अशुद्ध	शुद्ध	अशुद्ध	शुद्ध
अंतरराष्ट्रीय	अन्तर्राष्ट्रीय	अधापतन	अधःपतन
दुख	दुःख	विषेषतयः	विषेषतःअथवा विषेषतया

9. अनुस्वार के स्थान पर संयुक्ताक्षर :—

अनुस्वार के स्थान पर किसी वर्ग के पंचम वर्ण का प्रयोग करके संयुक्ताक्षर बनाने में प्रायः भूल होती है और अशुद्ध शब्द का निर्माण हो जाता है। इस संदर्भ में लोग प्रायः यह भूल जाते हैं कि अनुस्वार की ध्वनि के लिए अनुस्वार का ही प्रयोग किया जाना है। हिन्दी में यह प्रयोग सर्वथा शुद्ध माना जाता है, परन्तु यदि

संयुक्ताक्षर का प्रयोग करना ही हो, तो इस सम्बन्ध में निम्नलिखित दो नियमों का ध्यान रखना चाहिए—

- (i) अनुस्वार के पहले जिस वर्ग का अक्षर हो, उसी वर्ग के पंचम (पञ्चम) अक्षर में अनुस्वार बदलना चाहिए। जैसे गंगा को गङ्गा कंचन को कञ्चन, घंटा को घण्टा, शांति को शान्ति तथा शंभु का शम्भु लिखा जा सकता है। गङ्गा, कञ्चन, घण्टा, शम्भु अशुद्ध हैं।

सामान्य नियम यह है कि पंचमाक्षर अपने वर्ग के वर्ण के पहले लगते हैं—

ङ् =	कवर्ग	अङ्क	अङ्ग
ञ् =	चवर्ग	चञ्चल	मञ्जन
ण् =	टवर्ग	कुण्डली	पण्डित
न् =	तवर्ग	पन्त	बन्धन
म् =	पवर्ग	सम्बन्ध	दम्पति

इस संदर्भ में यह ध्यान रखना चाहिए कि उक्त नियम तद्भव शब्दों तथा विदेशी शब्दों पर लागू नहीं होता है। इन्कार व सैन्सर को इङ्कार व सैञ्सर लिखना अशुद्ध है।

- (ii) यदि अनुस्वार के परे य, र, ल, व, श, ष, स, ह में से कोई अक्षर हो तो अनुस्वार नहीं बदलता, क्योंकि ये अक्षर किसी वर्ग के नहीं हैं, और इनके वर्ग के पंचम अक्षर होने का प्रश्न ही उत्पन्न नहीं होता है। अतः संवाद, संवत, संरक्षक, संलग्न वंश, संस्कृत, पंसारी, स्वयंवर लिखना चाहिए। सम्वाद, सम्वत, सन्रक्षक, सन्लग्न, वन्श, सन्स्कृत, पन्सारी, स्वयन्वर आदि अशुद्ध हैं।

विशेषः— संयुक्त शब्दों में 'र' लगाते समय प्रायः भूल हो जाती है। नियम यह है कि जब 'र' पहला व्यंजन हो तो उसे अगले अक्षर पर लगाते हैं, जैसे— धर्म, यदि अगले

व्यंजन में कोई मात्रा हो तो 'र' को मात्रा के साथ ऊपर लगाते हैं। जैसे धार्मिक, पारमार्थिक, ऊपर लगाए जाने वाले 'र' को 'रेफ' कहा जाता है।

हिंदी वर्णमाला :-

हिंदी लिपि देवनागरी अथवा नागरी लिपि कही जाती है, इसमें 52 वर्ण हैं।
16 स्वर, 33 व्यंजन तथा 3 संयुक्ताक्षर। ये तीन संयुक्ताक्षर इस प्रकार हैं—

(i) क्ष = क् + ष (ii) त्र = त् + र (iii) ज्ञ = ज् + ञ

(क) न्, ण :- इनका प्रयोग करते समय निम्नलिखित दो नियम ध्यान में रखने चाहिए—

- (i) ष, र, ऋ के परे यदि 'न' की ध्वनि हो, या दोनों के बीच में स्वर कवर्ग, पवर्ग, य, व, ह में से कोई एक अथवा अधिक वर्ण आते हों, तो वहाँ 'ण' का प्रयोग होता है, जैसे आकर्षण, चरण, ऋण, रुग्ण, कृपाण, रावण, उत्तरायण रोहिणी आदि।
- (ii) संस्कृत की जिन धातुओं में 'ण' होता है, उनमें बने हुए शब्दों में 'ण' का प्रयोग किया जाता है, जैसे निपुण, मणि, गुण आदि।

(ख) श, ष, स :- इनके शुद्ध प्रयोग के सम्बन्ध में ये चार नियम ध्यान में रखने चाहिए—

- (i) तत्सम (संस्कृत) शब्दों में च, छ के पहले श का प्रयोग होता है, जैसे— दुष्चरित्र, निष्छल आदि।
- (ii) यदि 'स' की ध्वनि के अ, आ को छोड़कर कोई स्वर हो, कवर्ग (क ख ग घ) का कोई अक्षर अथवा य, र, ल, व, ह में से कोई अक्षर हो तो श की ध्वनि के लिए 'ष' का प्रयोग होता है, जैसे— अभिषेक, निषिद्ध, विषय आदि।

(iii) यदि क, ख, ट, ठ, प, फ अक्षर पीछे आएँ, तो उनका मेल ष से होता है, स अथवा श से नहीं, जैसे— निष्काम, निष्फल, ओष्ठ्य आदि।

(ग) छ, क्ष, च्छ, क्ष, ब, व, ट, ठ, ग, घ, ङ, ढ, ण, न तथा द, ध के प्रयोगों के मध्य होने वाली भूलों को शुद्ध उच्चारण द्वारा दूर किया जा सकता है।

(घ) स् (अर्द्धस) से आरम्भ होने वाले शब्दों का उच्चारण 'इ' से आरम्भ होता है और उन्हें लिखते समय शुरू में इ लिख देने की भूल प्रायः हो जाती है, जैसे—

अशुद्ध	शुद्ध	अशुद्ध	शुद्ध
इस्त्री	स्त्री	इस्कूल	स्कूल
इस्टूल	स्टूल	इस्नान	स्नान
इस्टेशन	स्टेशन	इस्मषान	श्मशान

(ङ.) कुछ शब्दों के एक से अधिक रूप प्रचलित हैं। जैसे— खाएगा, खायेगा, खावेगा, गई, गयी, हुआ, हुवा आदि। इस सम्बन्ध में सामान्य नियम यह है कि जहाँ स्वर से काम चल जाए, वहाँ व्यंजन का प्रयोग नहीं करना चाहिए। उक्त शब्दों के शुद्ध रूप ये होंगे— खाएगा, गई, हुआ आदि।

(च) एक वर्णीय अक्षरों का संयोग :— इस सम्बन्ध में नियम यह है कि किसी भी वर्ग के द्वितीय और चतुर्थ अक्षर का संयोग उसी अक्षर से नहीं होगा, उसके पहले उसी वर्ग का क्रमः प्रथम एवं तृतीय अक्षर होना चाहिए; यथा— सिक्ख, वग्घी, चिट्ठी, सिद्धी, पत्थर, श्रद्धा, अक्खड़, बिच्छू न कि सिक्ष्ख, बग्घी, चिट्ठी, सिद्धी, पत्थर, श्रद्धा, अक्खड़ तथा बिच्छु आदि।

(छ) कुछ लोगों की यह आदत होती है कि वे 'र' को 'ल' या 'ड़' बोलते हैं। इस प्रकार की आदत प्रायः बचपन में पड़ जाती है, फलतः वर्तनी में भी ये गलतियाँ होती रहती हैं—

घबड़ाना (घबराना), टोकड़ी (टोकरी), पिंजड़ा (पिंजरा), प्रालब्ध (प्रारब्ध) आदि।

उसी प्रकार कुछ लोगों की यह भी आदत पड़ जाती है कि वे 'ड़' को 'र' बोलते हैं, जैसे— लरका (लड़का), गरबरी (गड़बड़ी), कचौरी (कचौड़ी), सरक (सड़क) आदि।

(ज) विदेशी शब्दों का प्रयोग :— विदेशी शब्दों को उनके उच्चारण के अनुसार नागरी लिपि में लिखना चाहिए।

अरबी—फारसी के अक्षरों के नीचे लगने वाली बिंदी के बारे में हम अन्यत्र लिख चुके हैं।

उनके बहुवचन एवं कारक रूपों का प्रयोग करते समय रूप परिवर्तन हिन्दी के व्याकरण के अनुसार कर लेना चाहिए, यथा—

विदेशी शब्द	विदेशी बहुवचन रूप	हिन्दी बहुवचन रूप (शुद्ध रूप)
-------------	-------------------	-------------------------------

मकान	मकानात	मकान अथवा मकानों
कागज	कागजात	कागज अथवा कागजों
अमीर	उमरा	अमीर अथवा अमीरों
वकील	वकला	वकील अथवा वकीलों
स्कूल	स्कूल्स	स्कूल अथवा स्कूलों
बल्ब	बल्बस	बल्बों
कैटेगरी	कैटेगरीज	कैटेगरियाँ कैटेगरियों
पेंसिल	पेंसिल्स	पेंसिलें, पेंसिलों आदि

कारक	फारसी रूप	हिंदी रूप (शुद्ध रूप)
------	-----------	-----------------------

करण	अज़खुद	खुद
सम्बन्ध	मालिकेमकान, दर्देदिल	मकान का मालिक, दिल का दर्द
अधिकरण	दरअसल	असल में
	फिलहाल	हाल में

शुद्ध वर्तनी के उदाहरण :-

शुद्ध वर्तनी चमससपदहद्ध का प्रयोग करने के लिए सामान्य व्यावहारिक बात यह है कि प्रयोग करने वाला शब्द का शुद्ध उच्चारण करे और फिर उसको उच्चारण के अनुसार लिखे उच्चारणगत गलती हो जाने के कारण वर्तनी में भी अषुद्धियाँ आ जाती हैं। उच्चारण की भूल से बचने का एक ही उपाय है कि हम शब्दों को सही रूप में जानें और समझें तथा उसके अनुसार उच्चारण और लेखन का प्रयत्न एवं अभ्यास करें। व्याकरण के नियम अपनी जगह हैं और उनका अपना महत्व है, परन्तु शुद्ध वर्तनी के संदर्भ में शुद्ध उच्चारण का अधिक महत्व रहता है। उदाहरण के लिए गलत उच्चारण के फलस्वरूप होने वाली वर्तनी की अषुद्धियों के कुछ उदाहरण हम यहाँ दे रहे हैं—

अशुद्ध	शुद्ध	अशुद्ध	शुद्ध
धोका	धोखा	सीड़ी	सीढ़ी
पौदा	पौधा	झूट	झूठ
आकांछा	आकांक्षा	भूक	भूख
वांक्षनीय	वांछनीय	उत्कृष्ट	उत्कृष्ट
ढूँड़ना	ढूँढना	ज्येष्ट	ज्येष्ठ
अभ्यस्थ	अभ्यस्त	टप्पड़ी	टिप्पणी
सीधा—साधा	सीधा—सादा	पुन्य	पुण्य
कल्यान	कल्याण	शब्द	शब्द
रामायन	रामायण	स्वयंबर	स्वयंवर
फाल्गुण	फाल्गुन	आत्मषात	आत्मसात

बनस्पति	वनस्पति	प्रसंषा	प्रषंसा
वहिष्कार	बहिष्कार	बज्र	वज्र
अमावष	अमावस	भाषा	भाषा
विकाष	विकास	उलंघन	उल्लंघन
शुसोभित	सुषोभित	उद्धार	उद्धार
पिचास	पिषाच	निष्काम	निष्काम
हितैसी	हितैषी	नवम्	नवम
सोचनीय	शोचनीय	स्वतन्त्रा	स्वतन्त्रता
दोस	दोष	व्यंग	व्यंग्य
ईर्ष्या	ईर्ष्या	उज्वल	उज्ज्वल
शीर्षक	शीर्षक	उद्देश	उद्देश्य
सामर्थ	सामर्थ्य	द्वन्द	द्वन्द्व
स्वास्थ	स्वास्थ्य	पार्वती	पर्वतीय
पूजनी	पूजनीय	अकस्मात्	अकस्मात्
राष्ट्री	राष्ट्रीय	शतषत्	शतषत
परम्	परम	स्मर्ण	स्मरण
प्राचीनतम्	प्राचीनतम	शाष्वत्	शाष्वत
नर्क	नरक	विपच्छ	विपक्ष
छमा	क्षमा	परसाद	प्रसाद
क्षात्र	छात्र	पुत्तर	पुत्र
अनभिग्य	अनभिज्ञ	द्वारा	द्वारा
अग्येय	अज्ञेय	नछत्र	नक्षत्र
विधिवत्	विधिवत्	दक्ख	दक्ष

ओष्ठ	ओष्ठ्य	बहिरंग	वहिरंग
निस्क्रिय	निष्क्रिय	वांक्षनीय	वांछनीय
प्रज्ज्वलित	प्रज्वलित	योज्ञ	योग्य
ज्योतिसना	ज्योत्सना		

सन्धि-प्रक्रिया (Morphophonemics) :-

वक्ता अपने तात्पर्य को स्पष्ट करने के लिए दो अक्षर, पद, शब्द, वाक्य के बीच आवश्यकतानुसार विवृति या विराम (यति) के नियम का पालन करता है। फिर भी दो पदों के एक ही अनुक्रम में आने पर प्रथम के अंतिम तथा द्वितीय के आदिम ध्वनिग्राम के संयोग से एक ध्वन्यात्मक परिवर्तन हो जाता है और एक ही अनुक्रम में आए हुए दोनों पदों को एक नये ध्वन्यात्मक या ध्वनिग्रामिक रूप में उच्चरित किया जाता है। भारतीय वैयाकरण इसी पदात्मक ध्वनि संयोग को संधि-प्रक्रिया और भाषाविज्ञानी इसे ही 'मॉर्फोफोनोमिक्स' की संज्ञा देते हैं।

इस प्रकार किसी विशिष्ट भाषा में एक विशिष्ट ध्वनिग्राम के भिन्न-भिन्न ध्वन्यात्मक वातावरण में आने पर अनेक सहध्वनियों (Allphones) का विकास इसी पदात्मक ध्वनि-संयोग या सन्धि-प्रक्रिया का परिणाम है। सरल भाषा में इस प्रकार लिखा जा सकता है— 'वर्णों के परस्पर मेल से जो परिवर्तन होता है, उसे सन्धि कहते हैं।' अतः ध्वनियों का विकास भिन्न-भिन्न देश, काल, परिस्थिति में उस भाषा के विकास से सम्बद्ध है। संधि वक्ताओं की उच्चारण सुविधा या प्रयत्न के परिणामस्वरूप घटित होती है। हिंदी भाषा में अधिकतर जिन संधि-युक्त शब्दों का प्रयोग किया जाता है, वे संस्कृत शब्द ही होते हैं, क्योंकि हिंदी भाषा की प्रवृत्ति संयोगात्मक नहीं है। संस्कृत भाषा के ही संधि-नियम हिंदी भाषा में अपनाए गये हैं। इसप्रकार संधि के तीन भेद हैं—

1. स्वर सन्धि
2. व्यंजन सन्धि
3. विसर्ग सन्धि

1. स्वर सन्धि :-

दो या दो से अधिक स्वरों के मेल से जहाँ परिवर्तन आता है, वहाँ स्वर-संधि होता है। यथा- सूर्योदय = सूर्य+उदय। यहाँ 'सूर्य' शब्द के अंत में आए स्वर 'अ' में 'उदय' शब्द का प्रारम्भिक स्वर 'उ' मिल जाने से 'ओ' हो गया है। दो स्वरों के मेल के कारण यहां स्वर-सन्धि है।

स्वर संधि के मुख्यतः पांच भेद होते हैं :-

1. दीर्घ संधि — दीर्घ स्वर संधि
2. गुण संधि — गुण स्वर संधि
3. यण् संधि — यण् स्वर संधि
4. वृद्धि संधि — वृद्धि स्वर संधि
5. अयादि संधि — अयादि स्वर संधि

1. दीर्घ स्वर सन्धि :-

दीर्घ स्वर सन्धि में अ, इ, उ, ऋ के बाद ह्रस्व या दीर्घ अ, इ, उ, ऋ आए तो क्रमशः उनका दीर्घ आ, ई, ऊ, ॠ हो जाता है। निम्नलिखित रूपों में दीर्घ स्वर संधि को इस प्रकार समझ सकते हैं—

- (क) अ+अ = आ — ज्ञान+अभाव = ज्ञान्+अ+अभाव = ज्ञानाभाव
 अधिक+अधिक = अधिक्+अ+अधिक = अधिकाधिक
 अन्न+अभाव = अन्+अ+अभाव (अ+अ = आ)
 = अन्+आ+भाव = अन्नाभाव
 जन्म+अंतर = जन्म्+अ+अंतर (अ+अ = आ)

= जन्म्+आ+न्तर = जन्मांतर

अ+आ = आ - धर्म+आत्मा = धरम्+अ+आत्मा (अ+आ = आ)

= धरम्+आ+त्मा = धर्मात्मा

घन+आनन्द = घन्+अ+आनन्द (अ+आ = आ)

= घन्+आ+नन्द = घनानन्द

आ+आ = आ - महा+आत्मा = मह्+आ+आत्मा = महात्मा (आ+आ = आ)

= मह्+आ+त्मा = महात्मा

विद्या+आलय, वार्ता+आलाप

आ+अ = आ - तथा+अपि = तथ्+आ+अपि (आ+अ = आ)

तथ्+आ+पि = तथापि

करुणा+अमृत, यथा+अर्थ

(ख) इ+इ = ई - रवि+इन्द्र = रव्+इ+इन्द्र = रव्+ई+न्द्र = रवीन्द्र
अभि+इष्ट

इ+ई = ई - गिरि+ईष = गिर्+इ+ईष = गिर्+ई+ष = गिरीष
अधि+ईष्वर = अधीष्वर

ई+इ = ई - मही+इन्द्र = मह्+ई+इन्द्र = मह्+ई+न्द्र = महीन्द्र
शची+इन्द्र = शचीन्द्र

ई+ई = ई - जानकी+ईष = जानक्+ई+ई+ईष = जानक्+ई+ष =
जानकीष

रजनी+ईष, सती+ईष

(ग) उ+उ = ऊ - गुरु+उपदेश = गुर्+उ+उपदेश = गुर्+ऊ+पदेश =
गुरुपदेश

सु+उक्ति, भानु+उदय

उ+ऊ = ऊ - सिन्धु+ऊर्मि = सन्ध+उ+ऊर्मि = सिन्ध्+ऊ+र्मि = सिन्धूर्मि
मधु+ऊष्मा, लघु+ऊर्मि, सिन्धु+ऊर्जा

ऊ+उ = ऊ - वधू+उत्सव = वध्+ऊ+उत्सव = वध्+ऊ+त्सव = वधूत्सव
स्वयंभू+उदय, भू+उत्सर्ग

ऊ+ऊ = ऊ - भू+ऊर्जा = भ्+ऊ+ऊर्जा = भ्+ऊ+र्जा = भूर्जा

(घ) ऋ+ऋ = ऋ - पितृ+ऋण = पित्र्+ऋ+ऋण = पित्र्+ऋ+ण = पितृण
मातृ+ऋण

‘ऋ’ का दीर्घ रूप ‘ऋ’ केवल संस्कृत के शब्दों में ही मिलता है। हिंदी में ऐसे शब्द प्रयुक्त नहीं हैं।

2. गुण स्वर संधि :-

जब ह्रस्व ‘अ’ या दीर्घ ‘आ’ के आगे या बाद में इ या ई, उ या ऊ और ऋ स्वर आते हैं, तब दोनों के मिलने से उनके स्थान पर ए, ओ और अर् हो जाता है।
यथा— महा+उत्सव = महोत्सव। कुछ उदाहरण इस प्रकार और भी हैं—

(क) अ+इ = ए—शुभ+इच्छा = शुभ्+अ+इच्छा = शुभ्+ए+च्छा = शुभेच्छा
देव+इन्द्र, जित+इन्द्रिय, गज+इन्द्र, सुर+इन्द्र

अ+ई = ए—कमल+ईष = कमल्+अ+ईष = कमल्+ए+ष = कमलेष
नर+ईष, परम+ईष्वर, उप+ईक्षा, देव+ईष, लोक+ईष

आ+इ = ए—महा+इन्द्र = मह्+आ+इन्द्र = मह्+ए+न्द्र = महेन्द्र
यथा+इष्ट, रमा+इन्द्र

आ+ई = ए—रमा+ईष = रम्+आ+ईष = रम्+ए+ष = रमेष
महा+ईष, उमा+ईष, महा+ईष्वर

(ख) अ+उ = ओ- वीर+उचित = वीर्+अ+उचित = वीर्+ओ+चित = वीरोचित

चन्द्र+उदय, हित+उपदेश, पर+उपकार, सर्व+उदय, आत्म+उत्सर्ग

अ+ऊ = ओ- नव+ऊढ़ा = नव्+अ+ऊढ़ा = नव्+ओ+ढ़ा = नवोढ़ा

जल+ऊर्मि, सूर्य+ऊर्जा, समुद्र+ऊर्मि, सूर्य+ऊष्मा

आ+उ = ओ- महा+उत्सव = मह्+आ+उत्सव = मह्+ओ+त्सव = महोत्सव

यथा+उचित, तथा+उक्त, महा+उदय, महा+उपदेश, गंगा+उदक

आ+ऊ = ओ- महा+ऊर्मि = मह्+आ+ऊर्मि = मह्+ओ+र्मि = महोर्मि

गंगा+ऊर्मि, यमुना+उर्मि, दिवा+उष्मा

(ग) अ+ऋ = अर्- सप्त+ऋषि = सप्त्+ऋर्षि+ऋषि = सप्त्+अर्+षि = सप्तर्षि
देव+ऋषि, राज+ऋषि, बह्म+ऋषि

आ+ऋ = अर्- महा+ऋषि = मह्+आ+ऋषि = मह्+अर्+षि = महर्षि

3. यण् स्वर संधि :-

जब ह्रस्व इ, उ अथवा दीर्घ ई, ऊ अथवा ऋ के आगे या बाद में कोई भिन्न (असवर्ण) स्वर हो तो उनके स्थान पर क्रमशः य्, व् और अर् हो जाता है। इसी परिवर्तन को यण् सन्धि कहते हैं। यथा- सु+आगत = स्वागत, यदि+अपि = यद्यपि
परिभाषा को स्पष्ट करने के लिए कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं-

इ+अ = य्- गति+अवरोध = गत्+इ+अवरोध = गत्यवरोध = गत्यवरोध

यदि+अपि, प्रति+अंग, अभि+अंतर

इ+आ = या- अति+आवश्यक = अत्+इ+आवश्यक = अत्+या+वश्यक
= अत्यावश्यक

इति+आदि, अति+आचार, वि+आकुल

इ+उ = यु- प्रति+उपकार = परत्+इ+उपकार = परत्+यु+पकार =
प्रत्युपकार

उपरि+उक्त, अति+उक्ति, अभि+उदय

ई+आ = या- नदी+आगम = नद्+ई+आगम = नद्+या+गम =
नद्यागम

देवी+आराधना

इ+ऊ = यू- नि+ऊन = न्+इ+ऊन = न्+यून = न्यून
वि+ऊह, अति+ऊष्म

इ+ए = ये- प्रति+एक = प्रति+इ+एक = प्रत्+येक = प्रत्येक
अधि+एषणा

ई+ऐ = यै- देवी+ऐश्वर्य = देव्+ई+ऐश्वर्य = देव्+ये+ष्वर्य = देव्यैश्वर्य

उ+अ = व्- सु+अच्छ = स्+उ+अच्छ = स्+व्+च्छ = स्वच्छ

उ+आ = वा- सु+आगत = स्+उ+आगत = स्+वा+गत = स्वागत
अनु+आसन, सु+आदि

उ+इ = वि- अनु+इति = अन्+इ+इति = अन्विति = अन्विति

उ+ए = वे- अनु+एषण = अन्+उ+एषण = अन्वे+षण = अन्वेषण
प्रभु+एषणा

ऋ+उ = अर्- पितृ+अनुमति = पित्+ऋ+अनुमति = पित्+अर्+नुमति =
पित्रनुमति

घातृ+अंश

ऋ+आ = अरा- पितृ+आज्ञा = पित्+ऋ+आज्ञा = पित्+अरा+ज्ञा =
पित्राज्ञा

पित+आदेश, मातृ+आदेश

4. वृद्धि स्वर संधि :-

जब ह्रस्व 'अ' या 'आ' के आगे या बाद में 'ए' या 'ऐ' हो तो दोनों के मिलने से 'ऐ' हो जाता है और जब ह्रस्व 'अ' या 'आ' के आगे या बाद में 'ओ' या 'औ' हो तो, तब दोनों के मिलने से 'औ' हो जाता है। परिभाषा को स्पष्टीकरण करने के लिए इसका विवेचन इस प्रकार किया जाता है।

अ+ए = ऐ – एक+एक = एक्+अ+एक = एक्+ऐ+क = एकैक

उसी प्रकार— जीव+एषणा

आ+ए = ऐ – सदा+एव = सद्+आ+एव = सद्+ऐ+व = सदैव

उसी प्रकार— तथा+एव

अ+ऐ = ऐ – मत+एक्य = मत्+अ+ऐक्य = मत्+ऐ+क्य = मतैक्य

उसी प्रकार— जन+ऐश्वर्य, परम+ऐश्वर्य

आ+ऐ = ऐ – महा+ऐश्वर्य = मह्+आ+ऐश्वर्य = मह्+ऐ+श्वर्य = महैश्वर्य

उसी प्रकार— दिव्या+ऐश्वर्य

'औ' की वृद्धि :-

अ+ओ = औ – जल+ओध = जल्+अ+ओध = जल्+औ+ध = जलौध

अ+औ = औ – परम+औषध = परम्+अ+औषध = परम्+औ+षध =

परमौषध

परम+औदार्य, परम+औत्सुक्य

आ+ औ = औ – महा+ औज = मह्+ आ+औज = मह्+औ+ज = महौज

आ+औ = औ – महा+औषध = मह्+आ+औषध = मह्+औ+षध = महौषध

महा+औदार्य, महा+औत्सुक्य

5. अयादि स्वर संधि :-

जब ए, ऐ, ओ, औ के आगे या बाद में कोई इनसे भिन्न (असवर्ण) स्वर हो तो उनके स्थान पर क्रमशः अय्, आय्, अव्, आव् हो जाता है। इस परिवर्तन को अयादि स्वर कहते हैं। यथा— नै+अन = नयन, पो+अन = पवन इत्यादि।

परिभाषित संधि विप्लेषण इस प्रकार है—

ए+अ = अय्— नै+अन = न्+ए+अन = न्+अय्+अन = नयन
रो+अन, चे+अन इत्यादि।

ऐ+अ = आय्— गै+अन = ग्+ऐ+अन = ग्+आय्+अन = गायन
नै+अक, शै+अक, गै+अक इत्यादि।

ओ+अ = अव्— पो+अन = प्+ओ+अन = प्+अव्+अन = पवन

ओ+आ = आव्— पो+इत = प्+ओ+इत = प्+अवि+त्र = पवित्र

औ+अ = आव्— पौ+अक = प्+औ+अक = प्+आव्+क = पावक

औ+इ = अवि— नौ+इक = न्+औ+इक = न्+आवि+क = नाविक

औ+उ = आवु— भौ+उक = भ्+औ+उक = भ्+आवुक = भावुक

उपर्युक्त सभी शब्द हिंदी की दृष्टि से रूढ़ हैं, संधि युक्त (यौगिक) नहीं हैं।

व्यंजन संधि :—

जब दो जुड़ने वाली ध्वनियों में से एक में या दोनों में व्यंजन हो तो वहाँ व्यंजन संधि होती है। यथा— तत्+मय = तन्मय, जगत्+ईश = जगदीश इत्यादि।

(1) घोषीकरण :— क्, च्, ट्, त्, प् अघोष व्यंजनों के बाद सघोष ध्वनि अर्थात् ग्, घ्, ज्, झ्, ङ्, ढ्, द्, ध्, ब्, भ् या कोई स्वर ध्वनि आए तो अघोष ध्वनि भी अपने वर्ग की घोष ध्वनि बन जाती है। जैसे— वाक्+ईश = वाग्+इश = वागीश

षट्+आनन = षड्+आनन = षडानन

भगवत्+भक्ति = भगवद्+भक्ति = भगवद्भक्ति

सत्+गति = सद्+गति = सद्गति

(2) **अनुनासिकीकरण :-** किसी अघोष ध्वनि के बाद कोई अनुनासिक ध्वनि न्, म् आदि आती है तो अघोष ध्वनि के स्थान पर उसी वर्ग की अनुनासिक ध्वनि हो जाती है।

जैसे— वाक्+मय = वाङ्मय (क का ङ्), जगत+नाथ = जगन्नाथ (त् का न्)

(3) **तालव्यीकरण :-** त् के बाद च्, छ्, ज्, झ् आने पर क्रमशः त् का च् या ज् हो जाता है।

जैसे— उत्+छिन्न = उचिछन्न, सत्+जन = सज्जन।

त् के बाद ल् ध्वनि आने पर त् का ल् हो जाता है। जैसे— उत्+लेख = उल्लेख।

छ् से पहले किसी स्वर के आने पर छ् का च्छ् हो जाता है। जैसे— अनु+छेद = अनुच्छेद।

विसर्ग संधि :-

विसर्ग संधि के नियम निम्न हैं—

(1) जब पहले पद के अंत में विसर्ग हो और विसर्ग से पूर्व 'अ' हो तथा उसके आगे के पद के आरम्भ में किसी वर्ग का तीसरा, चौथा या पाँचवा वर्ण हो या 'य', 'र', 'ल', 'व', 'ह' हो अर्थात् सघोष (वर्ग का तीसरा, चौथा या पाँचवा) व्यंजन हो तो पूर्वपद के विसर्ग का 'ओ' हो जाता है। यथा—

अधः+गति = अधोगति

मनः+रथ = मनोरथ

मनः+ नीत = मनोनीत

षिरः+रेखा = शिरोरेखा

यषः+दा = यषोदा

तपः+लाभ = तपोलाभ

तपः+भूमि = तपोभूमि

मनः+वांछित = मनोवांछित

मनः+योग = मनोयोग

मनः+हर = मनोहर

(2) जब पहले पद के अंत में विसर्ग हो और विसर्ग से पूर्व 'अ' या 'आ' को छोड़कर अन्य कोई स्वर आए तथा उसके आगे के पद के आरम्भ में कोई सघोष वर्ण या

स्वर हो तो विसर्ग 'र' में बदल जाता है। यथा— निः+आषा = निर्+आषा = निराषा

निः+ईह = निर्+ईह = निरीह

निः+अर्थक = निर्+अर्थक = निरर्थक दुः+जन = दुर्+जन = दुर्जन

निः+ईश्वर = निर्+ईश्वर = निरीश्वर आशीः+वाद = आशीर्+वाद = आशीर्वाद

निः+उपाय = निर्+उपाय = निरुपाय निः+विकार = निर्+विकार = निर्विकार

(3) जब पहले पद के अंत में विसर्ग से पूर्व 'इ' या 'उ' हो और उसके आगे क, ख, र, प या फ हो तो विसर्ग 'ष' में बदल जाता है। यथा—

आविः+कार = आवि+ष्+कार = आविष्कार निः+फल = निष्+फल = निष्फल

निः+कपट = निष्+कपट = निष्कपट परिः+कार = परिष्+कार = परिष्कार

(4) यदि पहले पद के अंत में विसर्ग के पूर्व 'अ' या 'आ' हो और उसके आगे 'क' हो तो विसर्ग 'स्' में परिवर्तित हो जाता है। यथा—

तिरः+कामना = तिरस्+कामना = तिरस्कार

नमः+कार = नमस्+कार = नमस्कार

भाः+कर = भास्+कर = भास्कर

पुरः+कार = पुरस्+कार = पुरस्कार

(5) जब पहले पद के अंत में विसर्ग हो और उसके बाद 'च' या 'छ' हो तो विसर्ग के स्थान पर 'ष' और विसर्ग के बाद 'त' या 'थ' हो तो विसर्ग के स्थान पर 'स' हो जाता है। यथा—

निः+चय = निस्+चय = निष्चय निः+छल = निष्+छल = निष्छल

निः+तल = निस्+तल = निस्तल निः+तेज = निस्+तेज = निस्तेज

निः+तार = निस्+तार = निस्तार

(6) जब पहले पद के अंत में विसर्ग हो और उसके बाद 'श' 'ष' या 'स' हो तो विसर्ग विकल्प से या तो बना रहता है या उसके स्थान पर श्, ष्, स् हो जाता है।

यथा—

दुः+शासन = दुष्+शासन = दुष्शासन, दुः+शासन = दुःशासन।

अंतः+सलीला = अंतःसलिला, अंतस्+सलिला = अंतस्सलिला।

//////////

इकाई – 1 (ख)

शब्द विचार:—

शब्द क्या है? एक ध्वनि से अथवा अनेक ध्वनियों के मेल से अक्षर बनते हैं। एक अथवा अनेक अक्षरों के ऐसे समूह को शब्द कहते हैं, जिससे किसी अर्थ की अभिव्यक्ति होती है। आ, आज, जी, हे अथवा लो – अक्षर भी हैं और सार्थक शब्द भी; क्योंकि इनमें अर्थ की अभिव्यक्ति हो रही है। इसके विपरीत जाझे, फौ, भाछ आदि तो अक्षर हैं, पर शब्द नहीं हैं क्योंकि उनसे कोई अर्थ प्रकट नहीं होता। अर्थ ही शब्द का प्रधान लक्षण है। व्याकरण में केवल सार्थक शब्दों का ही विचार किया जाता है, परन्तु कभी-कभी निरर्थक शब्द जब कुछ अर्थ व्यक्त करते हैं तब वे व्याकरण की दृष्टि से विचारणीय हैं, जैसे— खटपट, झमाझम, लस्टमपस्टम।

शब्दों के भेद:—

जिस भाषा का शब्द-भण्डार जितना ही विषाल होता है वह भाषा उतनी ही समृद्ध मानी जाती है। हिंदी एक सजीव भाषा है जो अपने प्रवाह-क्रम में अनेक स्रोतों से शब्दों को ग्रहण करती हुई और उन्हें आत्मसात् करती आई है। हिंदी के शब्द-भण्डार पर हम कई दृष्टियों से विचार कर सकते हैं इतिहास या स्रोत की दृष्टि से, अर्थ की दृष्टि से, शब्द-शक्ति की दृष्टि से, प्रयोग-क्षेत्र की दृष्टि से, व्याकरण या रूपांतरण की दृष्टि से इत्यादि।

इतिहास या स्रोत की दृष्टि से शब्दों के भेद:—

इतिहास या स्रोत के आधार पर हिंदी शब्द-भण्डार को चार भागों में विभक्त किया जाता है—

1. तत्सम शब्द
2. तद्भव शब्द

3. विदेशी शब्द

4. देशज शब्द

जनसामान्य में प्रायः जिस भाषा का प्रयोग होता है उसमें तद्भव शब्दों की अधिकता होती है। शिक्षित और शिष्ट वर्ग की भाषा में तत्सम शब्द अधिक प्रयोग होते हैं। साहित्य-रचना में प्रायः तत्सम शब्दों के प्रयोग की प्रवृत्ति अधिक होती है। कविता, आलोचना आदि साहित्यिक विधाओं में विशेषतः तत्सम शब्द का ही अधिक प्रयोग होता है। कथा, साहित्य और बोल-चाल में तद्भव शब्दों के प्रयोग की प्रवृत्ति अधिक दिखाई देती है।

1. तत्सम शब्दः—

जो शब्द अपरिवर्तित रूप में संस्कृत से हिंदी में आ गए हैं अथवा जिन्हें संस्कृत रूप में ही गढ़ा गया है, उन्हें ही तत्सम शब्द कहते हैं। 'तत्सम' का अर्थ है, उनके समान अथात् जैसे संस्कृत में हैं; जैसे— सूर्य, आकाश, भाग्य, उत्साह, वृक्षादि। इधर रसायन, भौतिकी, भूगोल, शासन आदि विषयों के लिए अनेकानेक शब्द संस्कृत की प्रकृति के अनुसार गढ़े गए हैं— छायावाद, साम्यवाद, उपन्यास, राष्ट्रपति अधिवक्ता। ये सभी तत्सम शब्द हैं।

2. तद्भव शब्दः—

संस्कृत के जो शब्द विकसित या परिवर्तित होकर हिंदी में आए हैं, वे तद्भव कहलाते हैं। 'तद्भव' का अर्थ है उससे अर्थात् संस्कृत से उत्पन्न जैसे— अभागा, आग, सूरज, गाँठ, पोता आदि। संस्कृत मूल से हिंदी में आए कुछ शब्दों को अर्द्ध-तत्सम कहा जाता है, क्योंकि उनकी स्थिति तत्सम और तद्भव के बीच की है। उनमें विकास या परिवर्तन अपेक्षाकृत कम हुआ है। जैसे— कार्य तत्सम है,

कारज अर्द्ध तत्सम और काज तद्भव। कार्य तत्सम है, करम अर्द्ध तत्सम और काम तद्भव। इसी प्रकार अमावस, धरम, मूरत, करतब, पूरब, बरतन आदि अर्द्ध-तत्सम हैं।

नीचे तत्सम शब्दों से विकसित तद्भव शब्दों की एक छोटी सी सूची इस प्रकार है—

तत्सम शब्द	तद्भव शब्द	तत्सम शब्द	तद्भव शब्द
अग्नि	आग	कूप	कुँआ
अमृत	अमिय,अमरित	परीक्षा	परख
अर्ध	आधा	मौक्तिक	मोती
अमूल्य	अमोल	दुर्बल	दुबला
अक्षि	आँख	पियासा	प्यासा
आम्र	आम	मस्तक	माथा
आषिष	आसीस	सत्य	सच
इक्षु	ईख	हस्ती	हाथी
उत्साह	उछाह	कर्ण	कान
उपालम्भ	उलाहना	ओष्ठ	ओठ
उलूक	उल्लू	कर्तव्य	करतब
उच्च	ऊँचा	काष्ठ	काठ
आश्रय	आसरा	कुक्षि	कोख
अद्य	आज	कुपुत्र	कपूत
कोकिल	कोयल	चन्द्र	चाँद
क्षार	खार	जिह्वा	जीभ
गर्त	गड़ढा	दंत	दाँत

ग्राम	गाँव	स्तम्भ	खम्भा
स्वर्ण	सोना	हस्त	हाथ

3. विदेशी शब्द:—

भारत से बाहर की भाषाओं से जो शब्द हिंदी में आए हैं, उन्हें विदेशी या आगत शब्द कहा जाता है। हिंदी प्रदेश पर पहले मुगलों का और फिर अंग्रेजों का राज्य था, उनके प्रभाव से सैकड़ों अरबी, फारसी, तुर्की और अंग्रेजी के शब्द हिंदी भाषा में घुल-मिल गए हैं। हिंदी जीवित भाषा है और इसकी पाचन शक्ति अद्भुत है। प्रत्येक भाषा से आगत कुछ शब्दों की सूची इस प्रकार है—

अरबी— अखवार, अदालत, अल्लाह, अस्तबल, आईना, आज़ाद, आषिक, इत्र, इन्तजार, इंसाफ़, इम्तहान, इषारा, इस्तीफा, औरत, करामात, कसम, कसाई, कागज, कानून, किताब, किस्सा, कुर्सी, तारीख, दवा, दवात, तबियत, नुकसान, फसल, फायदा, मतलब, मरीज, मस्जिद, रिष्वत, शर्त, सबूत, लायक, वकील, सलाह, सलाम, सुबह, हक, हल, हज, हाल, हिरासत, हिसाब, हुजूर इत्यादि।

फारसी— अंदाजा, आदमी, आमदनी, आसमान, उम्मीद, कमर, कारीगर, कारोबार, खराब, खरीद, खुदा, खुषामद, खून, गुब्बारा, गुलाब, चेहरा, ज़मीन, जहर, दूर, दूरबीन, बीमार, मेहमान, मसाला, मेवा, मेहमान, सफ़ेद, शेर, स्याही, हिम्मत, सरकार, राहगीर, सिफारिश, हिम्मत इत्यादि।

अंग्रेजी— अगस्त आदि महीनों के नाम, अपील, आर्डर, इंजन, इंजीनियर, एक्सप्रेस, एडवोकेट, ऐटम, ओवरसियर, कालर, ग्राम, ग्रामोफोन, चेक, चेन, जज, जरसी, जाकेट, फाइल, प्लेटफार्म, डिग्री, पास, पुलिस, पेपर, प्रेस, राइफल, मैनेजर, लाटरी, लिटर, साइकल, सूट, सूटकेस, स्टील, स्क्रीम, स्कूल, स्टील, हाईकोर्ट, हाल, हीटर, हेडमास्टर, हैट, होल्डर इत्यादि।

पुर्तगाली— आया, आलपीन, अलमारी, कप्तान, कमरा, गमला, गोदाम, चाबी, तौलिया, नीलाम, परात, पादरी, फीता, संतरा, सौगात, साबुन इत्यादि ।

तुर्की— उर्दू, कुरता, कुली, कैंची, चाकू, तोप, तमंचा, बंदूक, बारूद, बीबी, बेगम, सौगात इत्यादि ।

अन्य भाषाओं से—

रूसी से— भिग, वोदका, स्पुतनिक ।

फ्रांसीसी से— काजू, कारतूस ।

डच से— तुरूप, बम ।

जापानी से— जुजुत्सु, रिक्शा ।

चीनी से— चाय, लीची इत्यादि ।

4. देशज शब्दः—

ये शब्द तीन प्रकार के पाए जाते हैं—

(अ) जो ध्वन्यात्मक हैं अर्थात् ध्वनियों के अनुकरण पर बना लिए गए हैं, जैसे— बड़बड़ाना, खटपट, धड़कन, गड़बड़, हिनहिनाना, गड़गड़ाहट, चहचहाना, चमचमाना, बिलबिलाना, छटपटाना, झटपट, ठनकना, ठसक, ठस, फुफकार ।

(ब) आर्येतर भारतीय भाषाओं से प्राप्त— भिंडी, तोरई, इडली, दोसा, सांवर इत्यादि ।

(स) ऐसे शब्द जिसकी व्युत्पत्ति अज्ञात है अर्थात् जो न तो तत्सम हैं, न तद्भव, न विदेशी । जैसे— लोटा, गोड़, तेंदुआ, डिबिया, पगड़ी, खिचड़ी, चसका, फुनगी, खसरा, ठेठ आदि ।

5. संकर शब्दः—

संकर शब्द वे होते हैं जो भिन्न-भिन्न भाषाओं के तत्त्वों के योग से बनते हैं जैसे—

हिंदी और संस्कृत— खेती संबंधी, पूंजीपति, लखपति, खोजपूर्ण, माँगपत्र, वर्षगाँठ, कपड़ा, उद्योग।

हिंदी और विदेशी— अकड़बाज़, बैठकबाज़ी, देनदार, थानेदार, बेसमझ, बेजोड़, घूसखोर, किताबघर, घड़ीसाज।

संस्कृत और विदेशी— कृषिमजदूर, बीमापत्र, रेलयात्री, आरामदायक, रेडियोतरंग, योजना कमीषन

अरबी, फारसी या अंग्रेजी— डिग्रीदार, अफ़सरषाही, पार्टीबाजी, बीमापालिसी।

अर्थ के आधार पर

अर्थ की दृष्टि से शब्दों के चार भेद हैं—

(क) पर्यायवाची शब्द

(ख) एकार्थी शब्द

(ग) अनेकार्थी शब्द

(घ) विलोमार्थी शब्द

पर्यायवाची शब्दः—

जिन शब्दों के अर्थों में समानता हो, उन्हें पर्यायवाची शब्द कहते हैं। पर स्मरणीय बात यह है कि अर्थ में समानता होते हुए भी पर्यायवाची शब्द प्रयोग में सर्वथा एक दूसरे का स्थान नहीं ले सकते। कहीं एक शब्द उपयुक्त होता है तो कहीं अन्य। प्रत्येक शब्द का प्रयोग विषय एवं संदर्भ के अनुसार करना ही ठीक होता है। उदाहरण— देवताओं का तर्पण जल से किया जाता है उचित है, पानी से नहीं।

भाव यह है कि शब्द कहीं पूर्ण पर्यायवाची होते हैं, कहीं आंशिक जैसे—

बड़ा महत्व है — यहाँ बड़ा और बहुत पर्यायवाची से लगते हैं।
बहुत महत्व है

बड़ा आदमी को बहुत आदमी नहीं कह सकते। यहाँ बड़ा बहुत का पर्यायवाची नहीं हुआ।

कुछ पर्यायवाची शब्दों की सूची नीचे दी जाती है—

अग्नि— आग, पावक, हुताशन, दहन, अनल, कृषानु।

अमृत— पीयूष, सुधा, अमिय, अमी।

असुर— दनुज, दाव, दैत्य, राक्षस, निषिचर, निषाचर, रजनीचर, तमीचर।

आँख— चक्षु, लोचन, नेत्र, नयन, दृग।

आकाश— गगन, व्योम, अंबर, नभ, अनंत, आसमान।

इन्द्र— सुरपति, देवराज, सुरेन्द्र, शचीपति, मधवा, पुरंदर, सहसनयन।

ईश्वर— परमात्मा, भगवान, परमेश्वर, त्रिलोकनाथ, जगन्नाथ, जगदीश, प्रभु।

कपड़ा— वस्त्र, पट, वसन, चीर।

कमल— अरविन्द, उत्पल, राजीव, कोकनद, कुवलय, पुण्डरीक, वारिज, तामरस, पंकज, अब्ज।

कामदेव— अनंग, मनोभव, मनसिज, मदन, पुष्यधन्वा, मन्मथ, मार मनोज, नयन, रतिपति।

कृष्ण— श्याम, घनष्याम, मोहन, केषव, माधव, वासुदेव, गिरधर, गोपाल, मुरारि, मोहन, वंशीधर।

गणेश— गजवदन, लम्बोदर, गजानन, विनायक, गजपति, भवानीनंदन, गौरीसुत, एकदंत, विधनेष।

गंगा— भागीरथी, मंदाकिनी, विपथगा, देवनदी, सुरसरिता।

घर— ग्रह, आलय, सदन, निकेत, धाम, मंदिर, निवास ।

चन्द्र— शषि, सुधांषु, हिमांषु, निषापति, शषांक, मयंक, सोम, राकेष, कलानिधि ।

नीचे कुछ ऐसे शब्दों की सूची दी जा रही है जो प्रत्यक्षः पर्यायवाची हैं । पर जिनके प्रयोग में सूक्ष्म अंतर का ध्यान रखना आवश्यक है—

अनुभव — अनुभूति

अनुरूप—अनुकूल

अपराध — पाप

आदेश — आज्ञा, अनुज्ञा

विषेषज्ञ — दक्ष, पारंगत

अवनति — पतन

अवस्था — आयु—वय

अस्त्र शस्त्र — आयुध

आचार — व्यवहार

आनंद — सुख

औषधि — ओषध

इच्छा — कामना

लालसा — अभिलाषा

ईर्ष्या — द्वेष, स्पर्धा

उपकरण — उपादान

कपड़ा — वस्त्र

दया — कृपा

कष्ट — यत्राणा, यातना

शोक — विषाद, व्यथा

निंदा — अपवाद

कलंक — अपयष

प्रयोग — उपयोग

विद्रोह — क्रांति

शंका — आशंका

संदेह — संषय

करुणा—सहानुभूति

कुछ शब्द एक दूसरे के पर्याय लगते हुए भी परस्पर सूक्ष्म अंतर रखते हैं । इन्हें अपूर्ण पर्याय कहते हैं । कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं—

1. अनुभव — अनुभूति = व्यवहार या अभ्यास से प्राप्त ज्ञान को अनुभव कहते हैं ।

अनुभूति आंतरिक ज्ञान है जो चिंतन या मनन से प्राप्त होता है ।

जैसे— मोहन को इस कार्य में बहुत अनुभव है।

अच्छी कविता अनुभूति जन्य रचना होती है।

2^० अस्त्र – शस्त्र = फेंक कर चलाए जाने वाले हथियार को अस्त्र
और हाथ में पकड़कर चलाए जाने वाले
हथियार को शस्त्र कहते हैं।

जैसे— आधुनिक युग में दूर-लक्ष्य-भेदी अस्त्रों का प्रयोग अधिकता से
होने लगा है।

धनुष-बाण अस्त्र-षस्त्र दोनों हैं।

3^० अनुरूप – अनुकूल = अनुरूप से समानता या उपयुक्तता का बोध होता है।

अनुकूल से पक्ष में या अनुसार का भाव प्रकट होता है।

जैसे— बड़ो के अनुरूप होने से कार्य सिद्धि में विलम्ब नहीं होता।

अनुकूल वायु पाकर नौका चल पड़ी।

4^० अवस्था – आयु = आयु समस्त जीवन काल को कहते हैं। वय से उम्र का
बोध होता है। अवस्था के अर्थ में वय का भी प्रयोग होता है।

एकार्थक शब्द:—

जिन शब्दों का अर्थ सभी परिस्थितियों में एक-सा रहता है, उन्हें एकार्थी या
एकार्थक शब्द कहते हैं, जैसे—

अहंकार, उत्तम, अस्त्र, अपराध, पाप, निंदा, अपयष, कलंक, अनुराग, आसक्ति,
अर्चन, स्वागत, आराधना, ऋषि, तंद्रा, निपुण, अभिनेत्री, निधन, प्रणय, मापदण्ड,
पत्नी, पुष्प, भ्रांति, मित्र, यातना, श्रद्धा, सम्राट आदि।

अनेकार्थी शब्द:— प्रयोग के अनुसार विभिन्न परिस्थितियों में भिन्न-भिन्न अर्थ देने
वाले अनेकार्थी शब्द कहलाते हैं, जैसे—

अंबर = वस्त्र, आकाश, कपास।

अधर = नीचे का ओठ, अंतरिक्ष, धरती और आकाश के बीच में।

अनंत = आकाश, अविनाशी, विष्णु, शेषनाग।

अब्ज = कमल, शंख, कपूर, चन्द्रमा, सौ करोड़।

अपेक्षा = आवश्यकता, तुलना में।

अभिजात = कुलीन, पूज्य, मनोहर।

अवकाश = बीच का समय, अवसर, छुट्टी।

आल = भौरा, कोयल, सखि।

कनक = सोना, धतूरा।

कर = हाथ, किरण, हाथी की सूँड़, टैक्स, ओला।

गति = चाल, दशा, मोक्ष।

घन = बादल, घटा, अधिक बड़ा हथौड़ा।

ठाकुर = क्षत्रीय, देवता, स्वामी, नाई।

तार = तारघर का तार, लोहे आदि का तार, चासनी का तार, उद्धार।

तीर = तट, बाण।

मुद्रा = मोहर, छाया, सिक्का, मुख का भाव।

मत = राय, संप्रदाय, निषेध।

संज्ञा = चेतना, बाग।

ब्याज = छल, बहाना, सूद।

उत्सर्ग = त्याग, दान, समाप्ति।

विलोमार्थी शब्दः— किसी शब्द से विपरीत अर्थ देने वाला शब्द उसका विलोम या विपरीतार्थक कहा जाता है। जैसे— मान का विपरीतार्थक शब्द अपमान है। नीचे कुछ शब्दों एवं उनके विलोमार्थी दिए जा रहे हैं।

शब्द	विलोम	शब्द	विलोम
अथ	इति	अधुनातन	पुरातन
अवनति	उन्नति	अस्त	उदय
अल्पज्ञ	बहुज्ञ	अनुज	अग्रज
अक्षम	सक्षम	अलभ्य	सुलभ
अनुराग	विराग	अमर	मर्त्य
अनुकरण	प्रतिकूल	आयात	निर्यात
आरोह	अवरोह	जटिल	सरल
आदान	प्रदान	उपरि	अधः
आर्द्र	षुष्क	ऐहिक	पारलौकिक
आवाहन	विसर्जन	ऋजु	वक्र
आसक्त	वियोग	उपकार	अपकार
आलोक	अंधकार	उत्थान	पतन
अभ्यांतर	वाह्य	कटु	मधुर

रचना के आधार पर:—

व्युत्पत्ति या रचना के आधार पर शब्दों के तीन वर्ग किए जाते हैं—

(1) रूढ़ शब्द (2) यौगिक शब्द (3) योगरूढ़ शब्द।

(1) रूढ़ शब्द:— जिन शब्दों के सार्थक खंड न हो सके या जो अन्य शब्दों के मेल से न बने हों उन्हें रूढ़ शब्द कहते हैं। यथा— हाथ, पैर, दिन, रात आदि।

संधि या समास की प्रक्रिया से अन्य शब्दों या शब्दांशों के मेल से बने हुए शब्दों को यौगिक शब्द कहते हैं, जैसे— दिनेष शब्द दिन और ईष शब्दों के मेल से बना है। संधि प्रक्रिया से यह मेल संभव हुआ है। जिसमें दिन की अन्तिम ध्वनि 'अ'

और ईष की आदि ध्वनि 'ई' के मिलने से 'ए' ध्वनि का रूप हुआ और दिनेष शब्द निष्पन्न हुआ। समास की प्रक्रिया से भी यौगिक शब्द बनते हैं। जैसे— राजपुत्र, सेनापति आदि। ये शब्द वस्तुतः 'राजा का पुत्र' और 'सेना का पति' से बने हैं। राजा का पुत्र से राजपुत्र बनाने में न केवल 'का' लोप हो गया है वरन् राजा का संक्षिप्त रूप राज रह गया है। हिंदी के पनघट, घुड़सवार में भी शब्दों के संक्षेपीकरण का यही नियम है।

(2) यौगिक शब्दः— मूल शब्द से उपसर्ग या प्रत्यय लगाने से जो रूप होता है उसे यौगिक कहते हैं। उपसर्गों और प्रत्ययों के योग से बने हुए यौगिक शब्दों के कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं—

उपसर्ग से — अनु = अनुगमन, अनुकथन, अनुकरण, अनुसरण।

उप = उपसचिव, उपकरण, उपनिवेश, उपन्यास।

प्रत्यय से — ता = प्रभुता, नम्रता, ऋजुता, मित्रता।

पा = मोटापा, बुढ़ापा।

त्व = महत्व, मनुष्यत्व, प्रभुत्व।

(3) योगरूढ़ शब्दः— जिस यौगिक शब्द से किसी रूढ़ अथवा विशेष अर्थ का बोध होता है, उसे योगरूढ़ शब्द कहते हैं, जैसे जलज का अर्थ है— 'जल से उत्पन्न हुआ' जल से जोंक, शंख, मछली, कमल आदि कई चीजें उत्पन्न होती हैं पर इस यौगिक शब्द का रूढ़ अर्थ कमल है, अतः इसे **योगरूढ़** कहा गया है।

शब्द शक्ति के आधार पर

अर्थ ही शब्द की शक्ति है। बिना अर्थ के शब्द की बात हम करते ही नहीं। शब्द का महत्व इसी बात में है कि वह अर्थ का बोधक होता है। शब्द और अर्थ का अटूट संबंध ही शब्द शक्ति है। शब्द शक्ति तीन प्रकार की होती है।

- (1) अभिधा (2) लक्षणा (3) व्यंजना।

(1) अभिधा:—

शब्द की जिस शक्ति से उसके प्रचलित अर्थ का बोध होता है, उसे अभिधा कहते हैं। बोलचाल या सामान्य व्यवहार में प्रायः अभिधा से प्राप्त अर्थ का प्रयोग होता है। इस अर्थ को अभिधार्थ, मुख्यार्थ या वाच्यार्थ कहते हैं। कोष में शब्दों के प्रायः अभिधार्थ ही दिए होते हैं। पानी बरस रहा है। यहाँ पानी शब्द अभिधार्थ में प्रयुक्त है।

(2) लक्षणा:—

मुख्यार्थ से भिन्न अभिप्राय व्यक्त होने पर शब्द की जिस शक्ति से किसी दूसरे अर्थ की कल्पना करनी पड़ती है उसे लक्षणा कहते हैं। जैसे राम को देखकर मिथिला निवासी प्रफुल्लित हो गए। यहाँ प्रफुल्लित शब्द का अर्थ 'खिलना' होता है जो फूल का गुण है। लक्षणा से प्रफुल्लित का अर्थ 'प्रसन्न हो गए' कल्पना करें तो अभिप्रायः स्पष्ट होने में कठिनाई नहीं होती। यह बात उल्लेखनीय है कि अभीष्ट अर्थ 'प्रसन्न हो गए' का सम्बंध मुख्यार्थ 'खिल गए' से बना हुआ है।

निम्नलिखित वाक्यों में शब्द शक्ति से युक्त शब्दों को दर्शाया गया है—

1. मदन उल्लू है।
2. वह हमेंशा हवाई बातें करता है।
3. सारा गाँव पानी में है।
4. देश की नाव मंझधार में है।

5. मेरी मनोकामना फलित हुई।

(3) **व्यंजनाः**— शब्द की जिस शक्ति से शब्द के अभिधार्थ या लक्षणार्थ से भिन्न अर्थ का बोध होता है उसे व्यंजना कहते हैं। व्यंजना शक्ति से निष्पन्न अर्थ को व्यंग्यार्थ कहते हैं। किसी को भी बिस्तर छोड़ने को कहने के स्थान पर यह कहना कि 'सबेरा हो गया है' व्यंजना पूर्ण उक्ति है।

प्रयोग क्षेत्र के आधार पर:

शब्दों के वर्गीकरण का एक आधार उनके प्रयोग का क्षेत्र भी है। प्रयोग के आधार पर हम देखते हैं कि कुछ शब्द बहुप्रयुक्त हैं, कुछ अल्प प्रयुक्त, कुछ ऐसे शब्द भी मिलते हैं जो पहले से प्रयुक्त या प्रयोग में थे, पर अब उनका चलन बंद सा हो गया है।

प्रयोग-क्षेत्र के आधार पर हिंदी शब्दों के तीन वर्ग किये जाते हैं—

(1) सामान्य (2) अर्द्ध पारिभाषिक (3) पारिभाषिक

(1) **सामान्यः**—

देशज शब्द जो कभी पारिभाषिक शब्द के रूप में प्रयुक्त नहीं होते और जन-सामान्य के प्रतिदिन के व्यवहार में चलते हैं, जैसे— पानी, मकान, कपड़ा स्कूल आदि।

(2) **अर्द्ध पारिभाषिकः**—

वे शब्द हैं जो कभी तो सामान्य शब्द के रूप में प्रयुक्त होते हैं और कभी पारिभाषिक शब्द के रूप में, जैसे— 'उसकी बातों में लोगों को बड़ा रस मिलता था।' इस वाक्य में 'रस' आनंद का पर्यायवाची है और सामान्य अर्थ में प्रयुक्त हुआ है। पर साहित्य शास्त्र में जहाँ नवरसों का प्रसंग आता है, वहाँ 'रस' पारिभाषिक शब्द बन जाता है। ऐसे शब्दों को अर्द्ध पारिभाषिक कहा गया है।

(3) पारिभाषिक:—

पारिभाषिक शब्द वे हैं जो किसी विशिष्ट क्षेत्र में प्रयुक्त होते हैं, जैसे—
उद्योग, प्रशासन आदि में। इनकी एक सुनिश्चित परिभाषा होती है—

विज्ञान (Science)

अति तनाव — Hypertension	जीवमंडल — Biosphere
आगमन — Induction	अनुवंशिक — Genetic
तंत्रिका — Nerve	भूविज्ञान — Geology
आवृत्ति — Frequency	ध्वनिविज्ञान — Acoustics
उत्पाद — Product	निगमन — Induction
उदर — Abdomen	नेत्रकोटर — Orbit
नौसंचालन — Navigation	प्रजनन — Breeding
प्रतिध्वनि — Echo	

मानविकी (Humanities):

इसमें वाणिज्य और उद्योग संबंधी शब्द भी सम्मिलित हैं।

अंकित मूल्य — Face value	तर्कशास्त्र — Logic
अतिक्रमण — Encroachment	दर्शन — Philosophy
अधिकार पत्र — Charter	प्रतिमान — Criterion
अधिनायक — Dictator	निरंकुष — Autocratic
अपमिश्रण — Adulteration	निर्वाचनवर्ग — Electorate
अभिरुचि — Attitude	निर्वाचन क्षेत्र — Constituency
कुंठा — Frustration	निष्क्रिय लेखा — Dead account
कूटनीति — Diplomacy	कूटसंकेत — Code
न्यायाधिकर्ता — Attorney	परिवेश — Environment

भाषा विज्ञान – Linguistics
वर्ग संघर्ष – Class struggle
वाणिज्य – Commerce
विषय-क्षेत्र – Scope
विषय-वस्तु – Content
संवेदनशील – Sensitive
सुपुर्दगी – Delivery

मनोविज्ञान – Psycho
शिक्षा – Education
संकल्पन – Concept
संचार – Communication
ललितकला – Fine arts
समाचलोचना – Criticism
सौन्दर्य शास्त्र – Aesthetics

प्रशासन (Administration):

अधीक्षक – Superintendent
अनुस्मारक – Reminder
आरोपपत्र – Charge-sheet
उपक्रम – Undertaking
एकमुष्टराशि – Lump Sum
कार्यकारी – Acting
कार्यवृत्त – Minutes
तटस्थ – Neutral
स्थानांतरण – Transfer
निदेशालय – Directorate

पात्रता – Eligibility
प्रतिहस्ताक्षर – ब्यनदजमत^१पहदंजनतम
प्रभाग – Division
बंध-पत्र – Bond
प्राधिकार – Authority
मुआवजा – Compensation
संस्तुति – Recommendation
वरिष्ठ – Senior
पदान्चति – Demotion
स्मरण-पत्र – Reminder

व्याकरण या रूपांतर के आधार पर:-

व्याकरण या रूपांतरण के आधार पर शब्दों को दो भागों में बाँटा गया है-

विकारी शब्द:-

वे शब्द हैं जो लिंग, वचन और कारक भेद के कारण बदलते हैं। विकारी शब्द के चार प्रकार हैं— संज्ञा, सर्वनाम, क्रिया और विशेषण। इनके कुछ उदाहरण विकार निर्देश के साथ इस प्रकार हैं।

संज्ञा — लड़का — दो लड़के, एक लड़के ने, चार लड़कों ने, हे लड़के, हे लड़को।

लड़की — दो लड़कियाँ, चार लड़कियों ने, अरी लड़कियों।

रात — रातें, रातों।

बेटा — बिटियाँ, बेटे, बेटों।

सर्वनाम — मैं — मुझ, मेरा, मुझी, मुझे, हम, हमें, हमीं, हमारा।

वह — वह, उसे, उसी, वे, उन, उन्हें।

तुम — तुम, तुम्हें, तुम्हारी, तुमसे, तेरा।

क्रिया — देखना { — देख, देखो, देखिए, देखिएगा, देखती, देखते, देखा, देखे।

चलना { — चला, चलते, चलोगे, चलिए, चले।

फेंकना { — फेंका, फेंकिए, फेंको।

खाना — खाना, खाए, खाइए, इत्यादि।

विशेषण — अच्छा — अच्छे, अच्छी।

भला — भले, भली।

अविकारी शब्द:- उन शब्दों को कहते हैं, जिनका रूप अक्षुण्ण रहता है। अर्थात् सभी परिस्थितियों में एक-सा बना रहता है। इनके भी चार प्रकार बनाए गए हैं; क्रिया विशेषण, संबंध बोधक, समुच्चय बोधक, विस्मयादि बोधक। इन्हें ही अव्यय की संज्ञा देते हैं।

क्रिया विशेषण :- अब, जब, यहाँ, वहाँ, भीतर, बाहर, नीचे, क्यों, यों।

संबंधबोधक:- के बाहर, के नीचे, की ओर, के सामने, से पहले।

समुच्चयबोधक:- और, तथा, किंतु, परंतु अथवा, इसलिए।

विस्मयादिबोधक:- अरे, ओ, ओहो, हा, हाहा, हाय, हे राम, बाप रे।

शब्द रचना:-

शब्द भण्डार में वृद्धि की दृष्टि से शब्द रचना का महत्व है। हिंदी भाषा में शब्द रचना चार प्रकार से होती है— उपसर्ग, प्रत्यय, संधि व समास से। हिंदी तत्सम शब्दों में रचना के ये चारों साधन प्रयुक्त होते हैं। किन्तु तद्भव या देशज शब्दों में संधि नहीं होती।

उपसर्ग:-

शब्दों के आदि में लगकर अर्थ में विशेषता लाने या अर्थ को सर्वथा बदल देने वाले शब्दांश उपसर्ग कहे जाते हैं। यथा 'बल' शब्द का अर्थ है— 'शक्ति' लेकिन इससे पूर्व 'निर्' लगा देने पर शब्द निर्माण होगा— 'निर्बल' जिसका अर्थ होगा 'शक्ति से रहित'। इसी प्रकार 'बल' शब्द से पूर्व 'स' लगा देने पर शब्द बनेगा— 'सबल' और इसका अर्थ होगा 'शक्तिशाली'। इसी प्रकार यदि हम 'वि', 'प्र', 'प्रति' आदि शब्दांश 'कार' शब्द से पहले लगा दें तो क्रमशः विका, प्रकार, प्रतिकार, उपकार शब्द बनेंगे। जिसके अर्थ एक दूसरे से सर्वथा भिन्न हैं। इस प्रकार उपसर्गों को शब्दों के पूर्व जोड़ने से उनके अर्थ में स्वभाविकता और परिवर्तनशीलता का ही बोध होता है।

हिंदी में जो उपसर्ग युक्त शब्द मिलते हैं वे प्रायः संस्कृत के ही तत्सम शब्द हैं। अन्य शब्दों में भी जो उपसर्ग लगते हैं वे प्रायः संस्कृत शब्दों के अपभ्रंश रूप होते हैं। ठेठ हिंदी के उपसर्ग बहुत कम हैं। कुछ उपसर्ग विदेशी भाषाओं के भी हैं।

संस्कृतयुक्त उपसर्ग उनके अर्थ और प्रयोग

उपसर्ग	अर्थ	निर्मित शब्द
अति	अधिक, सीमा से परे	—अतिषय, अत्यंत, अत्याचार, —अतीव अतिरेक, अतिक्रमण
अधि	अधिक, बड़ा (श्रेष्ठ) ऊपर	—अधिकार, अधिमास, अध्यक्ष —अध्यावरोध
अनु	छोटा, पीछे, समानता	— अनुशासन, अनुभाग, अनुसरण, अनुकरण, —अनुगमन, अनुज, अनुसार
अप	बुरा, विरुद्ध	—अपशब्द, अपमान, अपव्यय, अपयश, अपकीर्ति, अपकार
अभि	अधिकता समीपता ओर	—अभिमान, अभिशाप, अभिज्ञ — अभिभावक, अभ्यास —अभिमुख, अभियोग
अव	अनादर हीनता नीचे	—अवज्ञा, अवसान —अवगुण —अवनति, अवरोहण, अवतार
आ	थोड़ा विपरीत सीमा (तक)	—आरक्त, आमुख —आगमन, आदान —आसेतु, आजन्म, आमरण, आजीवन।
उत्, उद्	उत्कर्ष, ऊपर	—उद्गम, उत्पन्न, उद्घोष, उत्साह, उत्थान, उन्नति, उन्नयन।
उप	छोटा अच्छा निकट	—उपमंत्री, उपनाम, उपवन, उपनिवेश, उपभेद। —उपकार, उपदेश —उपस्थित, उपासना

दुर, दुस	कठिन	—दुर्गम, दुर्लभ, दुष्कर, दुर्दृष्टि, दुराचार।
	बुरा	—दुर्जन, दुष्कर्म, दुर्गुण।
नि	अच्छीतरह	—निमग्न, नियुक्त, निरूपण।
	नीचे	—निपात, निरोध, निम्न।
	भीतर	—निदर्शन, निवास, नियुक्त।
निर्, निस्	निषेध	—निर्भय, निर्जीव, निर्मल, निश्चल
	बाहर	—निष्कासन, निर्वासन, निराकरण।
परा	अधिक, उलटा	— पराक्रम, परामर्ष, परायण, पराजय, पराभव, पराभूत।
परि	अतिशय	—परिगमन, परिणाम, परिक्रमा, परिजन, परिधि,
	चारों ओर	परिचय
प्र	अधिक	—प्रख्यात, प्रकाश, प्रसिद्धि
	आगे	—प्रचार, प्रसार, प्रस्थान।
	गति	—प्रयोग, प्रलय, प्रताप।
प्रति	प्रत्येक, एक—एक	—प्रतिदिन, प्रतिक्षण, प्रत्येक, प्रतिकूल, प्रतिकार, प्रतिवाद, प्रतिध्वनि
	विरोध, ऊपर	—प्रतिष्ठा, प्रतिष्ठान
	बराबरी	—प्रत्यक्ष, प्रतिनिधि
वि	अभाव	—वियोग, विलोम
	विषेयता	—विज्ञान, विकास, विनय
सु	सुंदर, अच्छा	—सुगम, सुवास, सुलभ, सुदूर, स्वागत, सुभक्ति, सुकवि, सुजन

कुछ यौगिक शब्दों में एक से अधिक उपसर्ग पाए जाते हैं। ऐसे कुछ शब्दों के उदाहरण निम्न हैं।

प्रति+उप = प्रत्युपकार, प्रत्युत्पन्न

प्रति+आ = प्रत्यागमन, प्रत्यावेदन, प्रत्यालोचना

प्रति+अव = प्रत्यवरोध
 अभि+आ = अभ्यागत
 परि+आ = पर्यावरण, पर्यालोचन
 परि+अव = पर्यवसान, पर्यवलोकन
 निः+आ = निराहार, निरालम्ब
 सु+आ = स्वागत
 व्य+आ = व्याकरण
 दुः+आ = दुराचार

हिंदी के उपसर्ग उनके अर्थ और प्रयोग:-

उपसर्ग	अर्थ	उदाहरण या निर्मित शब्द
अ, अन	निषेध	— अनपढ़, अजान, अकाज, अछूता, अथाह, अनमोल, अनजान, अनबन, अनमोल, अनहोनी, अनहित।
अध	आधा	— अधजला, अधपका, अधखिला, अधमरा।
उन	एक कम	— उन्नीस, उनचास, उनहत्तर।
औ	हीनता	— औगुण, औघट, औचट।
दु	बुरा, हीन	— दुकाल, दुबला, दुसाध।
नि	निषेध	— निडर, निघड़क।
भर	पूरा, ठीक	— भरपेट, भरसक, भरपूर, भरजोर।
कु, क बुरा, हीन	—कपूत	
सु, स	श्रेष्ठ	— सुडौल, सपूत, सुजान, सुघड़।

अरबी-फारसी के उपसर्ग, उनके अर्थ और प्रयोग:-

उपसर्ग	अर्थ	निर्मित शब्द
अल	निश्चित	— अलविदा, अलबत्ता, अलगरज।
कम	हीन	— कमउम्र, कमअक्ल, कमकीमत, कमजोर।

खुष	अच्छा	— खुशबू, खुशकिस्मत, खुशखबरी, खुशमिजाज, खुशहाल, खशनसीब
गैर	निषेध	— गैरसरकारी, गैर जिम्मेदारी, गैर वाजिब।
दर	में	— दरकार, दरअसल, दरमियान।
ना	अभाव	— नापसंद, नासमझ, नाराज, नालायक, नादान, नामाकूल।
फी	प्रति	— फी आदमी, फीसदी, फीगज।
ब	से, के, में, अनुसार	— बनाम, बदस्तू, बदौलत, बकौल, बदनाम, बकलम, बदजात,
बद	बुरा	— बदकिस्मत, बद्हजमी, बद्दुआ, बदनीयत
बर	ऊपर	— बरखास्त, बरदास्त, बरवक्त।

इनमें बहुत से उपसर्ग युक्त शब्द हिंदी में रूढ़ रूप में प्राप्त हुए हैं

उपसर्ग	अर्थ	निर्मित शब्द
बा	साथ	— बाजाब्ता, बाकायदा
बे	बिना	— बेईमान, बेचारा, बेवकूफ़, बेवफ़ा, बेषुमार
ला	बिना	— लाचार, लाजबाब, लावारिस, लापरवाह, लापता
सर	मुख्य	— सरकार, सरपंच, सरदार, सरहद, सरताज
हर	प्रत्येक	— हररोज़, हरमाह, हरतरह, हरचीज़
बिल	साथ	— बिल्कुल

प्रत्ययः—

शब्दों के अंत में लगकर अर्थ में विशेषता लाने या अर्थ को बदल देने वाले शब्दांश प्रत्यय कहलाते हैं। यथा— 'सुन्दरता' शब्द में मूल शब्द 'सुन्दर' है और इसमें 'ता' प्रत्यय जुड़ा हुआ है। संस्कृत प्रत्ययों का वर्गीकरण 'कृत' और तद्धित' दो रूपों में किया जाता है। लेकिन हिंदी भाषा में कुछ ऐसे भी प्रत्यय हैं जिनका प्रयोग इन दोनों रूपों में किया जाता है। अतः हिंदी प्रत्ययों का प्रयोग तत्सम, तद्भव, देशज और विदेशी शब्दों में बराबर उपयुक्त होता है। प्रत्ययों के प्रयोग के माध्यम से भाववाचक संज्ञाएँ, विषेषण आदि की रचना अक्सर की जाती है। अतः अध्यापक विषेष रूप से ऐसे अभ्यास करा सकते हैं जिनमें वह शब्दों में प्रत्यय लगवाकर भाववाचक संज्ञाओं, विशेषणों, स्त्रीवाचक शब्दों की रचना करा सकते हैं।

संस्कृत के कृत प्रत्ययः—

भाववाचक संज्ञा बनाने वालेः—

कृत प्रत्यय	धातु	भाववाचक संज्ञाएँ
अ	भिद् (भेदना)	भेद
अन	सह, रक्ष	सहन, रक्षण
अना	विद्, सूच	वेदना, सूचना
आ	इष्, शिक्ष	इच्छा, शिक्षा

कर्तृवाचक संज्ञाएँ बनाने वालेः—

अ	सृप (सरकना)	सर्व
अक	कृ, गै	कारक, गायक
उक	भिक्ष्, म्	भिक्षुक, भावुक

ता	दा, धा	दाता, धाता
----	--------	------------

विशेषण बनाने वाले:—

मान	सेव्, यज्, वृत्	सेव्यमान, यजमान, वर्तमान
न	ली, छिद, खिद	लीन, छिन्न, खिन्न
ण	जृ, शृ, प्रकृ	जीर्ण, शीर्ण, प्रकीर्ण
तव्य	वच, दा, कृ	वक्तव्य, दातव्य, कर्तव्य
अनीय	स्मृ, कृ, दृश्	स्मरणीय, करणीय, दर्शनीय

संस्कृत के तद्धित प्रत्यय:—

धातु से भिन्न शब्दों में लगने वाले प्रत्ययों को तद्धित प्रत्यय कहते हैं। और इनसे बनने वाले शब्दों को तद्धितांत शब्द कहते हैं। ये प्रत्यय संस्कृत, हिंदी और अरबी, फारसी के शब्दों में प्रयुक्त होते हैं। इनसे संज्ञाएँ ओर विशेषण बनते हैं।

जातिवाचक संज्ञाओं से बनी भाववाचक संज्ञाएँ:—

तद्धित प्रत्यय	जातिवाचक संज्ञा	भाववाचक संज्ञा
ता	मित्र, शत्रु, धीर	मित्रता, शत्रुता, धीरता
त्व	प्रभु, पशु, वीर	प्रभुत्व, पशुत्व, वीरत्व

विशेषण से भी भाववाचक संज्ञाएँ बनाई जाती हैं।

तद्धित प्रत्यय	विशेषण	भाववाचक संज्ञा
ता	मूर्ख, लघु, वीर	मूर्खता, लघुता, वीरता
त्व	वीर, एक, गुरु	वीरत्व, एकत्व, गुरुत्व
अ	गुरु, लघु, मृदु	गौरव, लाघव, मार्दव

संज्ञा से बने विशेषणों के उदाहरण:-

प्रत्यय	संज्ञा	विशेषण
अ	निशा	नैश
य	तालु	तालव्य
इक	तर्क, वेद, दिन, लोक	तार्किक, वैदिक, दैनिक, लौकिक,
	भूगोल, धर्म, इतिहास	भौगोलिक, धार्मिक, ऐतिहासिक,
	परिभाषा	पारिभाषिक
इत	फल, आनंद	फलित, आनन्दित
इन	मल	मलिन
ईय	राष्ट्र जाति, देश, प्रांत	राष्ट्रीय, जातीय, देशीय, प्रांतीय
	क्षेत्र, भारत	क्षेत्रीय, भारतीय
निष्ठ	विचार	विचार निष्ठ
मती	श्रीमान्	श्रीमती
वती	गुण	गुणवती
वी	मेधा	मेधावी

हिंदी के कृत प्रत्यय:-

हिंदी के कृत प्रत्यय से भाववाचक, कृदन्तीय संज्ञाएँ, कर्तृवाचक कृदन्तीय विषेषण बनते हैं।

भाववाचक संज्ञा बनाने वाले:-

भाववाचक कृदन्तीय संज्ञाओं की रचना धातु के अंत में अ,आ,आई, आन, आप, आया, आव, ई, त, ती, नती, ननी, र, वह, हट आदि प्रत्ययों को जोड़कर होती है-

अंत गढ़, जड़, भिड़ गढंत, जड़ंत, भिड़ंत

आ	घेरे, छाया, जोड़	घेरा, छाया, जोड़ा
आई	लड़, सुन, जुत्	लड़ाई, सुनाई, जुताई
आप	मिल्	मिलाप
आव	चढ़, बह, फैल	चढ़ाना, बहाव, फैलाव
आवट्	लिख्, दिख्, मिल्	लिखावट, दिखावट, मिलावट
आवा	छल, बुला, दिख	छलावा, बुलावा, दिखावा
आहट	गुर्रा, चिल्ला, घवरा	गुर्राहट, चिल्लाहट, घवराहट
क	बैठ, चाल	बैठक, चालक
ती	चुक, बढ़, घट	चुकती, बढ़ती, घटती
नी	भर्, छाँट	भरनी, छँटनी
औनी	कुट, पीस	कुटौनी, पिसौनी
ई	बोल, हँस, कह—सुन	बोली, हँसी, कही—सुनी

हिंदी के तद्धित प्रत्ययः—

हिंदी तद्भव शब्दों के अंत में तद्धित प्रत्यय लगाकर संज्ञा और विषेषण बनाए जाते हैं। तद्धित प्रत्ययों से बने शब्द पाँच प्रकार के हैं—

(क) भाववाचक तद्धितीय संज्ञाएँ (ख) लघुतावाचक तद्धितीय संज्ञाएँ (ग) संबंधवाचक तद्धितीय संज्ञाएँ (घ) कर्तृवाचक तद्धितीय संज्ञाएँ (ङ.) तद्धितीय विषेषण इनके उदाहरण निम्नलिखित हैं—

(क) भाववाचक संज्ञाएँ बनाने वालेः—

प्रत्यय	संज्ञा विशेषण	भाववाचक संज्ञाएँ
आई	भला, चतुर, पंडित	भलाई, चतुराई, पंडिताई
त	रंग	रंगत

नी	चाँद, नथ	चाँदनी, नथनी
पन	नीला	नीलापन
वट	लेख	लिखावट

(ख) लघुतावाचक संज्ञाएँ बनाने वाले:—

प्रत्यय	संज्ञा	लघुतावाचक संज्ञाएँ
ई	गगरा, प्याला, टोप, नद	गगरी, प्याली, टोपी, नदी
क, की	ढोल	ढोलक, ढोलकी
या	बच्ची, लोटा, डिब्बा	बचिया, लुटिया, डिबिया
री	कोठा, छाता	कोठरी, छतरी
ली	टीका, सूप	टिकली, सुपेली

(ग) संबंधवाचक संज्ञाएँ बनाने वाले:—

प्रत्यय	संज्ञा	संबंधवाचक संज्ञाएँ
आल	ससुर	ससुराल
हाल	नानी	ननिहाल
जा	भाई	भतीजा
एरा	चाचा, मामा, फुफा, मौसा	चचेरा, ममेरा, फुफेरा, मौसेरा

(घ) कर्तृवाचक संज्ञाएँ बनाने वाले:—

प्रत्यय	संज्ञा	कर्तृवाचक संज्ञाएँ
आर	चाम, लोहा, सोना	चमार, लोहार, सोनार
इया	रसोई, मुख, दुखी	रसोइया, मुखिया, दुखिया
वाल	गया, जायस	गवाला, जायसवाल

हारा चूड़ी, लकड़ी

चूड़ीहार, लकड़हारा

(ड.) विशेषण बनाने वाले शब्दः—

प्रत्यय	संज्ञा	विशेषण
आ	प्यार, प्यास	प्यारा, प्यासा
एलू	घर	घरेलू
ना	आप	अपना

नाम धातुएँः—

नाम का अर्थ है संज्ञा, सर्वनाम और विशेषण। इनसे बनने वाली धातुओं को नाम धातु कहते हैं।

1. संज्ञा से बनने वाली धातुएँः—

चपट	चपतियाना	बात	बतियाना
जूता	जुतियाना	माटी	मटियाना
दुख	दुखाना	रंग	रंगना
दाग	दागना	स्वीकार	स्वीकारना
नाक	नकियाना	टेट	टेटियाना
लाज	लजाना	लात	लतियाना
लाठी	लठियाना	हाथ	हथियाना

2. विशेषण से बनने वाली धातुएँः—

गरम	गरमाना
चिकना	चिकनाना
पागल	पगलाना

3. सर्वनाम से बनने वाली धातुएँः—

अपना	अपनाना
------	--------

समास

दो या दो से अधिक मुक्त पदों के योग से जो एक नया पद बनता है, उसे समास कहते हैं। प्रायः संयोगी पदों के बीच से कारक चिह्न, कारक परसर्ग तथा समुच्चयबोधक पदों का लोप करके कई पदों के योग से एक समास पद बनता है। लुप्त किए गए पदों को यदि संयोगी पदों के बीच में रख दिया जाए तो इस प्रक्रिया को व्याकरण में समास-विग्रह या समास-विश्लेषण की संज्ञा दी जाती है।

पद ग्रामिक संधि-प्रक्रिया ऽवतचीवचीवदमउपबेद्ध में दो पद निकट-निकट अवश्य आते हैं, किंतु दोनों पदों का योग न होकर केवल ध्वनि संबंधी योग होता है। दोनों पद एक नए ध्वनि ग्रामिक रूप में व्यक्त किए जाते हैं। पद दो ही बने रहते हैं, जबकि समास-प्रक्रिया में दो पदों के योग से एक नया पद ही बन जाता है। ऐसे सामासिक पद को समास की संज्ञा दी जाती है। समास में अधिकांशतः मुक्त पदों का ही योग होता है जबकि संधि-प्रक्रिया में एक मुख्य पद और एक आबद्ध पद भी निकट आते हैं और तीनों पद एक नए ध्वनि ग्रामिक स्वरूप को ग्रहण करते हैं, जबकि समास में दोनों पद मिलकर एक नए पदग्रामिक रूप में व्यक्त होते हैं।

समास-प्रक्रिया वक्ता या लेखक के संक्षिप्तीकरण की एक शैली है। गद्य की अपेक्षा कविता में समासों का प्रयोग अधिक होता है। कम से कम पदों से अधिक से अधिक भाव व्यक्त करने के उद्देश्य से समासों की रचना होती है। कभी-कभी अपने वक्तव्य को अधिक लाक्षणिक या व्यंजक बनाने के लिए भी सामासिक पद-रचना की जाती है। ऐसी स्थिति में सामासिक प्रक्रिया शैलीविज्ञान या रीतिविज्ञान ऽजलसपेजपबेद्ध की सीमा को स्पर्श करती है।

साहित्यिक मानक हिंदी में तो सामासिक रचना विशेष होती है, किन्तु मौखिक हिंदी तथा जनसामान्य हिंदी में समास-रचना बहुत कम होती है। प्रथम पद और द्वितीय पद की प्रधानता और अप्रधानता तथा विशेषण+संज्ञा, अव्यय+संज्ञा, आदि के

योग तथा लुप्तप्राय कारक चिह्नों या परसर्गों के आधार पर मानक हिंदी में समासों का वर्गीकरण निम्न प्रकार से किया जाता है। इस वर्गीकरण में रूप, अर्थ और प्रयोग का सर्वथा ध्यान रखा जाता है।

1. कर्मधारय समास:—

जब दो पदों में से पहला पद विषेषण और दूसरा संज्ञा होता है तो दोनों के योग से निर्मित समास को अर्थ की दृष्टि से कर्मधारय समास कहते हैं। कर्मधारय में पहला विषेषण पद दूसरे पद की विषेषता व्यक्त करता है। इस प्रकार इसमें दूसरा पद प्रधान तथा प्रथम पद गौड़ होता है। यथा—

शुभागमन, सद्गुण, खड़ी बोली, भलमानस, छुटभैया, परमानंद, पीताम्बर।

कभी—कभी दूसरा पद विषेषण हो जाता है यथा— पुरुषोत्तम, जन्मांतर, मुनिवर आदि।

2. द्विगु समास:—

दो पदों में से एक पद संख्यावाचक विषेषण और दूसरा संज्ञा हो तो ऐसे कर्मधारय को द्विगु समास कहते हैं। जैसे— चौराहा, त्रैलोक्य, पंचवटी, सतसई, चौकड़ी, त्रिफला, पंचराज, सप्तपदी, अष्टाध्यायी, नवरत्न, दशावतार, दोपहर, तिमाही इत्यादि।

3. तत्पुरुष समास:—

जिस समास में दूसरा पद प्रधान होता है और जिसमें दो पदों के बीच में कोई न कोई कारक चिह्न लुप्त रहता है, उसे तत्पुरुष समास कहते हैं। कर्ता और संबोधन को छोड़कर इसमें छः कारकों (कर्म कारक, सम्प्रदान कारक, अपादान कारक, अधिकरण कारक, संबंध कारक) के कारकीय परसर्ग लुप्त रहते हैं। जिस कारक का परसर्ग लुप्त रहता है, उसके नाम से इस समास का नामकरण होता है। कारक परसर्गों की दृष्टि से इसके छः भेद होते हैं—

(1) **कर्मतत्पुरुषः**— जिसमें 'को' का लोप रहता है। जैसे— गुणातीत (गुण को पार किया हुआ), शरणागत (षरण को प्राप्त), नरकागत (नरक को गया हुआ) चिड़ीमार (चिड़ियों को मारने वाला), गगनचुंबी (गगन को चूमने वाला), माखनचोर (माखन को चुराने वाला), गिरहकट (गिरह या गाँठ को काटने वाला)।

(2) **करणतत्पुरुषः**— जिसमें 'से' या 'के द्वारा' का लोप रहता है। जैसे— शोकाकुल (शोक से आकुल), अकाल पीड़ित (अकाल से पीड़ित), तुलसीकृत (तुलसी द्वारा रचित), इसी प्रकार ईश्वरदत्त, भक्तिवष, रोगग्रस्त, शक्ति-सम्पन्न, करुणापूर्ण, मनगढ़ंत, रसभरा, मदमाता इत्यादि।

(3) **सम्प्रदान तत्पुरुष कारक** :— सम्प्रदान तत्पुरुष कारक में 'के लिए' का लोप रहता है। जैसे— देशभक्ति (देश के लिए भक्ति), बलिपशु (बलि के लिए पशु), पाठशाला (पाठ के लिए शाला), इसी प्रकार रसोईघर, हथकड़ी, युद्धभूमि, हवन सामग्री, स्नानगृह, सभाभवन, रोकड़वही, राहखर्च, मालगोदाम, इत्यादि।

(4) **अपादान तत्पुरुषः**— जिसमें 'से' का लोप रहता है। जैसे— ऋणमुक्त (ऋण से मुक्त), जन्मांध (जन्म से अंधा), पदच्युत (पद से च्युत)। इसी प्रकार जातिभ्रष्ट, भयभीत, जन्मरोगी, धर्मविमुख, जलजात, विद्याविहीन, हृदयहीन इत्यादि।

(5) **सम्बंध तत्पुरुषः**— जिसमें 'का, के, की, का' का लोप रहता है। जैसे— गंगाजल (गंगा का जल), राजपुत्री (राजा की पुत्री), नरेश (मनुष्यों के स्वामी)। इसी प्रकार विद्याभ्यास मंत्री-पुत्र, लक्ष्मी-पति, सेनानायक, घुड़-दौड़, मृगपति, सूर्योदय, भूदान, प्रेमसागर, ग्रामवासी आदि।

(6) **अधिकरण तत्पुरुषः**— जिसमें 'में' या 'पर' का लोप रहता है। जैसे— प्रेममग्न (प्रेम में मग्न), आपबीती (आप पर बीती)। इसी प्रकार ग्रामवास, जलसमाधि, कार्यनिरत, कला-प्रवीण, कविश्रेष्ठ, प्रेमाग्नि, देशाटन, कानाफूसी, मनमौजी, निशाचर, दानवीर, कार्यकुशल आदि।

4. अव्ययीभाव समासः—

दो पदों में जब एक पद अव्यय और दूसरा पद संज्ञा हो और समस्त पद एक क्रियाविशेषण के समान कर्म करें तो उसे अव्ययीभाव समास कहते हैं। जैसे— यथाशक्ति, यथाक्रम, हाथोंहाथ, दिनोंदिन, भरसक, बीचोबीच, धड़ाधड़, प्रतिदिन, प्रतिमास, बेखटके, भरपेट आदि।

5. द्वन्द्व समासः—

दो पदों के बीच जब 'कोई और' तथा आदि पदों का लोप हो, तब उसे द्वन्द्व समास कहते हैं। जैसे मात—पिता, राजा—प्रजा, छत्र—छाया आदि।

6. बहुब्रीहि समासः—

दो पदों के बीच जब कोई पद प्रधान नहीं होता, बल्कि दोनों पद मिलकर किसी तीसरे पद की विशेषता बताते हैं, तब उसे बहुब्रीहि समास की संज्ञा दी जाती है। जैसे—

कृतकार्य (कृत है कार्य जिसके द्वारा वह भक्ति)

दत्तचित्र (दिया है चित्र जिसने)

नीलकण्ठ (नीला है कण्ठ जिसका)

चतुर्भुज (चार भुजाएं हैं जिसकी वह)

घनश्याम (घन की तरह श्याम है जो)

कलहप्रिय (कलह प्रिय है जिसको)

कमल नयन (कमल के समान नयन वाले)

रचना की दृष्टि से समास—भेदः—

जिन अवयवों से समास की रचना हो सकती है, उनके कई प्रकार के योग हो सकते हैं—

संज्ञा+संज्ञा के योग से— अन्न—जल, डाल—डाल, भाई—बहन, राजदरबार, सभा—भवन, कमलनयन, करकमल, गंगाजल, गुरुदक्षिणा, गौरीषंकर, घर—घर, घर—द्वार।

संज्ञा+विशेषण के योग से— अकालपीड़ित, नीतिपुराण, पदच्युत, नराधाम, पाप—मुक्त, मदमत्त, रसभरा, धनहीन, तुलसीकृत, जलसिक्त, धर्माध, घनष्याम, देशनिकाला इत्यादि।

विशेषण+संज्ञा के योग से— इकतारा, एकदम कालीमिर्च, खड़ीबोली, चारपाई, पंचरत्न, महावीर, नीलोत्पल, नवग्रह, पीताम्बर इत्यादि।

विशेषण+विशेषण के योग से— अधमरा, अल्पसंख्यक, खट्टामीठा, भला—बुरा, लाल—पीला, शीतोष्ण, श्यामसुंदर इत्यादि।

सर्वनाम+क्रिया के योग से— आपबीती।

संज्ञा+क्रिया के योग से— चिड़ीमार, जगबीती, जेबकट, देशनिकाला, मनचला, मुँहफट आदि।

क्रिया+क्रिया के योग से— गया—बीता, सुनी—सुनाई, लिखा—लिखाया।

अव्यय+संज्ञा के योग से— प्रतिदिन, यथाक्रम, यथाशक्ति, यथास्थान, यावज्जीवन।

अव्यय+अव्यय के योग से— आगे—पीछे, ऊपर—नीचे, कहाँ—कहाँ, जहाँ—कहीं, यथाशीघ्र।

शब्दावली शिक्षण (Vocabulary Teaching)

प्रत्येक क्षेत्र के छात्र दो प्रकार की शब्दावली का प्रयोग करते हैं—

1. उपयोगी या सक्रिय शब्दावली (Working or active Vocabulary)
2. परिचय या निष्क्रिय शब्दावली (Recognizable or passive vocabulary)

जो शब्द पुस्तक—वाचन के लिए प्रयुक्त होते हैं चाहे वे संस्कृतनिष्ठ हो या तद्भव, देशज और विदेशज यथा— बैजन्ती, सबद, घंटिका, पेटारा, न्याय, लकरी, हाँक्यों, सिथिल, अवनि, कुसुमायुध, अम्बरतल, प्रहरी, बसुन्धरा, उच्छ्वास, सखिन्ह, सुकृत, रेणु आदि का प्रयोग केवल पुस्तक—वाचन में होता है। यद्यपि परिचय शब्दावली की ;त्मबवहदप्रंइसम अवबंइनसंतलद्ध की परिधि, उपयोगी शब्दावली (Working vocabulary) की अपेक्षा बड़ी होती है। किन्तु उसकी परिधि छात्रों की स्तर—वृद्धि के साथ—साथ घटती जाती है, अर्थात् ज्यों—ज्यों छात्रों के ज्ञान, अनुभव में वृद्धि होती जाती है, वे बहुत से परिचित शब्दों का प्रयोग दैनिक रचना (मौखिक या लिखित) की अभिव्यक्ति के लिए करने लग जाते हैं,— शब्द घंटिका या घंटी, पिटारा, न्याय, ककड़ी, शिथिल, भक्तवत्सल, अम्बरतल, कुसुमायुध, वसुन्धरा, उच्छ्वास आदि शब्द अब केवल 'परिचय शब्दावली' के शब्द न रहकर 'उपयोगी शब्दावली' के शब्द बन गए हैं।

'परिचय शब्दावली' का प्रयोग लेखन या रचना कार्य में बहुत कम होता है अतः इन शब्दावलियों की वर्तनी की शिक्षा देने तथा अभ्यास कराने में समय तथा अभ्यास तो लगता है पर लाभप्रद नहीं होता है। पर साथ ही कक्षा की उपयोगी शब्दावली (जो प्रत्येक कक्षा के स्तर के अनुसार भिन्न—भिन्न होती है) के प्रत्येक शब्द के वर्ग विन्यास पर विशेष बल देने की आवश्यकता नहीं है। उन्हीं शब्दों को छाँटना चाहिए जिनकी वर्तनी में बच्चे प्रायः भूल करते हैं। रचना—संशोधन के समय सर्वसामान्य अशुद्धियों की सूची बनाने के बाद कक्षा के सभी छात्रों को उन शब्दों का शुद्ध लेखन निम्न लिखित विधियों के द्वारा समझाया जा सकता है—

शब्दावली-शिक्षण की सामान्य विधियाँ:-

शब्दावली-शिक्षा के सामान्य विधियों के द्वारा वर्तनी या शब्द-अशुद्धियों को दूर करने में सहायता मिलेगी।

(1) वैयक्तिक ध्यान (2) शब्द तथा अर्थ सामंजस्य (3) सर्व सामान्य अशुद्धियों का परिचय

(4) अशुद्धियों का वर्गीकरण (5) अशुद्धियों का चतुर्विधि परिहार या निवारण (6) दृश्य-श्रव्य उपादानों का बहु-प्रयोग।

(1) वैयक्तिक ध्यान (Individual attention) :-

एक ही कक्षा के छात्रों की शब्द/वर्तनी संबंधी कठिनाइयाँ व्यक्तिगत रूप से भिन्न-भिन्न प्रकार की हो सकती हैं, यथा—

1. किसी छात्र को किसी विशेष ध्वनि के उच्चारण में कठिनाई हो सकती है तो किसी अन्य को अन्य ध्वनि के उच्चारण में।
2. किसी की लिखावट घसीट के कारण असमानुपातिक तथा सुडौल होती है तो किसी की लेखन में उपयुक्त गति के अभाव के कारण।
3. किसी के अक्षर-विन्यास पर प्रादेशिकता का गहरा प्रभाव हो सकता है तो किसी में वाचन की अक्षमता या असावधानी आदि।

ऐसी स्थिति में शब्दावली या वर्तनी सुधार के लिए अध्यापक को प्रत्येक छात्र के प्रति व्यक्तिगत ध्यान देने की आवश्यकता है। समय-समय पर छात्रों के अधिगम का मूल्यांकन भी करते रहना चाहिए।

छात्रों की कठिनाइयों को दूर करने के साथ-साथ उनकी निजी विशेष योग्यताओं (श्रव्य-स्मृति— Auditory-memory, दृश्य-स्मृति— Visual-

memory की प्रबलता) का भी लाभ उठाया जाय। आवश्यकतानुसार उनकी इन योग्यताओं का भी उपयोग किया जाये।

इस प्रकार इस विधि के माध्यम से बच्चों को शब्द या वर्ण—विन्यास उनकी लिखावट तथा क्रमानुसार शब्द—प्रयोग की शुद्धता स्पष्टतः दिखती है।

(2) शब्द तथा अर्थ सामंजस्य (Corretation of words and meaning):—

प्रत्येक शब्द का कोई न कोई अर्थ होता है। अर्थ तथा शब्द—ज्ञान (अक्षर—विन्यास, व्युत्पत्ति, वर्ण—रचना) में पारस्परिक संबंध है। छात्रों का जिन शब्दों का अर्थ भी ज्ञात होता है, उनकी वर्तनी में अशुद्धियाँ प्रायः कम ही होती हैं। श्रुतसम भिन्नार्थी शब्दों— अपेक्षा—उपेक्षा, अवलंब—अविलंब, कुल—कूल, कोर—कौर, परिमाण—परिणाम, प्रणाम—प्रमाण, भवन—भुवन आदि की वर्तनी सिखाते समय ध्वनि, वर्ण तथा अर्थ तीनों को एक साथ लिया जाय तो छात्रों को शब्दों के वर्तनी—विम्ब बनाने में अधिक सरलता रहती है।

(3) सर्व सामान्य अशुद्धियों का परिचय (Acquaintance with general mistakes) :—

प्रत्येक क्षेत्र के छात्र दो प्रकार की शब्दावली का प्रयोग करते हैं—

1. उपयोगी या सक्रिय शब्दावली (Active Vocaulary) 2. परिचय या निष्क्रिय शब्दावली (Passive Vocaulary) उत्तरप्रदेश, मध्यप्रदेश अथवा हिंदी भाषी प्रदेशों में जहाँ शिक्षा का माध्यम और मातृभाषा हिंदी है, वहाँ के बच्चे प्रायः भक्तवच्छल, पेटारा, प्रहरी, तुहिनकरण, वसुन्धरा, उच्छ्वास, सुकृत, रेणु आदि का प्रयोग केवल पुस्तक वाचन में प्रयोग करता है। यद्यपि परिचय शब्दावली (Recognisable Vocaulary) की परिधि छात्रों की स्तर—वृद्धि के साथ—साथ घटती जाती है,

अर्थात् ज्यों-ज्यों छात्रों के ज्ञान तथा अनुभव में वृद्धि होती जाती है, वे बहुत से परिचित शब्दों का प्रयोग अपनी दैनिक रचना (मौखिक या लिखित) की अभिव्यक्ति के लिए करने लग जाते हैं।

‘परिचय शब्दावली’ का प्रयोग लेखन में बहुत कम होता है। अतः इस शब्दावली की वर्तनी की शिक्षा देने तथा अभ्यास कराने से लाभ बहुत कम होता है। कक्षा की उपयोगी शब्दावली जो स्तरानुसार भिन्न-भिन्न होती है पर भी ध्यान देने से लेखन में क्रमानुसार सुधार तथा वर्ण-विन्यास प्रयोग में सुविधा होती है। ऐसे में उन्हीं शब्दों को छँटना चाहिए, जिनकी वर्तनी में प्रायः भूलें की जाती हैं। रचना-संशोधन के समय सर्वमान्य अशुद्धियों की सूची बनाने के बाद कक्षा के सभी छात्रों को उन शब्दों का शुद्ध लेखन समझाया जा सकता है।

(4) अशुद्धियों का वर्गीकरण (Classification of Mistakes) :-

वर्तनी की भूलों या शब्दावली सम्बन्धी अशुद्धियों को वर्गीकृत कर लेने से छात्रों की कठिनाई दूर करने में समय तथा श्रम की बचत होती है। प्रत्येक कक्षा के छात्रों द्वारा की जाने वाली वर्तनी-त्रुटियों के वर्ग बना लेने से ध्वनि तथा शब्द-रचना संबंध आसानी से समझाया जा सकता है। कुछ सर्वमान्य वर्ग इस प्रकार हैं—

1. मात्रा-प्रयोग अर्थात् स्वर और व्यंजन का संबंध या प्रयोग।
2. र् व्यंजन पर स्वर उ और ऊ रूप।
3. रेफांकन = धर्म, क्रम, और ट्रक।
4. नासिक्य, अनुस्वार, अनुनासिकता का प्रयोग = अधिकान्ध/अधिकांश, गान्धी/गाँधी, वेदान्त/वेदांत।
5. हल्-भ्रम — महान/महान्, स्वयम्/स्वयंम्।

6. स्वर-भक्ति = धरम/धर्म , प्रषन/प्रज्ञ, सनान/स्नान ।
7. स्वर-लोप = अप्मान/अपमान, आज्कल/आजकल ।
8. आदि-स्वरागम = इस्कूल/स्कूल, इस्तरी/स्त्री ।
9. श, स, ष-भ्रम = विसेष/विषेष, षोक/शोक, सन्तोष/संतोष, षीला/शीला ।
10. न, ण-भ्रम = बन/वन, ब्यापार/व्यापार, वनाबट/बनावट ।
11. अल्पप्राण, महाप्राण-भ्रम = गूमना/घूमना, सादारण/साधारण ।
12. वर्ण-लोप = इकठा/इकट्ठा, उलंघन/उल्लंघन ।
13. शब्द निर्माण-भ्रम = बच्चपन/बचपन, एकतारा/इकतारा ।

(5) अशुद्धियों का चतुर्विधि परिहार या निवारण/ (समाधान) (Four ways of rectification of mistakes):

वर्तनी सम्बन्धी अशुद्धियों के परिहार के लिए आँख, कान, वाणी तथा हाथ चारों इन्द्रियों का समन्वयात्मक सदुपयोग किया जाना हितकर है। विभिन्न दृश्य उपकरणों के माध्यम से छात्र शब्दों की शुद्ध वर्तनी का दृश्य-प्रतिबिम्ब (Visual Image) ग्रहण कर सकता है। अनेक श्रव्य-उपादानों की सहायता से शब्दों की शुद्ध-वर्तनी का श्रव्य-प्रतिबिम्ब (Auditory Image) निर्माण किए जाए। शुद्ध उच्चारण का अनुकरण करते हुए सस्वर वाचन की आदत (Articulatory Habit) डालकर शुद्ध-वर्तनी ज्ञान में सहायता की जाए तथा विभिन्न लेखन-अभ्यासों के द्वारा शुद्ध-लेखन या शब्दावली की आदत डाली जा सकती है।

(6) दृश्य-श्रव्य उपादानों का बहु-प्रयोग (Multiple use of Audio-Visuals)

:- दृश्य-श्रव्य उपादानों के प्रयोग से वर्तनी या शब्दावली शिक्षण को रोचक, मनोरंजक तथा सरस बनाया जा सकता है। इन उपादानों का प्रयोग विभिन्न प्रकार से किया जा सकता है—

1. श्यामपट्ट का प्रयोग –

- (1) वर्तनी–विश्लेषण के लिए।
- (2) छात्रों से लिखवाने के लिए।
- (3) विभिन्न प्रकार की वर्तनी–क्रीड़ाओं (प्रतियोगिताओं) के लिए।
- (4) शुद्ध–वर्तनी अंकित करने के लिए।

2. चार्ट (Chart) का प्रयोग –

- (1) वर्ण–रचना का स्वरूप समझाने के लिए।
- (2) वर्णों के विभिन्न वर्गों (अल्पप्राण–महाप्राण, व्यंजन, अघोष–सघोष व्यंजन, मौखिक अनुनासिक स्वर, मात्रा–प्रयोग, संयुक्ताक्षर) आदि के स्पष्टीकरण के लिए।
- (3) विभिन्न प्रकार की वर्तनी–क्रीड़ाओं (प्रतियोगिताओं) के लिए।
- (4) शुद्ध–वर्तनी अंकित करने के लिए।

3. मॉडल (Model) प्रयोग –

- (1) उच्चारण प्रक्रिया सिखाने या समझाने के लिए विच्छिन्न हो सकने वाले ग्रीव या गर्दन।
- (2) सिर या मस्तिक के मॉडल का उपयोग करके शब्दावली शिक्षण भी हितकर हो सकता है।
- (3) फ्लैश कार्ड या गत्ते के कार्ड = वर्णांकित कार्ड शब्द–विश्लेषण, शब्द–निर्माण के लिए प्रयोग में लाए जा सकते हैं।
- (4) वर्णों, मात्राओं के मॉडल = शब्द बनवाने के लिए कत्ते, सेलोलाइट, लकड़ी या धातु के वर्णों, मात्राओं का सदुपयोग किया जा सकता है।

(5) ग्रामोफ़ोन, लिंग्वफ़ोन, टेपरिकॉर्ड = शुद्ध उच्चारण करे के लिए उपयोगी सिद्ध होंगे।

(6) चित्रपट्ट = वर्ण-रचना, वर्तनी या शब्द-उच्चारण सिखाने के लिए उपयुक्त है।

(7) सूचना-पट = विद्यालय में प्रत्येक कक्षा के बाहर तथा अन्य आवश्यक स्थानों पर

वस्तुओं तथा स्थानों के नाम लिखकर टाँगे जाएँ तो बच्चों के शब्दावली शिक्षण में

उपयुक्त सुविधा होगी।

(8) नीति-वाचन या वचन = छात्रों के उपयोगी या जीवनोपयोगी कुछ नीति वचन भी

दीवारों पर लिखे या लिख कर टाँगे जा सकते हैं, यथा—

सत्यं शिवं सुन्दरम्।

आज का काम कल पर न टालो

बड़ों का सम्मान करो।

बिना ज्ञान के मनुष्य बिना सिंगवाला पशु है।

धैर्य, धर्म और विवेक ही विपत्ति में काम देते हैं।

अध्ययन ज्ञान वर्धक तथा आनंद प्रदायक है।

इन विधियों के माध्यम से शब्दावली शिक्षण के शुद्ध रूपों आदि का निर्माण एवं प्रयोग किया जा सकता है।

इकाई 1 (ग)

पद एवं उसके भेद (संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, अव्यय) :-

वाक्य में प्रयुक्त होने पर शब्द पद बन जाता है और तब लिंग, वचन, पुरुष, कारक, वाच्य और काल के प्रभाव से शब्द की मूल प्रकृति में विकार आ जाता है और कभी नहीं भी होता परन्तु दोनों दशाओं में अनुशासन और अन्विति के कारण उसकी प्रकृति में अंतर आ जाता है। वाक्य-रचना में एक निश्चित व्यवस्था रहती है। इन व्यवस्था के कारण वाक्य के अंतर्गत सभी पद परस्पर एक दूसरे से संबद्ध होते हैं, जैसे—

लड़का जाता है। लड़की जाती है। (लिंग)

लड़का जाता है। लड़के जाते हैं। (वचन)

लिंग और वचन के आधार पर विकार स्पष्ट दिखाई दे रहे हैं।

पद दो प्रकार के होते हैं—

1. विकारी पद
2. अविकारी पद

विकारी पद:- वे पद जिनमें प्रयोग के कारण परिवर्तन या विकार होता है, या हो सकता है। विकारी पद कहलाते हैं। विकारी शब्दों के निम्नलिखित भेद होते हैं—

1. संज्ञापद
2. सर्वनाम पद
3. विशेषण पद
4. क्रिया पद

अविकारी पदः— जिन पदों में लिंग, वचन आदि के कारण कोई परिवर्तन नहीं होता उन्हें अविकारी पद कहते हैं। इन्हें अव्यय कहा जाता है।

संज्ञापद तथा उसकी व्याकरणिक कोटियाँः—

किसी व्यक्ति, स्थान तथा पदार्थ के नाम को द्योतक होने वाले पद को संज्ञापद कहा जाता है। मानक हिंदी के संज्ञापदों को अर्थ की दृष्टि से जातिवाचक, व्यक्तिवाचक, भाववाचक, पदार्थवाचक और समुदाय आदि वर्गों में वर्गीकृत करने से मानक हिंदी की व्याकरणीय रचना में कोई विशेष सहायता नहीं मिलती है। वाक्य में आए हुए इन पदों से संज्ञा पद का संबंध प्रकट करने के लिए लिंग-वचन और कारकीय विभक्तियाँ लगाई जाती हैं। इन्हीं विभक्तियों को संज्ञा की व्याकरणिक कोटियाँ भी कहा जाता है। संज्ञा की ये व्याकरणिक कोटियाँ मानक हिंदी की व्याकरणिक प्रकृति की विशेषता को व्यक्त करती हैं।

संज्ञा के भेदः—

संज्ञा के भेद अनेक आधारों पर किए जाते हैं—

पहला वर्गीकरणः— वस्तु की जीवंतता या अजीवंतता के आधार पर—

1. प्राणीवाचक संज्ञा
2. अप्राणीवाचक संज्ञा

प्राणीवाचक संज्ञाः— लड़का, पक्षी, जानवर, घोड़ा, आदि में जीवन है, ये चल फिर सकते हैं। अतः इन्हें प्राणीवाचक संज्ञा कहेंगे।

अप्राणीवाचक संज्ञाः— पेड़, ईंट, दीवाल आदि में जीवन नहीं है, ये न चल सकते हैं न बोल सकते हैं; इसलिए इन्हें अप्राणीवाचक संज्ञा कहेंगे।

दूसरा वर्गीकरणः— गणना के आधार पर दूसरा वर्गीकरण होता है। आम, अमरूद, पहाड़, पेड़, एक, दो, तीन आदि को हम गिन सकते हैं। किन्तु 'दूध' को हम गिन नहीं सकते, केवल माप सकते हैं। प्रेम-घृणा आदि की भी गिनती नहीं हो सकती।

इस आधार पर संज्ञा के भेद हुए— गणनीय और अगणनीय। इस वर्गीकरण का व्याकरण की दृष्टि से महत्व यह है कि गणनीय संज्ञा वे हैं; जिनके एकवचन और बहुवचन दोनों होते हैं जबकि अगणनीय संज्ञा का प्रयोग हमेशा एक वचन में होता है।

तीसरा वर्गीकरण:—

व्युत्पत्ति के आधार पर किया जाता है। व्युत्पत्ति की दृष्टि से संज्ञा के तीन भेद होते हैं—

1. **रूढ़** — ऐसी संज्ञाएँ जिनके खंड निरर्थक होते हैं, जैसे— 'हाथ'। हाथ शब्द के 'हा' और 'थ' अलग-अलग कर दे तो इनका कुछ भी अर्थ नहीं हो सकता। आम, पेट, मुँह तथा घर आदि रूढ़ संज्ञा के उदाहरण हैं।
2. **यौगिक** — ऐसी संज्ञाएँ जिनके खंड सार्थक होते हैं— जैसे— रसोईघर। रसोईघर के दो सार्थक खंड हैं— 'रसोई' और 'घर'। ये दोनों खंड सार्थक हैं। पाठशाला, विद्यार्थी, पुस्तकालय, हिमालय आदि यौगिक संज्ञा के उदाहरण हैं।
3. **योगरूढ़** — ऐसी संज्ञाएँ जिनके खंड सार्थक हों परंतु जिनका अर्थ खंड-शब्दों से निकलने वाले अर्थ से भिन्न हो— यथा— 'पंकज' के दोनों खंड 'पंक' और 'ज' सार्थक हैं। 'पंक' का अर्थ है— कीचड़ और ज का अर्थ है 'जन्मा हुआ' किंतु पंकज का अर्थ होगा— 'कमल' न कि 'कीचड़ से जन्मा हुआ'। दशानन, देशज्, गजानन इत्यादि उदाहरण अलग से दर्शाया जा सकता है।

चौथा वर्गीकरण:—

अर्थ के आधार पर किया जाता है जो परंपरागत है। इस दृष्टि से संज्ञा के पाँच भेद हैं—

- (1) व्यक्तिवाचक संज्ञा

- (2) जातिवाचक संज्ञा
- (3) समूहवाचक संज्ञा
- (4) द्रव्यवाचक संज्ञा
- (5) भाववाचक संज्ञा

(1) व्यक्तिवाचक संज्ञा:— व्यक्तिवाचक संज्ञा किसी विशेष व्यक्ति, या स्थान का बोध कराती है। जैसे— गंगा, तुलसीदास, पटना, राम, हिमालय आदि। हिंदी में व्यक्तिवाचक संज्ञा की संख्या अधिक है। व्यक्तिवाचक संज्ञाओं में निम्न नाम समाविष्ट होते हैं—

1. व्यक्तियों के अपने नाम — तुलसीदास, नाबाम, महेश, राम आदि।
2. नदियों के नाम — गंगा, गंडक, यमुना आदि।
3. झीलों के नाम — डल, बैकाल इत्यादि।
4. समुद्रों के नाम — प्रशांत महासागर, हिंदमहासागर आदि।
5. पहाड़ों के नाम — आल्प्स, विन्ध्य, हिमालय आदि।
6. गावों के नाम — जोलांग, जुली, मालीगाँव, रून्झून आदि।
7. नगरों के नाम — नाहारलागुन, ईटानगर, बोमडिला, जीरो आदि।
8. सड़कों, दुकानों, प्रकाशनों के नाम — महात्मा गांधी राजपथ, भारती-भवन रोड़ इत्यादि।
9. महादेशों के नाम — एशिया, यूरोप आदि।
10. देशों के नाम — चीन, भारतवर्ष, श्रीलंका, इंडोनेशिया, भूटान आदि।
11. पुस्तकों के नाम — रामचरित मानस, रामायण, सूरसागर आदि।
12. पत्र-पत्रिकाओं के नाम — दिनमान, रंगभारती, सुलेखा इत्यादि।
13. त्योहारों, ऐतिहासिक घटनाओं के नाम — गणतंत्र दिवस, बालदिवस, रक्षाबंधन, शिक्षक-दिवस, होली, गोलमेज इत्यादि।

14. ग्रह-नक्षत्रों के नाम – चंद्र, रोहिणी, सूर्य आदि।

15. महीनों के नाम – आश्विन, कार्तिक, ज्येष्ठ, जनवरी।

16. दिनों के नाम – सोमवार, मंगलवार, बुधवार इत्यादि।

17. राज्यों के नाम – अरुणाचल प्रदेश, असम, बिहार, उत्तर प्रदेश इत्यादि।

(2) जातिवाचक संज्ञा:— जातिवाचक संज्ञा किसी वस्तु या प्राणी की सम्पूर्ण जाति का बोध कराती है। जैसे— गाय, नदी, पहाड़, मनुष्य आदि।

‘गाय’ किसी एक गाय को नहीं कहते, अपितु यह शब्द सम्पूर्ण गोजाति के लिए प्रयुक्त होता है।

जातिवाचक संज्ञाओं में निम्नलिखित समाविष्ट होते हैं—

1. पशुओं, पक्षियों एवं कीट-पतंगों के नाम – खटमल, गाय, घोड़ा, चील आदि।
2. फलों, सब्जियों तथा फूलों के नाम – आम, केला, पालक, जूही आदि।
3. पहनने, ओढ़ने, विछाने आदि के सामान – कुर्ता, जूता, पायजामा, तोशक आदि।
4. अन्न, मसाले मिठाई आदि पदार्थों के नाम – गेहूँ, चावल, जलेबी, तेजपात आदि।
5. विभिन्न सामग्रियों के नाम – आलमारी, कुर्सी, घड़ी इत्यादि।
6. सवारियों के नाम – नाव, मोटर, रेल, साइकिल आदि।
7. संबंधियों के नाम – बहन, भाई आदि।
8. व्यावसायिक पदों एवं पदाधिकारियों के नाम – दर्जी, धोबी, भंगी, राज्यपाल आदि।

इस सारणी से व्यक्तिवाचक और जातिवाचक का भेद और भी स्पष्ट हो जाएगा—

व्यक्तिवाचक तुलसीदास सीता गंगा कलकत्ता हिमालय भारतवर्ष डल
जातिवाचक कवि स्त्री नदी नगर पहाड़ देश झील

(3) **समूहवाचक संज्ञा**— समूहवाचक संज्ञा पदार्थों के समूह का बोध कराती है। यथा गिरोह, झब्बा, झुंड, दल, सभा, सेना आदि।

ये शब्द किसी एक व्यक्ति या वस्तु का बोध न कराकर अनेक का— उनके समूह का बोध कराते हैं।

(4) **द्रव्यवाचक संज्ञा**— द्रव्यवाचक संज्ञा किसी धातु या द्रव्य का बोध कराती है। जैसे— घी, चाँदी, पानी, पीतल, सोना आदि। द्रव्यवाचक संज्ञा से निर्मित पदार्थ जातिवाचक संज्ञा होते हैं।

टिप्पणी— कुछ विद्वानों का मानना है कि संज्ञा के समूहवाचक तथा द्रव्यवाचक जैसे दो अलग भेद मानने की आवश्यकता नहीं है। वस्तुतः इन दोनों का समाहार जातिवाचक संज्ञा में ही हो गया है।

(5) **भाववाचक संज्ञा**— भाववाचक संज्ञा व्यक्ति या पदार्थों के धर्म या गुण का बोध कराती है; जैसे— अच्छाई, चौड़ाई, मिठास, लम्बाई, वीरता इत्यादि।

भाववाचक संज्ञा में निम्नलिखित समाविष्ट होते हैं—

1. **गुण**— कुषाग्रता, चतुराई, सौन्दर्य इत्यादि।
2. **भाव**— कृपणता, मित्रता, शत्रुता इत्यादि।
3. **अवस्था**— जवानी, बचपन, बुढ़ापा आदि।
4. **माप**— ऊँचाई, चौड़ाई लम्बाई आदि।
5. **क्रिया**— दौड़धूप, पढ़ाई, लिखाई आदि।
6. **गति**— फुर्ती, शीघ्रता, सुस्ती आदि।
7. **स्वाद**— कड़वापन, कसैलापन, मिठास आदि।

8. अमूर्त भावनाएँ— करुणा, क्षोभ, दया आदि ।

भाववाचक संज्ञाओं का निर्माण:—

भाववाचक संज्ञाओं का निर्माण प्रायः सभी शब्द-भेदों से होता है। जैसे— संज्ञा के दो प्रमुख भेदों जातिवाचक और व्यक्तिवाचक से भाववाचक संज्ञा बनाई जाती है।

1. **जातिवाचक संज्ञा से:—** दूत-दैत्य, नर-नरता, नारी-नारीत्व, बूढ़ा-बुढ़ापा, मनुष्य-मनुष्यता इत्यादि ।
2. **व्यक्तिवाचक संज्ञा से:—** राम-रामत्व, रावण-रावणत्वं, शिव-शिवत्व इत्यादि ।
3. **सर्वनाम से:—** अपना-अपनत्व, अहं-अहंकार, मम-ममता इत्यादि ।
4. **विशेषण से:—** कठोर-कठोरता, गुरु-गुरुता, बहुत-बहुतायत, सुन्दर-सुन्दरता या सौन्दर्य आदि ।
5. **क्रिया से:—** खेलना-खेल, दिखाना-दिखावा, पढ़ना-पढ़ाई, बचना-बचत, बूझना-बुझौवल, मारना-मार, मिलना-मिलाप इत्यादि ।
6. **अव्यय से:—** समीप-सामीप्य, दूर से दूरी आदि ।

लिंग – Gender:

लिंग का अर्थ है चिन्ह। लिंग शब्द के उस चिन्ह को कहते हैं जिससे वस्तु के पुरुष या स्त्री होने की कल्पना हो। अर्थात् जिस चिन्ह से वस्तु के स्त्रीलिंग या पुलिंग होने की कल्पना हो। अर्थात् जिस चिन्ह से वस्तु के स्त्रीलिंग या पुलिंग होने का बोध हो, उसे लिंग कहते हैं।

भेद— हिंदी में मुख्यतः दो लिंग हैं— (1) पुलिंग (2) स्त्रीलिंग

(1) **पुलिंगः—** पुलिंग शब्द 'पु' और 'लिंग' के योग से बना है। पुलिंग संज्ञा के उस रूप को कहते हैं जिससे उसके पुरुष होने का ज्ञान हो। जैसे— नाबाम, तापांग, राम, श्याम आदि।

(2) **स्त्रीलिंगः—** स्त्रीलिंग शब्द 'स्त्री' और 'लिंग' के योग से बना है। 'स्त्रीलिंग' संज्ञा के उस रूप को कहते हैं जिससे उसके स्त्री होने का ज्ञान हो। जैसे— बुई, सीता, ब्राह्मणी इत्यादि।

लिंग—निर्णय के कुछ नियमः

- i) मनुष्य और बड़े पशुओं में नर पुलिंग होते हैं और नारियाँ स्त्रीलिंग। यथा— लड़का, युवक, बूढ़ा, हाथी और ऊँट।
- ii) द्वन्द्व समास के प्राणीवाचक शब्द पुलिंग होते हैं। यथा— नर—नारी, भाई—बहन, राधा—कृष्ण आदि।
- iii) संस्कृत के अकारांत तत्सम शब्द प्रायः पुलिंग होते हैं। जैसे— अध्याय, अभिप्राय, उपाय, अंधकार, व्यय इत्यादि। 'पुस्तक' का स्त्रीलिंग में व्यवहार होता है।
- iv) अप्राणिवाचक शब्दों या संज्ञाओं का लिंग—निर्णय रूप के आधार पर होता है। जैसे—

वनस्पति — अनार, आम, खजूर, पीपल, ताड़, अषोक, बाँस आदि।

तरल पदार्थ — दूध, दही, तेल, पानी, शर्बत आदि।

धातु — एल्युमिनियम, पीतल, रजत, लोहा, सोना आदि।

मसाला — जीरा, तेजपात, आदि।

अन्न — उड़द, गेहूँ, चना आदि।

पर्वत — हिमालय, अमरकण्टक, हिन्दूकुश आदि।

दिन — रवि, सोम, मंगल, बुध आदि।

रत्न – हीरा, मोती, नीलम, मूँगा आदि।

नक्षत्र – मंगल, बुध, चंद्र, सूर्य आदि।

वनस्पति आदि में से कुछ शब्द इमली, दाल, मकई, मिर्च आदि स्त्रीलिंग में प्रयुक्त होते हैं।

- v) हिंदी की वे भाववाचक संज्ञाएँ पुलिंग होती हैं जिनके अंत में आ, आव, आवा, ना, पा अथवा पन् पाया जाता है। यथा— घेरा, बचाव, भुलावा, भरना, बुढ़ापा, लड़कपन आदि।
- vi) तत्सम शब्दों को छोड़कर हिंदी की वे संज्ञाएँ जिनके अंत में आकार हो परन्तु 'इया' प्रत्यय न हो पुलिंग होते हैं। जैसे— रुपया, बच्चा, छाता, आटा, कपड़ा आदि।

स्त्रीलिंग शब्दों की पहचान:

(क) जिन संस्कृत संज्ञाओं के अंत में आ, इ अथवा उ हो वे स्त्रीलिंग होती हैं।
यथा—

आ – क्षमा, दया, छाया, कृपा, करुणा, वंदना, याचना आदि।

इ – सिद्धि, रीति, मति, केलि इत्यादि।

उ – मृत्यु, रेणु, धेनु आदि।

(ख) ट, आवट और आहट प्रत्यांत भाववाचक संज्ञाएँ स्त्रीलिंग हैं।

जैसे— झंझट, बनावट, रूकावट, सजावट, चिकनाहट आदि।

(ग) हिंदी की वे संस्कृत से भिन्न भाववाचक संज्ञाएँ जिनके अंत में 'अ' अथवा 'म' हो। यथा— चमक, दमक, पुकार, समझ, दौड़, चाल, उलझन, जलन आदि।

(घ) संस्कृत को छोड़कर हिंदी की वे संज्ञाएँ जिनके अंत में ई, इया, ऊ, ख, त अथवा स हो।

ई – उदासी, टोपी, लड़की, चोटी, मोटी इत्यादि।

इया – खटिया, मचिया, पुड़िया, बुढ़िया इत्यादि ।

ऊ – गेरू, लू इत्यादि ।

ख – ईख, भूख, आँख, साख, राख, कोख आदि ।

त – बात, रात, लात, छत आदि ।

स – आस, प्यास, साँस आदि ।

अपवाद—

ई – जी, पानी, दही, मोती, हाथी (पुल्लिंग)

इया – पहिया (पुल्लिंग)

ऊ – आलू, रतालू, आँसू, टेसू (पुल्लिंग)

ख – रूख, ऊख, पाख (पुल्लिंग)

त – भात, गात, दाँत, खेत, सूत, पूत (पुल्लिंग)

स – रास, निकास, (पुल्लिंग)

(ड.) सोना, सिंधु, दामोदर तथा ब्रह्मपुत्र (नदों) को छोड़कर अन्य नदियों तथा तिथियों के नाम स्त्रीलिंग हैं जैसे— गंगा, यमुना, प्रतिपदा, दूज, तीज, चौथ, पंचमी आदि ।

वाक्य प्रयोग द्वारा लिंग—निर्णय:

वाक्य प्रयोग द्वारा लिंग निर्णय अर्थात् स्त्रीलिंग—पुल्लिंग का ज्ञान तीन विधियों द्वारा किया जा सकता है । क्रिया द्वारा, विशेषण द्वारा, संबंध कारक द्वारा ।

(1) क्रिया द्वारा:—

गाय आती है । — 'आती' क्रिया से स्त्रीलिंग का बोध होना ।

बछड़ा दौड़ता है । — 'दौड़ता' क्रिया से पुल्लिंग का बोध होना ।

(2) विशेषण द्वारा:—

काली बकरी। — बकरी के लिए काली, स्त्रीलिंग का बोध होना।

काला घोड़ा या मिथुन। — काला घोड़ा या मिथुन के लिए पुलिंग का बोध होना।

(3) संबंध कारक द्वारा:—

राम की बहन है। — की के द्वारा बहन का बोध स्त्रीलिंग के रूप में।

राम का भाई है। — का के द्वारा भाई का बोध पुलिंग के रूप में।

वचन:

संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण और क्रिया के जिस रूप से संख्या का बोध हो उसे 'वचन' कहते हैं। दूसरे शब्दों में, शब्दों के संख्याबोधक विकारी रूप का नाम वचन है। 'वचन' का अर्थ है 'बोली' किंतु व्याकरण में वचन का अर्थ है संख्या।

वचन के भेद:— वचन के दो भेद हैं— (1) एक वचन

(2) बहुवचन

(1) एक वचन:—

विकारी शब्द के जिस रूप से एक पदार्थ या व्यक्ति का बोध होता है उसे 'एकवचन' कहते हैं। जैसे— नदी, लड़का, बच्चा आदि।

(2) बहुवचन:—

विकारी शब्द के जिस रूप से अधिक पदार्थों एवं व्यक्तियों का बोध होता है उसे 'बहुवचन' कहते हैं। जैसे— नदियाँ, लड़के, बच्चे आदि।

वचन के रूपांतरः—

वचन के कारण सभी शब्दों— संज्ञा, सर्वनाम, क्रिया और विषेषण के रूप विकृत होते हैं किंतु सर्वनाम, विषेषण और क्रिया के रूप मूलतः इनसे संबद्ध संज्ञा पर ही आश्रित रहते हैं। इसलिए 'वचन' में संज्ञाशब्दों का रूपांतर ही प्रमुखता रखता है।

वचन के अधीन संज्ञा के रूप दो तरह से परिवर्तित होते हैं—

- (1) विभक्ति रहित
- (2) विभक्ति सहित

(1) विभक्ति रहितः—

वाक्य में कभी संज्ञाओं के बाद विभक्ति चिह्नों का प्रयोग नहीं किया जात कर्त्ता और कर्म में विशेष रूप से यह बात देखी जाती है। जैसे बालक खेलते हैं। दस आम लाओ। इन दोनों वाक्यों में 'बालक' के साथ कर्त्त के 'ने' चिन्ह और 'आम' के साथ कर्म के 'को' चिन्ह का प्रयोग नहीं हुआ है। इसी तरह 'वे बम्बई रहते हैं', में बम्बई के बाद अधिकरण के 'में' चिन्ह का अभाव है। संज्ञा के साथ जब विभक्ति चिन्हों का प्रयोग नहीं होता है तब उसे 'विभक्तिरहित' संज्ञा कहते हैं।

विभक्ति रहित संज्ञाओं के बहुवचन बनाने के नियमः—

(क) कर्त्ताकारक में पुलिङ्ग संज्ञा के आकारांत को 'एकारांत' कर देने से बहुवचन बनाते हैं। जैसे—

एकवचन

लड़का

बच्चा

कपड़ा

बहुवचन

लड़के

बच्चे

कपड़े

जैसे— कपड़ा फटा → कपड़े फटे ।
लड़का आया → लड़के आए ।

अपवाद—

कुछ ऐसी भी पुलिङ्ग आकारांत संज्ञाएँ हैं जिनके रूप ऐसी स्थिति में दोनों वचनों में एक से रहते हैं। ये कुछ शब्द हिंदी के संबंधीवाचक तथा संस्कृत के वैसे ऋकार, नकार और सकार अंतवाले हैं जो आकारांत हो जाते हैं। जैसे मामा, नाना, बाबा, माता—पिता, योद्धा, युवा, आत्मा, देवता आदि ।

निम्नलिखित पुलिङ्ग शब्दों के एकवचन और बहुवचन दोनों समान होते हैं—

अकारांत	—	बालक, घर, नर आदि ।
इकारांत	—	ऋषि, कवि, मुनि आदि ।
ईकारांत	—	भाई, स्वामी, सिपाही आदि ।
उकारांत	—	गुरु, साधु, कृपालु आदि ।
ऊकारांत	—	डाकू, आलू, उल्लू आदि ।
एकारांत	—	दूबे, चौबे आदि ।
ओकारांत	—	कोदो, रासो आदि ।
औकारांत	—	जौ आदि ।

(ख) आकारांत स्त्रीलिङ्ग एक—वचन संज्ञा—शब्द के अंत में 'एँ' लगाने से ऐसे कर्त्ताकारक में बहुवचन बनता है ।

एकवचन	बहुवचन
शाखा	शाखाएँ
कथा	कथाएँ

लता	लताएँ
घटा	घटाएँ
चबा	चबाएँ

- (ग) अकारांत स्त्रीलिंग संज्ञा का बहुवचन संज्ञा के अंतिम 'अ' को 'ए' कर देने से बनता है।

एकवचन	बहुवचन
गाय	गाएँ
बात	बातें
बहन	बहनें

- (घ) इकारांत या ईकारांत स्त्रीलिंग संज्ञाओं के अंत में 'ई' को ह्रस्व कर 'याँ' जोड़ने अर्थात् 'इ' या 'ई' को 'इयाँ' कर देने से बहुवचन बनता है। जैसे—

एकवचन	बहुवचन
तिथि	तिथियाँ
रीति	रीतियाँ
नीति	नीतियाँ

- (ङ) जिन स्त्रीलिंग संज्ञाओं के अंत में 'या' आता है उनमें या के ऊपर चन्द्रबिन्दु लगाकर अर्थात् या को याँ कर बहुवचन बनता है। जैसे—

एकवचन	बहुवचन
चिड़िया	चिड़ियाँ
गुड़िया	गुड़ियाँ

- (च) अ—आ, इ—ई के अलावा अन्य मात्राओं से अंत होने वाली स्त्रीलिंग संज्ञाओं के अंत में 'ऐँ' जोड़कर बहुवचन बनाया जाता है। अंतिम स्वर 'ऊ' हुआ तो उसे ह्रस्व कर दिया जाता है। जैसे—

एकवचन

बहुवचन

बहू

बहुएँ

वस्तु

वस्तुएँ

(2) विभक्ति संज्ञाओं के बहुवचन बनाने के नियम:—

जिन संज्ञाओं के साथ 'ने, के, से' आदि विभक्ति चिन्हों का प्रयोग किया जाता है उन्हें विभक्ति सहित संज्ञाएँ कहते हैं। इस तरह की संज्ञाओं से बहुवचन बनाने के कुछ नियम इस प्रकार हैं—

- (क) अकारांत, आकारांत (संस्कृत शब्दों को छोड़कर) तथा 'एकारांत' संज्ञाओं में अंतिम 'अ, आ, या ए' के स्थान पर बहुवचन बनाने में 'ओ' कर दिया जाता है। जैसे—

एकवचन

बहुवचन

घर

घरों

लड़का

लड़कों

कर

करों

विभक्ति के साथ प्रयोग—

घरों का घेरा।

लड़कों ने कहा।

करों की चोरी।

- (ख) सभी इकारांत और ईकारांत संज्ञाओं का बहुवचन बनाने के लिए अंत में 'यों' जोड़ा जाता है। यहाँ भी 'यों' जोड़ने के पहले ईकार को हृस्व करना पड़ता है। जैसे—

एकवचन	बहुवचन
मुनि	मुनियों
गली	गलियों
नदी	नदियों
परी	परियों
कली	कलियों

वचन—संबंधी विशेष निर्देश:—

1. 'प्रत्येक', तथा 'हरेक' शब्द का प्रयोग प्रायः एक वचन में होता है। जैसे— प्रत्येक व्यक्ति यही कहेगा।
2. भाववाचक और गुणवाचक संज्ञाओं का प्रयोग एकवचन में होता है। जैसे— मैं उसकी सज्जनता पर मुग्ध हूँ।
3. द्रव्यवाचक संज्ञाओं का प्रयोग एकवचन में होता है। यथा— उसके पास सोना बहुत है।
4. आदरार्थ प्रयोग सदा बहुवचन में होता है। अर्थ भले ही एकवचन हो। यथा— राम सबके प्यारे थे।

कारक:—

संज्ञा अथवा सर्वनाम का वह रूप जो वाक्य के अन्य शब्दों, विशेषतः क्रिया से अपना संबंध प्रकट करता है, 'कारक' कहलाता है।

प्रत्येक पूर्ण वाक्य में संज्ञा तथा सर्वनाम का मुख्य रूप से क्रिया से और गौण रूप से आपस में भी संबंध रहता है। जैसे— 'राम ने रावण को मारा' में 'मारा' (क्रिया) का संबंध 'राम' और 'रावण' दोनों से है। किसने मारा? राम ने! किसे मारा? रावण को। राम और रावण का क्रिया से संबंध तो है ही, साथ ही इन दोनों में भी

एक संबंध है। वाक्य में पाए जाने वाले शब्द परस्पर सम्बद्ध होते हैं। इस संबंध को बताना ही कारकों का काम है।

कारक के भेद:—

हिंदी में आठ कारक हैं। इन कारकों के साथ क्रमशः गणना के रूप में आने वाले प्रथमा, द्वितीया, तृतीया, चतुर्थी आदि शब्द विभक्ति कहे जाते हैं। कारक के भेद निम्नलिखित हैं—

विभक्ति	कारक	चिन्ह	प्रयोग
प्रथमा	कर्त्ता	ने	नाबाम ने उसे पुस्तक दी।
द्वितीया	कर्म	को	राम ने श्याम को अपनी किताब दी।
तृतीया	करण	से	मैं कलम से लिखता हूँ।
चतुर्थी	सम्प्रदान	को, के लिए	राम ने राजीव को गाय दी
पंचमी	अपादान	से	पेड़ से पत्ता गिरता है।
षष्ठी	संबंध कारक का, की, के		राम की गाय चरती है।
सप्तमीअधिकरण	में, पै, पर		कोयल पेड़ पर बैठी है।
			राम और श्याम में मित्रता थी।
संबोधन कारक	ओ, अरे, भो,	अरे!	श्याम तुझे क्या हो गया है।
	अरे, अजी	हे	भगवान, इस गरीब की रक्षा कर।

कारक चिन्हों को 'परसर्ग' भी कहते हैं। 'पर' का अर्थ है 'पीछे' और 'सर्ग' का अर्थ है 'जुड़ना'— ये संज्ञा या सर्वनाम के बाद जुड़ते हैं।

1) कर्त्ताकारक:—

‘कर्त्ता’ का अर्थ है, करने वाला। जो कोई क्रिया करता है उसे क्रिया का ‘कर्त्ता’ कहा जाता है। जैसे— कृष्ण ने गाया; सोहन जाता है। यहाँ ‘कृष्ण’ और ‘सोहन’ कर्त्ता हैं, क्योंकि उन्हीं के द्वारा क्रिया सम्पादित हो रही है।

2) कर्मकारक:—

जिस पदार्थ पर कर्त्ता की क्रिया का फल पड़े उसे ‘कर्मकारक’ कहते हैं। जैसे— हरिमोहन ने परिष्कार को पीटा। इस वाक्य में कर्त्ता ‘हरिमोहन’ की क्रिया ‘पीटना’ का फल परिष्कार पर पड़ता है। अर्थात् यहाँ परिष्कार पीटा जाता है, अतः परिष्कार को कर्म कहा जाएगा।

3) करण कारक:—

जो क्रिया की सिद्धि में साधन के रूप में काम आए उसे ‘करण कारक’ कहते हैं। जैसे— मैं कलम से लिखता हूँ। रमेश कान से सुनता है। यहाँ ‘कलम से’ और ‘कान से’ करण कारक है।

4) संप्रदान कारक:—

जिसके लिए कुछ किया जाय या जिसे कुछ दिया जाय उसे संप्रदान कारक कहते हैं। जैसे— राम ने राजीव को पुस्तक दी। इस वाक्य में ‘राजीव को’ संप्रदान कारक है क्योंकि पुस्तक उसे दी गयी है।

5) अपादान कारक:—

जिससे कोई वस्तु अलग हो उसे अपादान कारक कहते हैं। जैसे— श्यामा घर से आती है, पेड़ से पत्ते गिरते हैं। इन दोनों वाक्यों में ‘पेड़ से’ और ‘घर से’ अपादान कारक है, क्योंकि गिरते समय पत्ते पेड़ से अलग हो जाते हैं और आते समय मोहन अपने घर से।

6) संबंध कारक:—

जिस संज्ञा और सर्वनाम से किसी दूसरे शब्द का संबंध या लगाव जान पड़े उसे संबंध कारक कहते हैं। जैसे— राम की गाय चरती है। यहाँ 'राम की गाय' में 'गाय' का संबंध 'राम' से है। अतः 'राम की' को संबंध कारक कहा जाएगा। (अन्य कारकों का संबंध मुख्य रूप से क्रिया के साथ होता है और साधारण रूप से अन्य संज्ञाओं के साथ, परंतु संबंध कारक का संबंध मुख्य रूप से संज्ञाओं के साथ ही होता है, क्रिया के साथ नहीं)

7) अधिकरण कारक:—

जिससे क्रिया के आधार का ज्ञान हो उसे अधिकरण कारक कहते हैं। जैसे छत पर श्यामा सोई है। इस वाक्य में 'छत पर' अधिकरण कारक है, क्योंकि श्यामा को सोने के लिए छत आधार का काम किया है।

8) संबोधन कारक:—

संज्ञा के जिस रूप से किसी को पुकारने या सचेत करने आदि का भाव मालूम हो उसे 'संबंधबोधन कारक' कहते हैं। जैसे— अरे श्याम, तुझे क्या हो गया है; हे भगवान, इस गरीब की रक्षा कर। इन वाक्यों में 'अरे श्याम' और 'हे भगवान', संबोधन कारक है, क्योंकि इन पदों द्वारा दोनों को पुकारा जा रहा है। संबोधन का संबंध वाक्य की क्रिया से नहीं होता। यह बिना चिन्ह के भी होता है। जैसे— राम, क्षमा करो! यहाँ 'राम' संबोधन कारक है।

कर्त्ता के 'ने' चिन्ह का प्रयोग:—

कर्त्ता कारक की विभक्ति 'ने' है। बिना विभक्ति के भी कर्त्ताकारक का प्रयोग होता है। निम्नलिखित अवस्थाओं में कर्त्ता के 'ने' चिन्ह का प्रयोग होता है—

- (1) सकर्मक क्रियाओं में भूतकाल के सामान्य, आसन्न पूर्ण, संदिग्ध भेदों में 'ने' का प्रयोग किया जाता है—

सामान्य भूत — मैंने पुस्तक पढ़ी ।

आसन्न भूत — मैंने पुस्तक पढ़ी है ।

पूर्ण भूत — मैंने पुस्तक पढ़ी थी ।

संदिग्ध भूत — मैंने पुस्तक पढ़ी होगी ।

- (2) संयुक्त क्रिया का अंतिम खंड सकर्मक रहने पर उपर्युक्त भूतकाल के भेदों में कर्ता के साथ 'ने' चिन्ह का प्रयोग होता है— मैंने जी भर कर खेल लिया ।
- (3) जब अकर्मक क्रिया सकर्मक बन जाय तो उपर्युक्त भूतकाल भेदों में कर्ता में 'ने' चिन्ह का प्रयोग होता है, अन्यथा नहीं । जैसे—
उसने लड़ाई लड़ी ।
उसने चाल चली है ।
- (4) अनुमति बोधक क्रिया का रूप जब सकर्मक की तरह होता है तब कर्ता में 'ने' का प्रयोग भूतकाल में होता है । जैसे— उसने मुझे न बोलने दिया, न भागने ।
- (5) इच्छाबोधक भूतकालिक क्रिया के कर्ता में 'ने' चिन्ह आता है । जैसे—
मैंने भाषण सुनना चाहा ।

'से' का प्रयोग:—

- 1) 'से' करण और अपादान दोनों कारकों का चिन्ह है । साधन बनने का भाव होने पर 'करण' माना जाएगा, अलगाव का अर्थ होने पर 'अपादान' । जैसे—
राम चाकू से कलम बनाता है । करण कारक — साधन बनने का भाव ।
पेड़ से आम गिरा । अपादान कारक — अलग होने का भाव ।
- 2) विभक्ति कर्ताकारक में तब लगती है जब अशक्ति प्रगट करनी हो । ऐसी स्थिति में क्रिया कर्मवाच्य या भाववाच्य होती है । यथा—
मुझसे रोटी नहीं खाई जाती ।

- 3) कर्मकारक में इसका प्रयोग तब होता है जब क्रिया द्विकर्मक होती है। यथा—
मैं तुमसे एक बात कहूँगा।
- 4) 'समय' का बोध कराने के लिए 'से' का प्रयोग होता है। जैसे—
राम शनिवार से बीमार है। यहाँ करण नहीं, अपादान का प्रयोग है।
- 5) 'से' का प्रयोग तुलनात्मक अर्थ में भी होता है। जैसे— राम श्याम से अच्छा है। यहाँ अपादान का प्रयोग है।
- 6) 'से' से दिषा का बोध भी कराया जाता है। जैसे— गया पटना से दक्षिण है।
- 7) 'से' का प्रयोग कारण बतलाने के अर्थ में भी होता है। यथा—
वह चेचक से मर गया।
वह डेंगू से मर गया। यहाँ करण कारक है।

'को' का प्रयोग:—

- 'को' कारक—चिन्ह का प्रयोग निम्नलिखित अवस्थाओं में होता है—
- 1) 'को' विभक्ति का प्रयोग कर्मकारक में होता है। जैसे— उसने चोर को पकड़ा।
 - 2) 'को' विभक्ति का प्रयोग संप्रदान कारक से भी होता है। जैसे— पिताजी ने बच्चे को पुस्तकें दीं।
 - 3) क्रिया की अनिवार्यता प्रकट करनी हो तो कर्त्ताकारक में भी 'को' विभक्ति लगती है। जैसे— तुमको कल स्टेप्शन जाना होगा।
 - 4) मानसिक आवेगों में भी कर्त्ता में 'को' चिन्ह का प्रयोग होता है। जैसे— तुमको भूख लगी है।
 - 5) प्रेरणार्थक क्रिया के गौण कर्म में 'को' का प्रयोग होता है। जैसे— पिता पुत्र को पुस्तक पढ़ाता है।
 - 6) अधिकरण में समयसूचक शब्द के साथ 'को' चिन्ह का प्रयोग किया जाता है। यथा— वह रात को आया था।

- 7) 'मन', 'जी' आदि के योग में भी इसका प्रयोग होता है। जैसे— वेदांत पढ़ने को मन करता है। गाने को जी होता है।

'में' या 'पर' का प्रयोग:—

'में' का प्रयोग निम्नलिखित अवस्थाओं में होता है—

- 1) 'में' अधिकरणकारक में लगता है और स्थान के भीतर का भाव व्यक्त करता है। जैसे— घड़े में पानी है। वह कमरे में है।
- 2) 'में' का प्रयोग किसी वस्तु का मूल्य बताने में भी किया जाता है। जैसे— यह पुस्तक मैंने पाँच रुपये में खरीदी है।
- 3) घृणा, प्रेम, वैर आदि का भाव प्रकट करने के लिए भी 'में' चिन्ह का प्रयोग किया जाता है। जैसे— राम और श्याम में मित्रता है।
- 4) 'में' से समय का बोध भी कराया जाता है। यथा— मैं रात में पढ़ता हूँ।

'पर' का प्रयोग निम्नलिखित अवस्थाओं में होता है।

- 1) 'पर' से ऊपर का बोध कराया जाता है। जैसे— छत पर एक चिड़िया है।
- 2) समय का बोध कराने के लिए भी इसका प्रयोग किया जाता है। यथा— मोहन ठीक समय पर आया।
- 3) 'पर' का प्रयोग मूल्य बताने के लिए भी होता है और इससे 'के लिए' का बोध होता है। जैसे— आजकल नेता रुपयों पर बिकते हैं।

सर्वनाम (Pronoun) :—

संज्ञाओं के स्थान पर उनके प्रतिनिधि के रूप में जिन शब्दों का प्रयोग किया जाता है उन्हें सर्वनाम कहते हैं। जैसे— "राम परीक्षा नहीं दे सका, क्योंकि वह बीमार हो गया था।" इस वाक्य में 'वह' का प्रयोग 'राम' के लिए हुआ है। अतः 'वह' शब्द सर्वनाम कहा जाएगा। वाक्य में यदि सर्वनामों का प्रयोग न किया जाय

तो संज्ञा का प्रयोग बार-बार होने लगेगा जिससे वाक्य की सुंदरता नष्ट हो जाएगी अर्थात्— सर्वनाम संज्ञा के पुनरुक्ति-दोष से बचाता है। इस प्रकार, हिंदी में— मैं, तु, आप, यह, वह, जो, सो, कोई, कुछ, कौन एवं क्या सर्वनाम हैं।

सर्वनाम के भेदः—

सर्वनाम के छह भेद हैं—

1. पुरुषवाचक 2. निश्चयवाचक
3. अनिश्चयवाचक 4. प्रश्नवाचक
5. संबंधवाचक 6. निजवाचक

1. पुरुषवाचक सर्वनामः—

जिस सर्वनाम से पुरुष अर्थात् बातचीत या लेख के क्रम में बोलने वाले, सुनने वाले या जिसके विषय में कहा जाय उसका ज्ञान हो, उसे पुरुष वाचक सर्वनाम कहते हैं। जैसे— मैंने तुम्हें उसकी पुस्तक दी। इस वाक्य में 'मैं' कहने वाले के लिए, 'तुम' सुनने वाले के लिए, तथा 'उस' जिसकी चर्चा चल रही है, उसके लिए आया है। अतः ये तीनों पुरुषवाचक सर्वनाम कहे जाएंगे।

पुरुषवाचक सर्वनाम के भेदः—

पुरुषवाचक सर्वनाम के तीन भेद हैं—

(1) उत्तम पुरुष (2) मध्यम पुरुष (3) अन्यपुरुष या प्रथम पुरुष

(1) **उत्तम पुरुषः—** बातचीत या लेख के क्रम में जो बोलता या लिखत है उसे 'उत्तम पुरुष' कहते हैं। जैसे— मैं, हम।

(2) **मध्यम पुरुषः—** जिसे संबोधित कर कहा या लिखा जाता है उसे 'मध्यम पुरुष' कहते हैं। जैसे तू, तुम, आप।

(3) **अन्यपुरुष या प्रथम पुरुषः—** जिसके विषय में कुछ कहा या लिखा जाता है उसे अन्य पुरुष या प्रथम पुरुष कहते हैं। जैसे— वह, वे, यह, ये, सो, जो, कुछ, कौन, क्या, कोई आदि।

2. निश्चयवाचक सर्वनामः—

जिस सर्वनाम से किसी निश्चित पदार्थ का ज्ञान हो उसे 'निश्चयवाचक सर्वनाम' कहते हैं। जैसे— वह बहुत अच्छा लड़का है। यह गाय खूब दूध देती है। इन दोनों वाक्यों में 'वह' और 'यह' निश्चयवाचक सर्वनाम हैं। निश्चयवाचक सर्वनाम के भी दो भेद होते हैं—

(1) निकटवर्ती पदार्थ का वाचक सर्वनाम। (2) दूरवर्ती पदार्थ का वाचक सर्वनाम

(1) **निकटवर्ती पदार्थ का वाचक सर्वनामः—** यह निकट के पदार्थों का ज्ञान कराता है। जैसे— यह।

(2) **दूरवर्ती पदार्थ का वाचक सर्वनामः—** इससे दूर के पदार्थों का बोध होता है। जैसे—वह।

3. अनिश्चयवाचक सर्वनामः—

जो सर्वनाम किसी निश्चित पदार्थ का ज्ञान न कराएँ उसे 'अनिश्चय वाचक सर्वनाम' कहते हैं। जैसे— कोई आ रहा है। कुछ खा लो। इन दोनों वाक्यों में 'कोई' और 'कुछ' दोनों ही अनिश्चित व्यक्ति या वस्तु के लिए आए हैं। अतः इन्हें अनिश्चयवाचक सर्वनाम कहेंगे।

अनिश्चयवाचक सर्वनाम भी दो होते हैं— (1) कोई (2) कुछ। 'किसी' कोई का रूप है।

4. प्रश्नवाचक सर्वनामः—

जिस सर्वनाम से प्रश्न का बोध हो उसे 'प्रश्नवाचक सर्वनाम' कहते हैं। कौन आ रहा है, क्या खा रहे हैं, इन वाक्यों में 'कौन' और 'क्या' प्रश्न के लिए आए हैं।

अतः इन्हें प्रश्नवाचक सर्वनाम कहते हैं। 'कौन' या 'क्या' ये दोनों ही प्रश्नवाचक सर्वनाम हैं।

कौन और क्या के प्रयोग में अंतरः— कौन का प्रयोग प्रायः मनुष्यों तथा 'क्या' का प्रयोग पशुओं, कीड़ों और निर्जीव पदार्थों के लिए होता है। जैसे— कौन आया है? क्या चीज है? कौन—सी बात?

5. संबंधवाचक सर्वनामः—

जिस सर्वनाम से किसी संज्ञा का संबंध सूचित हो उसे 'संबंधवाचक सर्वनाम' कहते हैं। जैसे— बिना बिचारे जो करे सो पाछे पछताय। 'जो' और 'सो' संबंधवाचक सर्वनाम हैं। इन्हें नित्य सर्वनाम भी कहते हैं। जिसकी लाठी उसकी भैंस में भी 'जिस' और 'उसकी' संबंधवाचक (नित्य—संबंधी) है।

6. निजवाचक सर्वनामः—

जो सर्वनाम निज या अपने, आपका बोध कराए उसे 'निजवाचक सर्वनाम' कहेंगे। जैसे— मैं यह काम आप कर लूँगा। यहाँ 'आप' निजवाचक सर्वनाम है।

निजवाचक 'आप' और पुरुषवाचक 'आप' में अंतरः— निजवाचक 'आप' और पुरुषवाचक 'आप' के प्रयोग में थोड़ी भिन्नता है। यह भिन्नता मुख्यतः तीन प्रकार की है—

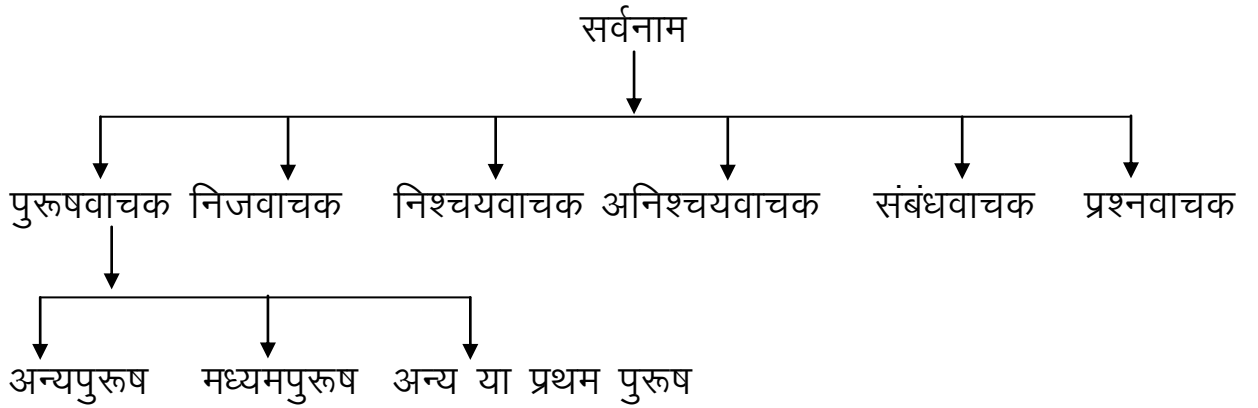
(क) पुरुषवाचक आदर सूचक 'आप' का बहुवचन 'आप' या आपलोग होता है। किंतु निजवाचक में 'आ' ही दोनों वचनों में होता है। जैसे— आप क्या कर रहे हैं? आप लोग क्या कर रहे हैं? (पुरुषवाचक)। 'आप बुरा तो जग बुरा' भारतीय आप ही उठेंगे तो उठेंगे। (निजवाचक)।

(ख) पुरुषवाचक आदर सूचक 'आप' प्रायः मध्यमपुरुष और कभी—कभी अन्य पुरुष के लिए आता है। किंतु निजवाचक 'आप' तीनों पुरुषों के लिए आता है।

जैसे— आप अच्छे हैं न? (मध्यमपुरुष)। जवाहरलाल भारत के प्रथम प्रधानमंत्री थे। आप जैसा महान नेता। पैदा नहीं हुआ। (अन्यपुरुष)।

- (ग) पुरुषवाचक आदरसूचक 'आप' वाक्य में अकेले आता है। जैसे— आप कहाँ जा रहे हैं? किंतु निजवाचक 'आप' दूसरे सर्वनाम या संज्ञा के साथ ही आता है। जैसे— राम आप आ रहा है। यहाँ 'आप' सर्वनाम के साथ 'राम' संज्ञा भी आया है।

सर्वनाम के भेद अच्छी तरह समझने के लिए निम्न तालिका स्पष्ट है—



सर्वनाम के कारक:—

सर्वनाम संज्ञा के स्थान पर आते हैं। अतः संज्ञा की भाँति ही कारक के कारण उनमें भी परिवर्तन होता है। इस प्रकार सर्वनाम की कारक रचना इस प्रकार है—

कारक	अन्य पुरुष — वह		आदरसूचक — आप	
	एकवचन	बहुवचन	एकवचन	बहुवचन
कर्ता कारक	वह, उसने	वे, उन्होंने, उनने	आप, आपने	आप लोग, आप लोगों ने
कर्म कारक	उसे, उसको	उन्हें, उनको	आपको	आप लोगों को
करण कारक	उससे, उसकेद्वारा	उनसे, उनके द्वारा	आपसे, आपके द्वारा	आप लोगों से, के द्वारा

सम्प्रदान	उसको, उसे,	उनको, उन्हें,	आपको, आपके	आप लोगों को,
कारक	उसके लिए	उनके लिए	लिए	के लिए
अपादान कारक	उससे	उनसे	आपसे	आप लोगों से
संबंध कारक	उसका, उसके,	उनका, उनके,	आपका, के, की	आप लोगों का,
	उसकी	उनकी		के, की
अधिकरण	उसमें, उसपर	उनमें, ऊपर	आप में, आप	आप लोगों में,
कारक			पर	पर

विशेषण (Adjective) :-

जो शब्द संज्ञा अथवा सर्वनाम की विशेषता बतलाए उसे विशेषण कहते हैं। जैसे— अच्छा विद्यार्थी पढ़ता है। इस वाक्य में 'अच्छा' शब्द विद्यार्थी की विशेषता बतलाता है। अतः 'अच्छा' विशेषण है। विशेषण केवल संज्ञा की ही विशेषता नहीं बतलाता वरन सर्वनाम की भी विशेषता बतलाता है। जैसे— कहाँ उत्कृष्ट आप और कहाँ तुच्छ मैं। उर्पयुक्त वाक्य में 'उत्कृष्ट' और 'तुच्छ' शब्द क्रमशः 'आप' और 'मैं' की विशेषता बतलाते हैं।

विशेषण के भेद:-

विशेषण के चार मुख्य भेद हैं—

- (1) संख्यावाचक
- (2) परिमाणवाचक
- (3) गुणवाचक
- (4) सार्वनामिक

(1) संख्यावाचक :-

जिस विशेषण से संज्ञा या सर्वनाम की संख्या का ज्ञान हो उसे संख्य वाचक विशेषण कहते हैं। जैसे— चार घोड़े दौड़ते हैं, दस विद्यार्थी पढ़ते हैं। वाक्यों में

‘चार’ और ‘दस’ संख्यावाचक **विशेषण** हैं क्योंकि इनमें ‘घोड़े’ और विद्यार्थी की संख्या संबंधी विशेषता का ज्ञान होता है।

संख्यावाची **विशेषण** के दो भेद हैं— निश्चित संख्या वाचक और अनिश्चित संख्यावाचक।

(क) **निश्चित संख्या वाचक विशेषण :-** जिस **विशेषण** से किसी निश्चित संख्या का बोध हो, उसे निश्चित संख्यावाचक **विशेषण** कहते हैं। जैसे— चार लड़के।

(ख) **अनिश्चित संख्यावाचक विशेषण :-** जिस **विशेषण** से किसी निश्चित संख्या का ज्ञान न हो, उसे अनिश्चित संख्यावाचक **विशेषण** कहते हैं। जैसे— कुछ मकान, कुछ आलू।

(2) **परिमाणवाचक विशेषण :-**

जो **विशेषण** वस्तु की तौल, नाप या माप की विशेषता बतलाए उसे परिमाण वाचक **विशेषण** कहते हैं। जैसे— थोड़ा दूध, थोड़ा—सा मलाई, सेर भर आटा।

परिमाणवाचक **विशेषण** के भी दो भेद किए गये हैं— निश्चित परिमाणवाचक और अनिश्चित परिमाणवाचक।

(क) **निश्चित परिमाणवाचक विशेषण :-** निश्चित परिमाण वाचक **विशेषण** से निश्चित परिमाण का पता चलता है। जैसे— चार गज कपड़ा।

(ख) **अनिश्चित परिमाणवाचक विशेषण :-** अनिश्चित परिमाण वाचक **विशेषण** से परिमाण का निश्चय कुछ भी नहीं हो पाता। जैसे थोड़ा अनाज, थोड़ा दूध।

(3) **गुणवाचक विशेषण :-**

जिस **विशेषण** से गुण अर्थात् संज्ञा या सर्वनाम के रूप, रंग, स्वभाव व दशा आदि का बोध हो, उसे गुणवाचक **विशेषण** कहते हैं। सभी प्रकार के गुण अच्छे या बुरे— इसके अंतर्गत आते हैं। जैसे— गरीब आदमी, सुंदर स्त्री इत्यादि।

(4) सार्वनामिक विशेषण :-

जिस सर्वनाम का प्रयोग विशेषण के रूप में होता हो उसे सार्वनामिक विशेषण कहा जाता है। यह, वह, जो, कौन, क्या, कोई, कुछ ऐसे ही सर्वनाम हैं। ये सर्वनाम और विशेषण दोनों होते हैं। यदि ये संज्ञा के साथ हैं तो विशेषण है और यदि इनके बाद क्रिया है तो सर्वनाम है। जैसे—

सर्वनाम	विशेषण
यह ले लो।	यह सूरत देखो।
वह आ रहा है।	वह मकान गिर रहा है।
कुछ कहना है क्या?	कुछ घोड़े दौड़ रहे हैं।

प्रविशेषण:-

जो शब्द विशेषण अथवा क्रिया विशेषण की विशेषता बतलाये उसे प्रविशेषण कहते हैं। जैसे— मोहन अत्यंत मेधावी छात्र है। इस वाक्य में 'अत्यंत' प्रविशेषण है, क्योंकि 'मेधावी' छात्र का विशेषण है और 'अत्यंत' मेधावी (विशेषण) की विशेषता बतला रहा है। इसी तरह—

राम बहुत तेज विद्यार्थी है।

वह बड़ा साहसी है।

इनमें 'बहुत', 'बड़ा' प्रविशेषण है।

विशेषण और विशेष्य में संबंध:- विशेषण और विशेष्य में अत्यंत ही घनिष्ठ संबंध है। वाक्य में विशेषण का प्रयोग दो प्रकार से किया जाता है। कभी विशेषण से पूर्व प्रयोग होता है और कभी विशेष्य के बाद। इसलिए प्रयोग की दृष्टि से विशेषण के दो भेद स्वीकृत हैं—

- (1) विशेष्य विशेषण
- (2) विधेय विशेषण

(1) **विशेष्य विशेषण:**— जो विशेष्य के पहले आता है उसे विशेष्य कहते हैं। जैसे— अतुल सीधा लड़का है। यहाँ सीधा लड़का का विशेषण है। अतः 'सीधा' विशेष्य विशेषण है।

(2) **विधेय विशेषण:**— जिस विशेषण का प्रयोग विशेष्य और क्रिया के मध्य किया जाये उसे विधेय विशेषण की संज्ञा देते हैं। जैसे— मेरी गाय उजली है। इस वाक्य में 'उजली' विशेषण है जो गाय के बाद प्रयुक्त है। अतः यह विधेय विशेषण है।

इस संदर्भ में निम्नांकित बातों पर भी ध्यान देना चाहिए—

(क) विशेषण के लिंग और वचन विशेष्य के लिंग और वचन के अनुसार होते हैं, चाहे विशेषण विशेष्य के पहले आए या पीछे। जैसे— अच्छा लड़का पढ़ता है। अच्छे लड़के पढ़ते हैं। मीरी अच्छी लड़की है।

(ख) अगर एक विशेषण के अनेक विशेष्य हों तो विशेषण के लिंग और वचन पास वाले विशेष्य के लिंग और वचन के अनुसार होंगे। जैसे— काला कुर्ता और टोपी।

विशेष्य—विशेषण सूची:

अनुमान — अनुमति
अपमान — अपमानित
अध्यात्म — अध्यात्मिक
अधिकार — अधिकारिक
आश्रय — आश्रित
आदर — आदरणीय
आत्मा — आत्मीय
आवरण — आवृत
आरम्भ — आरम्भिक, आरब्ध
इच्छा — इच्छित, ऐच्छिक
इतिहास — ऐतिहासिक
ईश्वर — ईश्वरीय

स्वर

उपासना — उपास्य
उत्साह — उत्साही, उत्साहित
उपेक्षा — उपेक्षित, उपेक्षणीय
उपनिवेश — औपनिवेशिक
उदीची — उदीच्य
ऋषि — आर्ष
एकता — एक
ओज — ओजस्वि
औरत — औरताना
अंश — आंशिक
अंकुर — अंकुरित
अंचल — आंचलिक

ईर्ष्या — ईर्ष्य
उदारता — उदार

अंतर — आंतरिक
अंत — अंतिम, अन्त्य

क-वर्ग

कथन — कथित
काँटा — कँटीला
कागज — कागजी
काया — कायिक
कुटुम्ब — कौटुम्बिक
कुत्सा — कुत्सित
कृपा — कृपालु
क्रय — क्रीत, क्रेय
ख्याति — ख्यात
गमन — गत
गुण — गुणी
घर — घरेलू
घाव — घायल

च-वर्ग

चरित्र — चारित्रिक
चक्षु — चाक्षुष
छवि — छबीला
जल — जलीय
झगड़ा — झगड़ालू
जागरण — जागरित
चवर्ण — चर्वित

ट-वर्ग

टंकण — टंकित
ठंड — ठंडा
डोरा — डोरिया
ढोंग — ढोंगी

त-वर्ग

तत्त्व — तात्त्विक
त्याग — त्याज्य
तारक — तारकित
तेज — तेजस्वी
थकान — थका
दशरथ — दाशरथि
दाह — दग्ध
दिन — दैनिक
दंत — दन्त्य
धैर्य — धीर
न्याय — न्यायिक
निर्माण — निर्मित

प-वर्ग

पक्ष — पाक्षिक
पशु — पाशिवक
परीक्षा — परीक्षित
पठन — पठनीय
पान — पेय
फेन — फेनिल
बुद्धि — बौद्धिक
भूत — भौतिक
मन — मनस्वी
मनु — मानव
मान — मान्य
मानव — मानवीय
मूल — मौलिक

अंतस्य तथा उष्म

यश — यशस्वी	वर्ण — वर्णिक	श्रम — श्रमिक, श्रांत, श्रमी
रक्त — रक्तिम	वस्तु — वास्तविक	शासन — शासित
राज — राजकीय	वत्स — वत्सल	शिव — शैव
रूद्र — रौद्र	वायु — वायव्य	षट — षष्ट
लक्षण— लाक्षणिक	विषय — वैषयिक	सभा — सभ्य
लय — लीन	विकार — विकृत	सम्पत्ति — सम्पन्न
लोभ — लुब्ध	वंदन — वंदनीय	सोना — सुनहला
वन — वन्य	शरत् — शारदीय	संदेह — संदिग्ध

विशेषणों की अवस्थाएँ:-

विशेषणों की तीन अवस्थाएँ होती हैं—

(क) मूल अवस्था (ख) उत्तर अवस्था (ग) उत्तम अवस्था

(क) **मूल अवस्था:-** मूल अवस्था में विशेषण के बिना किसी से तुलना किए हुए अपने रूप में रहता है। जैसे— पहला कमरा बड़ा है।

(ख) **उत्तर अवस्था:-** उत्तर अवस्था में विशेषण दो विशेष्यों की विशेषता की तुलना करता है। जैसे— पहला कमरा दूसरे कमरे से बड़ा है।

(ग) **उत्तम अवस्था:-** उत्तम अवस्था में विशेषण दो से भी अधिक विशेष्यों की तुलना में एक को सबसे बढ़कर बताता है। जैसे— पहला कमरा सब कमरों से बड़ा है।

हिंदी में तुलना करते समय विशेषण का रूप नहीं बदलता। हिंदी की प्रकृति बड़ी सरल है इसमें 'से' और 'सबसे' का प्रयोग करने से उत्तरावस्था और उत्तमावस्था का रूप बनता है।

हिंदी में संस्कृत के ढंग पर 'तर' और 'तम' लगाकर भी तुलना की जाती है—

सुन्दर — सुन्दरतर — सुंदरतम, श्रेष्ठ — श्रेष्ठतर — श्रेष्ठतम

मृदु – मृदुत्तर – मृदुत्तम, विशाल – विशालत्तर – विशालतम

अव्ययः

जिस शब्दरूप में किसी कारण भी कोई विकार नहीं पैदा होता उसे 'अव्यय' कहते हैं। जैसे— अभी, जब, तब आदि।

अव्यय के भेदः—

अव्यय के चार भेद होते हैं।

(1) क्रिया विशेषण (2) संबंध बोधक (3) समुच्चय बोधक (4) विस्मयादि बोधक

(1) क्रिया विशेषणः—

जिस अव्यय से क्रिया की कोई विशेषता जानी जाती है उसे 'क्रियाविशेषण' कहते हैं। यहाँ, वहाँ, धीरे, जल्दी, अभी, बहुत आदि शब्द क्रिया विशेषण हैं।

राम वहाँ जा रहा है। वह आज पढ़ने गया है। उससे बाजार में अचानक भेंट हो गयी।, वहाँ, आज, अचानक आदि क्रिया विशेषण क्रियाएँ हैं।

क्रिया विशेषण के कार्यः—

1. क्रिया विशेषण क्रिया की विशेषता बतलाता है। जैसे वह धीरे—से बोलता है। वह जोर से हँसता है।
उपर्युक्त वाक्यों में 'धीरे—से', 'जोर—से' क्रिया विशेषण है, जो क्रमशः बोलना और हँसना क्रियाओं की विशेषता बतलाते हैं।
2. क्रिया विशेषण क्रिया के सम्पादित होने का ढंग बतलाता है। जैसे— पुस्तकें धड़ा—धड़ बिक रही हैं। यहाँ धड़ा—धड़ क्रिया विशेषण 'बिकने' क्रिया का ढंग बतलाता है।
3. क्रिया विशेषण क्रिया के होने की निश्चयता तथा अनिश्चयता का बोध कराता है। जैसे— वह अवश्य आएगा। वह शायद आएगा।

4. क्रिया विशेषण क्रिया के होने में निषेध और स्वीकृति का बोध कराता है।
जैसे— मत पढ़ो। ठीक कहते हो। हाँ आओ। न लिखो।
5. क्रिया विशेषण क्रिया के घटित होने की स्थिति, दशा, विस्तार और परिमाण का बोध कराता है। जैसे— वह ऊपर सोता है। घर के भीतर बैठो। सड़क के दाएँ चलो। जाओ, उधर ढूँढो।

क्रिया विशेषण के भेद:—

क्रिया विशेषणों का वर्गीकरण तीन आधारों पर किया जाता है—

- 1) प्रयोग के आधार पर। 2) अर्थ के आधार पर 3) रूप के आधार पर।

(1) प्रयोग के आधार पर:— प्रयोग के आधार पर क्रिया विशेषण के तीन भेद हैं—

- 1) साधारण 2) संयोजक 3) अनुबद्ध

1) साधारण क्रिया विशेषण:— उन क्रिया विशेषणों को कहते हैं जिनका प्रयोग वाक्य में स्वतंत्र रूप से होता है। जैसे— अब, जल्दी, कहाँ इत्यादि।

2) संयोजक क्रिया विशेषण:— उन क्रिया विशेषणों को कहते हैं जिनका संबंध उपवाक्य से होता है। ये क्रिया विशेषण संबंधवाचक सर्वनामों से बनते हैं।

क्रिया (Verb) :—

जिस शब्द से किसी काम का करना या होना प्रकट हो, उसे क्रिया कहते हैं।
जैसे— खाना, पीना, उठना, बैठना इत्यादि।

धातु:— जिस मूल शब्द से क्रिया बनती है उसे 'धातु' कहते हैं। खाना, लिखना, बैठना आदि। क्रियाएँ खा, लिख, बैठ आदि मूल शब्दों से बनी हैं। अतः इन्हें धातु कहेंगे।

क्रिया के भेद:—

कर्म के अनुसार या रचना की दृष्टि से क्रिया के दो भेद हैं—

- (क) सकर्मक क्रिया (ख) अकर्मक क्रिया

(क) **सकर्मक क्रिया:**— जिस क्रिया के साथ कर्म रहता है अथवा उसके रहने की भावना रहती है उसे 'सकर्मक क्रिया' कहते हैं। सकर्मक क्रिया का करने वाला कर्ता ही होता है, परन्तु उसके कार्य का फल कर्म पर पड़ता है। राम पुस्तक पढ़ता है। 'पढ़ना' क्रिया सकर्मक है। उसका कर्म राम है जिसका फल पुस्तक पर पड़ता है।

(ख) **अकर्मक क्रिया:**— जिस क्रिया के साथ कर्म न रहे अर्थात् जिसकी क्रिया का फल कर्ता ही पर पड़े उसे 'अकर्मक क्रिया' कहते हैं।

क्रिया के अन्य रूप:

क) **सहायक क्रिया:**— संयुक्त क्रिया में एक प्रधान क्रिया रहती है और दूसरी केवल उसकी सहायता के लिए आती है। जैसे— उसने बाघ मार डाला। यहाँ 'मारना' प्रधान क्रिया है और 'डालना' सहायक क्रिया है।

ख) **पूर्णकालिक क्रिया:**— जब कोई कर्ता एक क्रिया समाप्त कर उसी क्षण दूसरी क्रिया आरंभ करता है तो पहली क्रिया को 'पूर्वकालिक क्रिया' कहते हैं। जैसे— वह खाकर बाजार गया। यहाँ 'खाकर' पूर्वकालिक क्रिया है।

ग) **द्विकर्मक क्रिया:**— कभी—कभी किसी क्रिया के दो कर्म रहते हैं। ऐसी क्रिया को द्विकर्मक क्रिया कहते हैं। जैसे— बाप बेटे को बिस्कुट खिलाता है। बादक शीला को सितार सिखाता है। यहाँ 'खिलाना' और 'सिखाना' के दो—दो कर्म हैं। 'बेटे को' और 'बिस्कुट', 'शीला को' और 'सितार' द्विकर्मक क्रियाएँ हैं। जैसे— जब आप आएँगे तब मैं घर जाऊँगा। जहाँ आप आएँगे वहाँ मैं भी जाऊँगा।

3) अनुबद्ध क्रिया विशेषण:—

उन क्रिया विशेषणों को कहते हैं जिनका प्रयोग किसी शब्द के साथ अवधारणो के लिए होता है। जैसे— तो, तक, भर, भी आदि।

(2) अर्थ के आधार पर:—

अर्थ के आधार पर क्रिया विशेषण के चार भेद हैं— (क) स्थानवाचक क्रिया विशेषण (ख) काल वाचक क्रिया विशेषण (ग) परिमाण वाचक क्रिया विशेषण (घ) रीतिवाचक क्रिया विशेषण

(क) स्थानवाचक क्रिया विशेषण:— यह दो प्रकार का है—

- 1) स्थितिवाचक— यहाँ, वहाँ, साथ, बाहर, भीतर।
- 2) दिशावाचक— इधर, उधर, किधर, दाहिने, बायें आदि।

(ख) काल वाचक क्रिया विशेषण:— इसके तीन भेद हैं—

- 1) समयवाचक— आज, कल, जब, पहले, तुरंत।
- 2) अवधिवाचक— आजकल, नित्य, सदा, लगातार, दिनभर आदि।
- 3) पुनः पुनः वाचक— बहुधा, प्रतिदिन, कईबार, हरबार आदि।

(ग) परिमाण वाचक क्रिया विशेषण:— यह भी कई प्रकार का है—

- अधिकता बोधक— बहुत, बड़ा, भारी, अत्यंत आदि।
न्यूनता बोधक— कुछ, लगभग, थोड़ा, प्रायः आदि।
पर्याप्ति बोधक— केवल, वष, काफी, ठीक, आदि।
तुलना बोधक— इतना, उतना, कम, अधिक आदि।
श्रेणी बोधक— थोड़ा-थोड़ा, क्रमशः आदि।

(घ) रीतिवाचक क्रिया विशेषण:— इस क्रिया विशेषण से प्रकार, निश्चय, अनिश्चय, स्वीकार, कारण निषेध आदि अनेक अर्थ प्रकट होते हैं।

(3) रूप के आधार पर: रूप के आधार पर क्रिया विशेषण के 3 भेद होते हैं—

(क) मूल क्रिया विशेषण (ख) यौगिक क्रिया विशेषण (ग) संयुक्त क्रिया विशेषण

(क) मूल क्रिया विशेषण:— जो क्रिया विशेषण किसी दूसरे शब्द के मेल से नहीं बनते वे 'मूल क्रिया विशेषण' कहे जाते हैं। जैसे— अचानक, दूर, ठीक आदि।

(ख) यौगिक क्रिया विशेषण:— जो क्रिया विशेषण किसी दूसरे शब्द में प्रत्यय या शब्द जोड़ने से बनते हैं वे यौगिक क्रिया विशेषण कहे जाते हैं। ये संज्ञा, सर्वनाम विशेषण, अव्यय तथा धातु में प्रत्यययोग से बनते हैं। उदाहरण— मनसे, देखते हुए, यहाँतक, वहाँ पर आदि।

(ग) संयुक्त क्रिया विशेषण:— ये कई प्रकार से बनते हैं—

दो भिन्न संज्ञाओं के मेल से— रात—दिन, साँझ—सबेरे।

क्रिया विशेषणों की द्विरुक्ति से— धीरे—धीरे, जहाँ जहाँ।

भिन्न क्रिया विशेषणों के मेल से— जब—जब, जहाँ तहाँ।

क्रिया विशेषणों के बीच 'न' आने से— कभी—न—कभी, कुछ—न—कुछ।

अनुकरण मूलक द्विरुक्ति से— झटपट, धड़ाधड़।

अव्यय के प्रयोग से— प्रतिदिन, यथाक्रम।

(2) संबंध बोधक:—

जो अव्यय संज्ञा के बाद उसका संबंध वाक्य के दूसरे शब्द के साथ बतलाता है उसे 'संबंधबोधक अव्यय' कहते हैं। जैसे— वह दिन भर रोता रहा। दवा के बिना रोगी मर गया।

संबंध बोधक के भेद:— संबंधबोधक के तीन भेद किये जाते हैं—

(क) प्रयोग के आधार पर (ख) अर्थ के आधार पर (ग) व्युत्पत्ति के आधार पर

(क) प्रयोग के आधार पर:— इसके दो भेद हैं— 1. संबद्ध 2. अनुबद्ध

1. संबद्ध संबंध बोधक— संज्ञाओं की विभक्तियों के बाद आते हैं। जैसे— भोजन से पहले। घर के बिना।

2. अनुबद्ध संबंध बोधक— संज्ञा के विकृत रूप के बाद आते हैं— बच्चों सहित, वर्षों तक, कटोरे भर आदि।

(ख) अर्थ के आधार पर:— संबंधबोधक अव्यय के अनेक प्रकार हो सकते हैं—

1. कालवाचक— आगे, पहले, पीछे, बाद आदि।
2. स्थानवाचक— नजदीक, समीप, भीतर आदि।
3. सादृश्यवाचक— समान, तरह, तुल्य आदि।
4. तुलनावाचक— अपेक्षा, बनस्पति आदि।

(ग) व्युत्पत्ति के आधार पर:— संबंधबोधक अव्यय के दो भेद हैं— 1. मूल 2. यौगिक

1. मूल संबंध बोधक अव्यय— बिना, पर्यंत।
2. यौगिक संबंध बोधक अव्यय— वास्ते, तुल्य, पीछे आदि।

(3) समुच्चय बोधक:—

जो अव्यय एक वाक्य या शब्द का संबंध दूसरे वाक्य या शब्द से बतलाता है उसे 'समुच्चय बोधक' कहते हैं। जैसे— राम आया और श्याम गया। राम और श्याम दौड़ रहे हैं। इनमें से प्रथम वाक्य में 'और' शब्द 'राम आया' तथा 'श्याम गया' इन दोनों वाक्यों को जोड़ता है।

समुच्चय बोधक अव्यय के भेद:

समुच्चय बोधक अव्यय के दो भेद हैं— (क) समानाधिकरण और (ख) व्याधिकरण
(क) **समानाधिकरण समुच्चयबोधक अव्यय:**— उन अव्ययों को कहते हैं जिनके द्वारा मुख्य वाक्य जोड़े जाते हैं। इनके चार उपभेद हैं— 1. संयोजक 2. विभाजक 3. विरोधदर्शक 4. परिणामदर्शक

1. **संयोजक**— दो या अधिक मुख्य वाक्यों का संग्रह— और व एवं, तथा, भी।
2. **विभाजक**— दो या अधिक मुख्य वाक्यों में से एक का ग्रहण या सबका त्याग करना— पा, ना, अथवा, कि, नहीं, तो, न आदि।

3. विरोधदर्शक— ये अव्यय दो वाक्यों में विरोध दिखलाते हुए किसी एक का ग्रहण या निषेध बतलाते हैं— राम आया परंतु श्याम नहीं आ सका। विरोधी अव्यय— पर, परंतु, किंतु, लेकिन, मगर, बल्कि, वरन इत्यादि।

4. परिणामदर्शक— इन अव्ययों से अगले वाक्य का अर्थ पिछले वाक्य के अर्थ का परिणाम है। जैसे— माँ ने खूब पीटा, इसलिए श्याम भाग गया। श्याम के भागने का कारण 'माँ का पीटना' है। परिणाम दर्शक अव्यय — इसलिए, अतः, अतएव।

(ख) व्याधिकरण समुच्चयबोधक अव्ययः— उन अव्ययों को कहते हैं जिनसे एक मुख्य वाक्य में एक या अधिक आश्रित वाक्य जोड़े जाते हैं। जैसे— तपोवन वासियों को विघ्न न हो, इसलिए रथ यहीं रोकिए।

व्याधिकरण समुच्चयबोधक के भी चार भेद हैं—

- (1) **करण वाचक—** क्योंकि, जोकि, इसलिए, कि आदि।
- (2) **उद्देश्य वाचक—** कि, जोकि, ताकि, इसलिए, कि आदि
- (3) **संकेत वाचक—** यद्यपि, तथापि, यदि—तो, चाहे—तो, आदि।
- (4) **स्वरूप वाचक—** कि, जो, अर्थात्, यानि, मानो आदि।

(4) विस्मयादि बोधक अव्ययः

जिन शब्दों से हर्ष, शोक, आश्चर्य आदि के भाव सूचित होते हैं परन्तु जिनका संबंध वाक्य या उसके किसी पद से नहीं होता उन्हें 'विस्मयादि बोधक' अव्यय कहते हैं। जैसे— हाय! मेरा सब कुछ लुट गया।

विस्मयादि बोधक के भेदः— विस्मयादिबोधक अव्ययों से अनेक प्रकार के भाव प्रकट होते हैं। इस आधार पर इसके कई भेद किए जा सकते हैं—

1. **हर्ष बोधक—** वाह—वाह, आहा, धन्य—धन्य, शाबास आदि।
2. **आश्चर्य बोधक—** वाह, हैं, ओहो, क्या आदि।
3. **तिरस्कार बोधक—** छिः, हट, चुप, धिक् आदि।

4. स्वीकार बोधक— हाँ, जी हाँ, अच्छा आदि।

5. संबोधन बोधक— अजी, हे, अरे आदि।

6. अनुमोदन बोधक— ठीक, वाह आदि।

विस्मयादि बोधक अव्यय के बाद '!' चिन्ह आता है।

इकाई— 1 (घ)

वाक्य विचार

वाक्य भाषा की वह लघुतम इकाई है जिससे वक्ता का पूर्ण तात्पर्य व्यक्त होता है। सैद्धान्तिक दृष्टि से वाक्य एक पद का भी हो सकता है, किन्तु व्यावहारिक दृष्टि से वाक्य अनेक पदों से मिलकर बनता है। पदों की जिस समष्टि से एक विशेष अर्थ तो व्यक्त होता है, किन्तु पूर्ण अर्थ व्यक्त नहीं होता, उसे वाक्यांश (वाक्य-भाग) या पदबन्ध कहा जाता है। व्यावहारिक दृष्टि से वाक्य अनेक वाक्यांशों की समष्टि है। पदों अथवा वाक्यांशों के अर्थ की समष्टि ही वाक्यार्थ व्यक्त करती है। एक प्रकार से पदार्थों एवं वाक्यांशों के समयोग से वाक्यार्थ का निर्णय होता है।

पद या रूप के स्तर पर प्रत्येक पद का अपना एक विशेष रूढ़ अर्थ होता है। कभी-कभी वाक्य के स्तर या पद अपने पदात्मक रूढ़ अर्थ से परे जाकर एक दूसरे अर्थ को प्रकट करता है और पद का यही नवीन अर्थ, वाक्य-स्तरीय अर्थ होता है। प्रत्येक पद का वाक्य-स्तर या वाक्यार्थ के विशेष सन्दर्भ में जो अर्थ होता है, वही अर्थ उस वाक्यार्थ के संदर्भ में महत्वपूर्ण होता है। वाक्य में आए हुए प्रत्येक पद (आवद्ध या मुक्त) का एक वाक्य-स्तरीय अर्थ भी होता है। अतएव वाक्य विज्ञान में पहले प्रत्येक पद का वास्तविक अर्थ और प्रयोग क्या है? यही विचारणीय है। इसी को पदों का वाक्यात्मक मूल्य कहा जाता है। प्रत्येक पद के वाक्यात्मक मूल्य के अतिरिक्त वाक्य में पदक्रम पदान्वय और अधिकार पर विचार किया जाता है।

वाक्य—रचना से ही एक भाषा—समुदाय के विचारों को व्यक्त करने की शैली व्यक्त होती है। अतएव किसी भाषा की वाक्य—रचना पद्धति भाषा के वक्ताओं की भाषण शैली की प्रतिनिधि होती है। उद्देश्य और विधेय पदों का ऐसा समूह जो संरचना की सबसे बड़ी इकाई के रूप में प्रयुक्त होता है और जो योग्यता, आकांक्षा तथा आशक्ति से युक्त हों, यही वाक्य का लक्षण है। जैसे— ‘रमेश पुस्तक पढ़ता है।’

इस वाक्य में ‘रमेश’ उद्देश्य है और ‘पुस्तक पढ़ता है’ विधेय है, जिससे एक विशेष अर्थ की अभिव्यक्ति होती है जो प्रयुक्त पदों की योग्यता प्रकट करती है और उनमें आकांक्षा तथा आशक्ति की व्यवस्था भी बनी रहती है।

वाक्य के अंग:

प्रत्येक वाक्य के दो मुख्य अंग होते हैं— उद्देश्य और विधेय। रमेश पुस्तक पढ़ता है। इस वाक्य में ‘रमेश’ उद्देश्य है और ‘पुस्तक पढ़ता है’ विधेय।

उद्देश्य:— वाक्य में जिसके विषय में कुछ विधान किया जाता है उसे उद्देश्य कहते हैं।

विधेय:— उद्देश्य के विषय में जो विधान होता है, उसे विधेय कहते हैं। “मेरा काम कभी खत्म नहीं होता” इस वाक्य में ‘मेरा काम’ उद्देश्य है और ‘कभी खत्म नहीं होता’ विधेय है। ‘मेरा काम’ में ‘काम’ मुख्य है और ‘मेरा’ कहना ‘काम’ का विस्तार है। इसलिए ‘काम’ उद्देश्य है और ‘मेरा’ उद्देश्य का विस्तार है। इसी प्रकार विधेय ‘कभी खत्म नहीं होता’ में भी क्रिया ‘नहीं होता’ मुख्य है और शेष उसका विस्तार है। इस प्रकार वाक्य के चार भाग हुए— (क) उद्देश्य (ख) उद्देश्य का विस्तार (ग) विधेय तथा (घ) विधेय का विस्तार।

वाक्य—भेद या प्रकार:

रचना की दृष्टि से वाक्य के तीन भेद हैं।

1. सरल वाक्य
2. मिश्र वाक्य
3. संयुक्त वाक्य

1. सरल वाक्य:

जिस वाक्य में एक या अनेक उद्देश्य हों किंतु विधेय एक ही हो, वह सरल या साधारण वाक्य होता है। जैसे— राम बाजार जाता है में 'राम' उद्देश्य और 'बाजार जाता है' विधेय है। सरल वाक्यों की रचना पाँच प्रकार से होती है—

- 1) कर्ता + क्रिया = मोहन पढ़ता है।
- 2) कर्ता + पूरक + क्रिया = रमेश अध्यापक है।
- 3) कर्ता + कर्म + क्रिया = राम पुस्तक पढ़ता है।
- 4) कर्ता + कर्म + कर्मपूरक + क्रिया = गीता ने रस्सी को साँप समझा।
- 5) कर्ता + गौण कर्म + मुख्य कर्म + क्रिया = पिता ने पुत्र को फल दिए।

2. मिश्र वाक्य:

जिस वाक्य में एक प्रधान और एक या अधिक आश्रित उपवाक्य हों, उसे मिश्र वाक्य कहते हैं। मिश्र वाक्यों में मुख्य उद्देश्य और मुख्य विधेय के अतिरिक्त एक या अनेक सहायक क्रियाएँ होती हैं। जिस वाक्य में मुख्य उद्देश्य और विधेय होता है, वह वाक्य प्रधान उपवाक्य कहलाता है तथा शेष उपवाक्य कहलाते हैं। जैसे "उसने कहा कि वह परीक्षा में उत्तीर्ण होगा।" इस वाक्य में "उसने कहा" प्रधान उपवाक्य और "वह परीक्षा में उत्तीर्ण होगा" आश्रित उपवाक्य है। प्रधान और आश्रित उपवाक्य को जोड़ने के लिए 'कि' संबंधबोधक का प्रयोग हुआ है। आश्रित उपवाक्य तीन प्रकार के होते हैं।

1. संज्ञा उपवाक्य
2. विशेषण उपवाक्य
3. क्रिया विशेषण उपवाक्य

1) संज्ञा उपवाक्य:

क्रिया के कार्य के लिए किसी संज्ञा के स्थान पर आता है यथा— 'उसने कहा कि मैं कल तुम्हारे घर आऊँगा।'

2) विशेषण उपवाक्य:

प्रधान उपवाक्य की किसी संज्ञा या सर्वनाम की विशेषता बताता है— “उस (व्यक्ति) से मैं क्या मिलूँ जिसने मेरा अपमान किया था।” ‘उस सर्वनाम का विशेषण’

3) क्रिया विशेषण उपवाक्य:

प्रधान उपवाक्य की क्रिया की विशेषता बताता है। “ज्योंही वह पहुँचा, त्योंही मैं चल पड़ा।

3. संयुक्त वाक्य:

जिस वाक्य में एक से अधिक उपवाक्य होते हैं उसे संयुक्त वाक्य कहते हैं। जैसे— “सेनानायक की आज्ञा पाते ही सेना ने कूच कर दिया और देखते ही देखते वह सीमा पर पहुँच गयी।” इस वाक्य में— सेना ने कूच कर दिया तथा वह सीमा पर पहुँच गयी दो प्रधान उपवाक्य है। सेना नायक की आज्ञा पाते ही तथा देखते ही देखते— दो अधीन उपवाक्य हैं।

अर्थ की दृष्टि से वाक्य—भेद

अर्थ के आधार पर वाक्य आठ प्रकार के होते हैं।

(1) विधानवाचक वाक्य:—

जिस वाक्य से किसी बात या कार्य के होने का कथन ज्ञात होता है। उसे विधान वाचक कहते हैं जैसे—

(अ) लाफांग घर जा रहा है। (विधानार्थक वर्तमान काल)

(ब) ताकार घर गया। (विधानार्थक भूतकाल)

(स) ताकाम घर जाएगा। (विधानार्थक भविष्य काल)

(2) निषेधवाचक या नकारात्मक वाक्य:—

जिस वाक्य से किसी कार्य का न होना सूचित होता हो, निषेधात्मक या नकारात्मक वाक्य कहते हैं, जैसे—

- (अ) राम घर नहीं जा रहा है। (निषेधात्मक वर्तमान काल)
- (ब) राम घर नहीं गया। (निषेधवाचक—भूतकाल)
- (स) राम घर नहीं जाएगा। (निषेधवाचक भविष्य काल)

(3) आज्ञा वाचक वाक्य:—

जिस वाक्य से किसी बात या कार्य के लिए आदेश, प्रार्थना अथवा उपदेश दिया जाता है, उसे आज्ञार्थक वाक्य कहते हैं, जैसे—

- (अ) तुम घर जाओ। तुम घर नहीं जाओगे। (आज्ञार्थक)
- (ब) मुझे घर जाने दीजिए। (प्रार्थनार्थक)
- (स) सदा सच बोला करो। (उपदेशार्थक)

(4) इच्छा वाचक वाक्य:—

इस प्रकार के वाक्य में इच्छा, शुभकामना, तथा शाप का बोध होता है, जैसे—

- (अ) चलिए, प्रदर्शनी देख आएँ (इच्छार्थक)
- (ब) आप की यात्रा मंगलमय हो। (शुभकामना बोधक)
- (स) जा, तेरा यह वैभव नष्ट हो जाए। (शाप सूचक)

(5) संदेहवाचक वाक्य:—

जिन वाक्यों से संदेह या संभावना का बोध होता है, उसे संदेहवाचक वाक्य कहा जाता है, जैसे—

हो सकता है कि कल वह यहाँ आ जाए।

‘हो सकता है’ ‘संभव है’ ‘शायद’, कदाचित ऐसे वाक्य की पहचान है।

(6) संकेतवाचक वाक्य:—

शर्त बोधक या संकेत वाचक वाक्य में किसी बात या कार्य का होना किसी अन्य बात या कार्य पर निर्भर करता है। इस निर्भरता को सूचित करने के लिए 'यदि', 'अगर' जैसे वाचक शब्दों का प्रयोग किया जाता है, जैसे—

यदि समय से वर्षा हो जाए, तो धरती सोना उगले।

अगर तुम अब भी पढ़ लो तो परीक्षा में उत्तीर्ण हो सकते हो।

(7) प्रश्नवाचक वाक्य:—

जिन वाक्यों के द्वारा प्रश्न की सूचना मिलती है, उन्हें प्रश्नवाचक वाक्य कहते हैं। इन वाक्यों के लिखित रूप में अंत में प्रश्नवाची चिह्न का प्रयोग होता है, जैसे—

क्या वह कल आएगा?

वह घर कब जाएगा?

(8) विस्मयवाचक वाक्य:—

जिन वाक्यों से विस्मय (आश्चर्य) हर्ष, प्रशंसा, शोक, घृणा या संबोधन का बोध होता है, उन्हें विस्मयादिबोधक वाक्य कहते हैं। इन वाक्यों के लिखित रूप में संबोधन चिह्न (!) का प्रयोग आवश्यक होता है, जैसे—

वाह! आज आपके दर्शन हो गए। (हर्ष)

शाबाश! तुमने परीक्षा में अच्छी सफलता प्राप्त की है। (प्रशंसा)

हाय! हिंदी का दिनकर अस्त हो गया। (शोक)

छिः! इस पापी को यहाँ क्यों लाए? (घृणा)

राम! यहाँ बैठो। (संबोधन)

वाक्य रचना शिक्षण के नियम:

वाक्य भाषा की सर्वाधिक महत्वपूर्ण इकाई है। अतः छात्रों को शुद्ध वाक्य रचना का अभ्यास कराना आवश्यक है। प्रत्येक भाषा की अपनी संरचना होती है। जिसके अनुसार वाक्यों का गठन किया जाता है।

हिंदी भाषा की वाक्य रचना के नियम उतने कठोर नहीं हैं पर फिर भी वाक्य रचना के सामान्य नियमों का पालन आवश्यक हैं। जिसका ज्ञान अध्यापक द्वारा छात्रों को दिया जाना चाहिए। इन नियमों में सर्वप्रथम व मुख्य नियम पदक्रम का नियम हैं। पद का तात्पर्य वाक्य में प्रयुक्त शब्द से है। प्रत्येक वाक्य शब्दों से बनता है और वाक्य रचना करते हुए पदक्रम का ध्यान रखना आवश्यक है क्योंकि किसी भी भाषा की वाक्य संरचना में शब्दों का क्रम निश्चित होता है। पदक्रम की विभिन्नता के आधार पर भाषाओं की वाक्य संरचना की अलग से पहचान की जा सकती है। हिंदी के वाक्यों में पदक्रम का सामान्य नियम इस प्रकार है—

1. सर्वप्रथम कर्ता तथा उद्देश्य, फिर कर्म तथा पूरक और अंत में क्रियापद रखा जाता है। यथा— मैं पुस्तक पढ़ रहा हूँ। “पुस्तक मैं पढ़ रहा हूँ।” अशुद्ध वाक्य है।
2. द्विकर्मक क्रियाओं में गौण कर्म पहले और मुख्य कर्म बाद में आता है। यथा— उसने राकेश को कलम दिया। ‘उसने कलम राकेश को दिया’ वाक्य रचना नियमानुसार सही नहीं है।
3. वाक्य में कर्ता का विस्तार कर्ता से पहले और क्रिया का विस्तार क्रिया से पहले आता है। यथा— दशरथ पुत्र राम ने रावण को बाण से मारा। इस

वाक्य में 'दशरथ पुत्र' कर्ता राम से पूर्व तथा 'बाण से' 'मारा' क्रिया से पूर्व प्रयुक्त हुए हैं। अतः यह वाक्य—संरचना सही है।

4. विशेषणों का प्रयोग प्रायः विशेष्य से पूर्व होता है। यथा— 'वह सुंदर स्त्री है।' वाक्य में 'सुंदर' विशेषण का प्रयोग 'स्त्री' विशेष्य से पूर्व हुआ है।
5. संबोधन शब्द का प्रयोग वाक्य के प्रारम्भ से होता है यथा— श्याम, इधर आओ।
6. प्रश्नवाचक शब्द व्यक्ति, वस्तु या स्थान से पूर्व लगते हैं यथा— क्या सीमा भी तुम्हारे साथ जाएगी?
7. काल सूचक अव्यय पहले तथा स्थान सूचक अव्यय बाद में आते हैं यथा— बस प्रातः पाँच बजे रवाना होंगे।

अध्यापक से यह अपेक्षा की जाती है कि वह वाक्य रचना शिक्षण के समय छात्रों से नियमों का अभ्यास कराए। इसके लिए वह शुद्ध व अशुद्ध पदक्रम वाले वाक्य देकर छात्रों से सही पदक्रम युक्त वाक्य बनवाएँ।

पदक्रम के नियमों के अतिरिक्त छात्रों को वाक्य—रचना के समय कुछ सामान्य नियमों को भी प्रयोग में लाना चाहिए।

पदक्रम के अलावा कुछ महत्वपूर्ण नियमः

1. हिंदी में केवल दो लिंग होते हैं— पुलिंग और स्त्रीलिंग। कर्ता व कर्म के अनुसार क्रिया का रूप बदल जाता है। जैसे— श्याम जाता है।
2. कर्ता और कर्म के वचन के साथ भी क्रिया का रूप बदलता है। यथा— 'लड़का पढ़ता है' में 'लड़का' शब्द के स्थान पर 'लड़के' कर देने पर 'पढ़ता है' क्रिया में भी परिवर्तन अपेक्षित है। इस नियम का एक अपवाद यह है कि सम्माननीय व्यक्तियों के लिए सहायक क्रिया का वही रूप प्रयोग किया जाता

है। जो बहुवचन के लिए होता है। जैसे— पिताजी सो रहे हैं। 'इस वाक्य में आदरणार्थ बहुवचन' का प्रयोग किया गया है।

3. वाक्य रचना के अन्य नियमों में एक मुख्य नियम यह है कि कर्मवाच्य में क्रिया कर्म के अनुरूप होती है। जैसे— उसके द्वारा पुस्तक नहीं पढ़ी जाती। इस वाक्य में 'पढ़ी जाती' क्रिया का लिंग व वचन 'पुस्तक' कर्म के अनुरूप है।
4. वाक्य में एक ही लिंग के अनेक कर्ता होने पर क्रिया भी उसी लिंग में बहुवचन में होगी जैसे— रमा, आशा और लता विद्यालय जा रही है। इस वाक्य में सभी कर्ता शब्द स्त्रीलिंग है। अतः 'जा रही है' क्रिया स्त्रीलिंग बहुवचन में है।
5. भिन्न—भिन्न लिंग के अनेक कर्ता एक वचन में होने पर क्रिया पुलिङ्ग बहुवचन में होगी जैसे—'राम, लक्ष्मण, सीता और लक्ष्मण वन को गए।'।
6. अनेक कर्ता यदि भिन्न—भिन्न वचनों में हो तो क्रिया बहुवचन में अन्तिम कर्ता के लिंगानुसार होगी। यानी— "एक वृद्ध, दो युवक और चार युवतियाँ आ रही हैं।"
7. यदि अनेक कर्ता भिन्न—भिन्न लिंग और वचन के हो तो क्रिया प्रायः अन्तिम कर्ता के लिंग व वचनानुसार होगी। यथा— उसने गाय, बकरियाँ और घोड़े पाल रखे हैं। इस वाक्य में अन्तिम कर्ता घोड़े पुलिङ्ग बहुवचन है। अतः क्रिया भी पुलिङ्ग बहुवचन में है।
8. विशेषण का लिंग और वचन विशेष्य के अनुसार होता है। यथा— यह फल मीठा है।

9. सर्वनाम की अन्विति संज्ञा के साथ तभी होगी जब सर्वनाम का लिंग बचन और पुरुष पूर्व कथित संज्ञा के अनुसार होगा जैसे— बच्चे बाहर घूमने गए हैं। वे थोड़ी देर में आएँगे।
10. द्विकर्मक क्रियाओं में क्रिया का रूप मुख्य कर्म के लिंग और वचन के अनुसार होता है। जैसे— “पिताजी ने श्याम को पैसे दिए।” इस वाक्य में ‘श्याम’ और ‘पैसे’ दो कर्म हैं। पैसे शब्द मुख्य कर्म है। अतः वाक्य की क्रिया मुख्य कर्म के अनुसार पुलिङ्ग बहुवचन की है। इन नियमों का प्रयोग बताकर अध्यापक अभ्यास हेतु एकवचन वाक्यों को ‘बहुवचन’ वाक्यों में तथा बहुवचन वाक्यों को ‘एकवचन’ में परिवर्तन करा सकता है।

हिंदी की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि भाषा में जिस रूप में कोई वचन कहा जाता है उसे उसी रूप में दोहराया भी जाता है। “लता ने मुझसे कहा कि मैं तुम्हारी प्रतीक्षा करूँगी।” पर अंग्रेजी भाषा के प्रभाव में आकर आजकल अप्रत्यक्ष कथन का प्रयोग करने लगे हैं। यथा ‘लता ने मुझसे कहा कि वह मेरी प्रतीक्षा करेगी।’ “यह प्रयोग हिंदी भाषा की प्रकृति के अनुकूल नहीं है। इसमें ‘वह’ शब्द के प्रयोग से यह स्पष्ट नहीं होता कि वह शब्द वस्तुतः लता के लिए प्रयुक्त हुआ है या किसी अन्य व्यक्ति के लिए। अतः वाक्य रचना के समय ऐसे प्रयोगों से यथासंभव बचना चाहिए और प्रत्यक्ष कथनों का प्रयोग करना चाहिए।

विराम चिन्हः

शुद्ध वाक्य रचना करते समय विराम चिन्हों का प्रयोग अति आवश्यक है। बोलते, पढ़ते या लिखते समय हमें रुकने की आवश्यकता पड़ती है, कभी श्वास लेने के लिए तो कभी अर्थ-बोध के लिए। अर्थ बोध के लिए हम जहाँ रुकते हैं वहाँ

विराम चिन्हों का प्रयोग किया जाता है। विराम चिन्हों के प्रयोग से अर्थ में स्पष्टता आती है, उच्चारण में सुविधा मिलती है।

विराम चिन्हों के सही प्रयोग द्वारा संप्रेषण एवं अर्थ-ग्रहण की क्रियाएँ सरल और सफल होती हैं। इनके प्रयोग से वक्ता एवं लेखक की मनोदशा, विभिन्न बातों की मनोदशा तथा उनकी अनुभूतियों का सहज ज्ञान हो जाता है।

हिंदी में सामान्यतया निम्नलिखित विराम चिन्ह प्रयुक्त होते हैं—

- 1- पूर्ण विराम Full Stop । अथवा (.) आजकल प्रयोग हो रहा है।
- 2- अल्प विराम Comma ,
- 3- अर्द्ध विराम Semi colon ;
- 4- प्रश्नवाचक चिन्ह Sign of interrogation ?
- 5- विस्मयादिबोधक चिन्ह Sign of Exclamation !
- 6- उद्धरण चिन्ह Sign of Inverted commas ' '
- 7- योजक चिन्ह Sign of coujection (&)
- 8- कोष्ठक Bracket (), { }, []
- 9- निर्देशक अथवा रेखिका चिन्ह Sign of Direction —
- 10- विवरण चिन्ह As follows :—
- 11- संक्षेपण Short form 0
- 12- हंस पद ^
- 13- तुल्यता सूचक Equal to =

1. पूर्ण विराम (।) अथवा (.) :—

प्रत्येक वाक्य की समाप्ति पर पूर्ण विराम लगाया जाता है यथा— ईटानगर अरुणाचल की राजधानी है। इनका चिन्ह (।) अथवा (.) है।

2. अल्प विराम (,):—

पढ़ते समय जिस स्थान पर थोड़ा बहुत रुकना पड़ता है वहाँ अल्प विराम (,) लगाया जाता है यथा—

- (क) जहाँ वाक्यों, पदों या वाक्यांश इकट्ठे हों पर उनके बीच कोई योजक चिन्ह न हो— राम, लक्ष्मण, भरत और शत्रुघ्न राजा दशरथ के पुत्र थे।
- (ख) संबोधन के बाद— मोनू, इधर आओ।
- (ग) किसी उक्ति से पूर्व — उसने कहा; मेरी सहायता करो।

3. अर्द्ध विराम (;) :—

अर्द्ध विराम का प्रयोग अल्प-विराम की अपेक्षा अधिक समय तक ठहरने के लिए होता है। अतः इसे पूर्ण-विराम और अल्प-विराम के मध्य का चिन्ह कह सकते हैं। इनका प्रयोग अल्प-विराम एवं पूर्ण-विराम की तुलना में बहुत कम होता है। प्रायः इसके स्थान पर भी अल्प-विराम का ही प्रयोग होता है। जैसे—

- (क) स्त्रियों के नामों के साथ बहुधा 'देवी' शब्द आता है; जैसे— गायत्री देवी।
- (ख) भारत में राजनैतिक स्वतन्त्रता का शंख महात्मा गांधी ने फूँका; अहिंसा और सहयोग के अस्त्र उन्होंने ही दिए ; अंग्रेजों के विरुद्ध बड़े-बड़े आंदोलनों का नेतृत्व उन्होंने ही किया।
- (ग) मैंने परिश्रम किया है; मुझे अवश्य अच्छे अंक मिलेंगे।

4. प्रश्नवाचक चिन्ह (?):-

प्रश्नवाचक वाक्यों के अंत में, पूर्ण विराम के स्थान पर, जैसे— तुम्हारा नाम क्या है? का प्रयोग होता है। यदि एक ही वाक्य में कई प्रश्नवाचक उपवाक्य हों और वे एक ही प्रधान उपवाक्य पर अवलंबित हो तो ऐसे प्रत्येक उपवाक्य के अंत में अल्प विराम का प्रयोग कर अंत में प्रश्न सूचक चिन्ह लगाते हैं। जैसे—

मैं क्या खाता हूँ, क्या पीता हूँ, मैं कहाँ जाता हूँ, मैं क्या करता हूँ, यह सब आप क्यों जानना चाहते हैं?

5. विस्मयादि सूचक या संबोधन (!):-

आश्चर्य का भाव प्रकट करने के लिए इसका प्रयोग करते हैं। इनका प्रयोग निम्नलिखित संदर्भों में किया जाता है।

(1) विस्मयादि बोधक अवयवों और हर्ष, विषाद, घृणा, आश्चर्य, भय, प्रार्थना, आज्ञा आदि मनोवेग सूचक वाक्यों, वाक्यांशों के शब्दों के अंत में प्रयोग किया जाता है।

(क) हाय! बेचारा मर गया।

(ख) वाह! तुमने तो कमाल किया।

(ग) छिः! चोरी करते हो।

(2) प्रश्नवाचक वाक्यों के अंत में, जहाँ मनोवेग प्रदर्शित होता हो— जैसे— बोलते क्यों नहीं, क्या गूगे हो!

(3) जहाँ पुकारने का संकेत हो जैसे— राम! इधर आओ।

6. अवतरण या उद्धरण चिन्ह (' '):-

इनका प्रयोग निम्नलिखित स्थलों पर होता है।

किसी लेखक के उद्धृत किए शब्दों से पूर्व, साहित्य विषयों के उद्धरणों में, कहावतों आदि में इसका प्रयोग किया जाता है। जैसे तिलक ने कहा— 'स्वतंत्रता हमारा जन्म सिद्ध अधिकार है।'

7. योजक चिन्ह (&) :-

द्विरुक्त शब्दों के बीच में तथा समासिक शब्दों के बीच में यह प्रयुक्त होता है। उदाहरण—

एक—एक करके जाओ।

वह हँसते—हँसते लोटपोट हो गया।

वह दिन—रात मेहनत करता है।

उसके माता-पिता अभी तक जीवित हैं।

8. कोष्ठक (), { }, [] :-

किसी कथन को स्पष्ट करने के लिए स्पष्टीकरण हेतु इसका प्रयोग किया जाता है। जैसे- बापूजी (महात्मा गांधी) ने स्वतंत्रता, आंदोलन को जनता तक पहुँचाया था।

अफ्रीका के नीग्रो (हब्शी) बहुत काले होते हैं।

नेताजी (सुभाषचन्द्र बोस) का नारा था- “तुम मुझे खून दो, मैं तुम्हें आजादी दूँगा।”

नाटकादि संवादमय लेखों में हाव-भाव सूचित करने के लिए जैसे-

दुर्योधन- (गर्व पूर्वक) हमारी सेना पांडवों की सेना से बहुत बड़ी है। हमारी विजय निश्चित है।

9. निर्देशक अथवा रेखिका चिन्ह (—) :-

किसी वाक्य के प्रवाह में सहसा अवरोध आ जाने पर भी भाव-परिवर्तन होने पर इसका प्रयोग किया जाता है।

मैंने तुम्हें पढ़ाया, लिखाया, बड़ा किया- पर अब यह सब कहने से क्या लाभ है।

किसी के वाक्यों को उद्धृत करने के पूर्व जैसे-

अध्यापक- भारत के प्रथम राष्ट्रपति कौन थे?

विद्यार्थी- डॉ० राजेन्द्र प्रसाद।

○ निम्नलिखित 'या' निम्नांकित शब्द के पश्चात जैसे-

जो विद्यार्थी प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण हुए हैं, उनके नाम निम्नलिखित हैं-

रमेश, संजय, कुसुम, पुष्पा और सुमन।

- किसी शब्द या वाक्यांश की व्याख्या करने के लिए, जैसे— आजकल मंत्री बनते ही सब कुछ मिल जाता है— सम्मान, यश, सुख, सम्पत्ति।
- किसी अवतरण के बाद और उसके लेखक के पूर्व, जैसे—
भगतहि ग्यानहि नहीं कछु भेदा— गोस्वामी तुलसीदास।

10. विवरण चिन्ह (:-) :-

किसी विषय अथवा बातों को समझाने के लिए अथवा निर्देश के लिए विवरण चिन्ह का प्रयोग किया जाता है, जैसे— संज्ञा के तीन भेद होते हैं—

(क) व्यक्तिवाचक (ख) जातिवाचक (ग) भाववाचक

11. संक्षेपण/ संक्षेपक (0) :-

किसी वस्तु, व्यक्ति, स्थान अथवा संगठन आदि के नाम को संक्षेप में लिखने के लिए प्रयोग किया जाता है। जैसे—

उ०प्र०, अ०प्र०, रा० शै० संस्थान, ईटानगर इत्यादि।

12. हंस पद या त्रुटिपूरक (^) :-

लिखते समय जब कुछ छूट जाता है तो उसके लिए उचित स्थान पर यह चिन्ह ^ लगाकर छूटा हुआ अंश ऊपर लिख दिया जाता है। यथा—
राशन की दुकान से गेहूँ, चावल, आटा, तेल और चीनी ले आओ।

13. तुल्यता सूचक (=) :-

इसे बराबर का चिन्ह भी कहते हैं।

प्रयोग—नियम— शब्द, उसके अर्थ के मध्य में प्रयोग किया जाता है जैसे—
पंकज = कमल।

वाक्यगत अशुद्धियाँ:-

विभिन्न शब्दों के क्रमबद्ध समूह को वाक्य कहते हैं। जब हम अपनी भावनाओं को किसी दूसरे पर व्यक्त करना चाहते हैं, तब वाक्यों का ही प्रयोग करना पड़ता है। अतः वाक्य वह शब्द समूह है, जिसके द्वारा हम अपने मन की भावनाओं को दूसरे तक पहुँचाएं एवं दूसरे के मन के भावों को स्वयं जान लें। वाक्य की उपयुक्तता तभी सिद्ध होती है जब वाक्य में पद क्रमिक हों और उनका स्थान निश्चित हो। तभी वाक्य को शुद्ध रूप में बोला जा सकता है। इसके विपरीत यदि वाक्य में शब्दों की उपयुक्तता एवं क्रमबद्धता का ध्यान नहीं रखा जाता है तो वाक्य सच्चे अर्थ में अर्थोपादन करने में अनपयुक्त होता है जैसे— “पत्र से कलम लिखो।” प्रस्तुत पद समूह में वाक्य के आवश्यक पद समूह तो विद्यमान है, परन्तु पत्र द्वारा कलम लिखा नहीं जा सकता। अतः इसे वाक्य न कहकर वाक्याभास कह सकते हैं। उस शब्द समूह को वाक्य कहते हैं, जिसमें एक क्रिया हो तथा किसी कार्य को पूरा करने की क्षमता हो।

वाक्य में क्रिया सबसे अंतिम एवं कर्ता प्रायः एबसे पहले प्रयुक्त होता है। वाक्य में लिंग और वचन का प्रयोग कर्ता में होता है। उसी के अनुसार क्रिया के लिंग और वचन होते हैं। कभी-कभी लिंग और वचन कर्म के अनुसार बदलते रहते हैं। प्रमुख रूप से वाक्य में दो ही संबंधों की प्रधानता होती है—

(क) क्रिया एवं कर्ता का संबंध।

(ख) क्रिया एवं कर्म का संबंध।

ऐसा देखा जाता है कि क्रिया एवं कर्ता के संबंधों में जहाँ परिवर्तन होता है वहीं वाक्य का स्वरूप बदल जाता है और अर्थ भाव एवं बोध भी अलग होता है। इसके साथ ही अव्यय संबंधी अशुद्धियाँ भी पर्याप्त मात्रा में दिखायी या प्रयोग में प्रयुक्त होती रहती है। जैसे—

वह विद्वान था, और शास्त्रार्थ में हार गया।

जबकि इसका शुद्ध रूप – वह विद्वान था, किन्तु शास्त्रार्थ में वह हार गया।

अशुद्ध प्रयोग – मोहन पढ़ा, कृष्ण ने लेख लिखा।

शुद्ध प्रयोग – मोहन पढ़ा और कृष्ण ने लेख लिखा।

सर्वनाम संबंधी अशुद्धियाँ:-

संज्ञा के स्थान पर प्रयोग किए जाने वाले शब्द सर्वनाम कहलाते हैं। इसलिए सर्वनामों के पुरुष, लिंग और वचन उस संज्ञा के पुरुष, लिंग एवं वचन के ही समान होते हैं। पर इसका प्रयोग इस प्रकार से नहीं होता है तो वाक्य अशुद्ध एवं भिन्नार्थक होता है।

○ अशुद्ध प्रयोग – राम और श्याम का पुत्र मंदिर में जाता है।

शुद्ध प्रयोग – राम और उसका पुत्र मंदिर में जाते हैं।

○ अशुद्ध प्रयोग – मेरे का पाठ याद करना है।

शुद्ध प्रयोग – मुझे पाठ याद करना है।

○ अशुद्ध प्रयोग – वह तेरे को बिल्कुल पसंद नहीं करता है।

शुद्ध प्रयोग – वह तुझे बिल्कुल पसंद नहीं करता है।

प्रत्यय संबंधी अशुद्धियाँ:-

व्याकरण की दृष्टि से कभी-कभी आवश्यकता न होने पर भी प्रत्ययों का प्रयोग किया जाता है जिससे वाक्य में अशुद्धता आ जाती है जैसे—

अशुद्ध वाक्य – हमारे पूज्यनीय गुरुजी आज आएंगे।

शुद्ध वाक्य – हमारे पूज्य गुरुजी आज आएंगे।

अशुद्ध वाक्य – दलाईलामा ने भारत से राजनैतिक शरण माँगी थी।

शुद्ध वाक्य – दलाईलामा ने भारत से राजनीतिक शरण माँगी थी।

विशेषण विषयक अशुद्धियाँ:-

संज्ञा के समान ही विशेषण को प्रयुक्त करने के समय भी अनुकूलता, आवश्यकता, लाभप्रद और पूर्णता आदि की उपेक्षा बरती जाती है। इसलिए वाक्य-विन्यास में अशुद्धियाँ आ जाती हैं। इन अशुद्धियों से सावधान रहना चाहिए—

अशुद्ध वाक्य

1. कोयल का कंठ सबसे मधुरतम है।
2. आपकी कृति श्रेष्ठतम है।
3. वह तुम्हारा वाला मिथुन है।
4. यहाँ कोई एक चित्र नहीं है।
5. राम का आचरण दुराचरण है।

शुद्ध वाक्य

1. कोयल का कंठ सबसे मधुर है।
2. आपकी कृति श्रेष्ठ है।
3. वह तुम्हारा मिथुन है।
4. यहाँ कोई चित्र नहीं है।
5. राम का आचरण बुरा नहीं है।

असंगत विशेषण का भी प्रयोग:-

असंगत विशेषणों के प्रयोग करने से वाक्य में अशुद्धियों का समावेश हो जाता है। कुछ अनुपयुक्त विशेषणों का प्रयोग इस प्रकार है—

अशुद्ध प्रयोग

1. आज दिन में बेशुमार गर्मी है।
2. राम की माँ दुखी है।
3. राम के कथन का कोई अर्थ नहीं है।
4. अब वस्तुओं पर भारी महँगाई है।

शुद्ध प्रयोग

1. आज दिन में 'बहुत' या अधिक गर्मी है।
2. राम की माँ बहुत दुखी है।
3. राम के कथन का कुछ अर्थ नहीं है।
4. अब वस्तुओं पर बहुत महँगाई है।

पर्याय का अशुद्ध प्रयोग:-

कभी-कभी संज्ञा शब्दों के समान विशेषण अशुद्ध रूप में भी प्रयोग किए जाते हैं। जब वक्ता शब्द के अर्थ की स्पष्टता नहीं आएगी। अतः अपूर्ण पर्याय के प्रयोग में अशुद्धियों के प्रति सावधान रहना आवश्यक है। कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं—

अशुद्ध प्रयोग

1. विद्यालय में अतिरिक्त आदमी नहीं है।
2. आकाश बहुत उच्च है।
3. तुम्हारा पाठ बड़ा अद्भुत है।
4. यह कुँआ बहुत सघन है।

शुद्ध प्रयोग

1. विद्यालय में बाहरी आदमी नहीं है।
2. आकाश बहुत विशाल है।
3. तुम्हारा पाठ कठिन है।
4. यह कुँआ बहुत गहरा है।

विशेषणों की एक वचन में पुनरावृत्ति से उत्पन्न अशुद्धियाँ:-

वार्तालाप के समय प्रायः अशुद्ध वाक्य बोलते पाया गया है। बहुवचन के साथ तो विशेषणों की पुनरावृत्ति होती ही है पर एकवचन में भी विशेषणों की पुनरावृत्ति होने लगती है। इस प्रकार ऐसी अशुद्धियाँ हो जाती हैं, जो सुनने और लिखने में बहुत ही आश्चर्यजनक एवं अटपटी लगने लगती हैं। कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं—

अशुद्ध प्रयोग

1. प्रत्येक स्थान पर एक-एक व्यक्ति बैठे।
2. सभी अपनी-अपनी पुस्तकें पढ़ते हैं।
3. अध्यापक ने अलग-अलग प्रश्न पूछा।
4. बालकों ने अपने-अपने घर खाना खाया।

शुद्ध प्रयोग

1. प्रत्येक स्थान पर एक व्यक्ति बैठे।
2. सभी अपनी पुस्तकें पढ़ते हैं।
3. अध्यापक ने अलग प्रश्न पूछा।
4. बालकों ने अपने घर खाना खाया।

विशेषण निर्माण संबंधी अशुद्धियाँ:-

विशेषण की रचना करते समय भी अशुद्धियाँ आ जाती हैं। इसलिए विशेषण का प्रयोग भी गलत हो जाता है। कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं—

अशुद्ध प्रयोग

1. पाक विजित नहीं हुआ।
2. मेरी कविता छपित हो रही है।
3. पढ़ना एक आवश्यकीय कार्य है।
4. शत्रु को धीर व्यक्ति ही मार सकता है।

शुद्ध प्रयोग

1. पाक विजयी नहीं हुआ।
2. मेरी कविता मुद्रित हो रही है।
3. पढ़ना एक आवश्यक कार्य है।
4. शत्रु को वीर व्यक्ति ही मार सकता है।

विशेषण निर्माण संबंधी अशुद्धियाँ:-

दोषपूर्ण या दोषयुक्त प्रयोग की अशुद्धियों से अर्थ पूर्णतः दूषित हो जाता है।
ऐसे अशुद्ध प्रयोग से बचना चाहिए। कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं—

अशुद्ध प्रयोग

1. कोयल एक भोला चिड़िया है।
2. बहुत सा घोड़े खड़े हैं।
3. मेरा यह छोटा सा लोटा है।
4. राम अपनी सच गवाही देगा।

शुद्ध प्रयोग

1. कोयल एक भोली चिड़िया है।
2. बहुत से घोड़े खड़े हैं।
3. मेरा यह छोटा लोटा है।
4. राम अपनी सच्ची गवाही देगा।

क्रम और क्रम-संख्या विषयक अशुद्धियाँ:-

यदा-कदा क्रम और क्रम-विषयक अशुद्धियाँ हो जाती हैं सर्तक एवं सावधानी रखना चाहिए। कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं—

अशुद्ध प्रयोग

1. सस्ती खरीदी वस्तु देर से खराब होती है।
2. आगे ऊँची एक पहाड़ी मिलेगी।
3. 12 वीं कक्षा शान्त है।

शुद्ध प्रयोग

1. सस्ती खरीदी वस्तु जल्दी खराब होती है।
2. आगे एक ऊँची पहाड़ी मिलेगी।
3. बारहवीं कक्षा शान्त है।

क्रिया विषयक अशुद्धियाँ:-

हिंदी भाषा में क्रिया का प्रयोग सावधानी से न करने पर भूलें हो जाती हैं जिसके प्रयोग से वाक्य ही असंगत नहीं लगते वरन् वाक्यों में निष्क्रियता, अर्थान्तरता और निरुद्देश्यता आ जाती है। कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं—

अशुद्ध प्रयोग

शुद्ध प्रयोग

1. घर में कैसा जोर का कलह चल रहा है। 1. घर में कैसा कलह चल रहा है।
2. राम इसको कहे बिना नहीं रूक सकता है। 2. राम यह कहे बिना नहीं रूक सकता।
3. इस प्रश्न का हल करने की आवश्यकता है। 3. इस प्रश्न के हल की आवश्यकता है।

बेमेल क्रियापदों के कारण होने वाली अशुद्धियाँ:-

यह देखा गया है कि— एक—सा भाव व्यक्त करने वाली क्रियाओं का वाक्य में प्रयोग बिना औचित्य को ध्यान में रखे हुए सर्वनाम, विशेषण और संज्ञा के साथ उसका रूप बदल जाता है और अर्थ—व्यापार में अशुद्धियाँ बढ़ जाती हैं। कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं—

अशुद्ध प्रयोग

शुद्ध प्रयोग

1. श्री रामनरेश को अभिनंदन ग्रंथ प्रदत्त ग्रंथ भेंट किया गया। 1. श्री रामनरेश को अभिनंदन किया गया।
2. आज वह खाना ले रहा है। 2. आज वह खाना खा रहा है।
3. साहित्य और जीवन का घोर संबंध है। 3. साहित्य और जीवन का घनिष्ठ संबंध है।

संयुक्त क्रिया संबंधी अशुद्धियाँ:-

प्रत्येक भाषा के स्वरूप, वाक्य गठन नियम एवं प्रकृति निश्चित होते हैं। इस कारण क्रियाओं के प्रयोग में सर्तक रहना पड़ता है। कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं—

अशुद्ध प्रयोग

1. जेम्स वॉट ने इंजन की खोज की।
2. श्याम की सेवाएं हस्तानांतरित कर दो।

शुद्ध प्रयोग

1. जेम्स वॉट ने इंजन का आविष्कार किया।
2. श्याम की सेवाएं स्थानांतरित कर दो।

मुहावरों के प्रयोग विषयक अशुद्धियाँ:-

अधिकांशतः देखा गया है कि मुहावरे का अर्थ ही वाक्यों में प्रयोग हो जाता है। कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं—

अशुद्ध प्रयोग

1. अध्यापक का रंग न जमा।
2. बातों के कुलावे मत उड़ाओ।

शुद्ध प्रयोग

1. अध्यापक का रंग न चढ़ा।
2. बातों के कुलावे मत बाँधो।

////////////////////

इकाई – 2

रचना—शिक्षण

रचना स्वयं रचित विचारों, इच्छाओं और परिस्थितिजन्य समझ-बूझ का समन्वय समग्र संस्कृति, परिवेश के प्रति गहरी सोच एवं विचारों का समुचित प्रतिपादन हैं जिसमें जीवन के सम्पूर्ण क्षेत्र का समन्वय होता है। वैसे मौलिक रचना या लिखित रचना ही रचना है। जिस प्रकार वस्तुकार या मूर्तिकार अपने स्थूल साधनों के प्रयोग से विभिन्न कलाकृतियों का निर्माण करता है, जिस प्रकार चित्रकार अपनी तूलिका के सहारे अपने सूक्ष्म भावों को पटल पर अंकित करता है, उसी प्रकार एक लेखक शब्द, वाक्य लोकोक्ति मुहावरों का आश्रय लेकर व्याकरण सम्मत नियमों में आबद्ध होकर लेखन के सहारे अपने आंतरिक मनोभावों को साकार करता है। वास्तुकार, मूर्तिकार, चित्रकार तथा लेखक का उद्देश्य एक ही है— रचना करना, अपने व्यक्तित्व की छाप कृति पर अंकित करना। इस प्रकार रचना अन्तर्निहित भावनाओं एवं शक्तियों का समन्वय है।

मौलिक लेखन या रचना का महत्व:—

शिक्षा का उद्देश्य मनुष्य की भावनाओं एवं शक्तियों को सुअवसर देकर उनका पूर्ण विकास करना है। भाषा शक्तियों के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका प्रदान करती है। यदि बोलचाल और लेखन की शिक्षा का समुचित आयोजन किया जाए तो उनकी मौलिक अभिव्यक्ति के लिए एक सुअवसर मिलेगा और उनका मार्ग भी प्रशस्त होगा। लिखित रचना या मौलिक रचना के कुछ महत्वपूर्ण बिन्दुओं को इस प्रकार समझा जा सकता है—

(1) **सामाजिक व्यवहार के लिए:—** विज्ञान की जटिल जीवन पद्धति के कारण पत्र-व्यवहार तथा विचारों का आदान-प्रदान लेखन का माध्यम बनता जा रहा है।

परिवार की इकाईयाँ दूर-दूर स्थानों पर जा बसी है। इन विखरे बिन्दुओं को केन्द्रित करने के लिए हर दिन संबंधी के लिए या दूर देश में महान् हित साधनों के लिए बसे मित्र के लिए, पत्र-व्यवहार ही ऐसा माध्यम है जिससे आपसी विचारों का आदान-प्रदान हो सकता है। अतः पत्र-व्यवहार की रचना महत्वपूर्ण स्थान ग्रहण करती जा रही है।

(2) व्यावसायिक तथा वाणिज्यिक व्यवहार के लिए:— आज हर युवक को स्वरोजगारोंमुखी होने का प्रोत्साहन दिया जा रहा है। हमारी नई शिक्षा नीति का उद्देश्य हर बालक को अपना स्वतंत्र व्यवसाय चुनने को प्रोत्साहन देना है। उन्हें इक्कीसवीं शताब्दी में समर्थ होकर जीने को तैयार करना है। परिणामतः हमें व्यावसायिक और वाणिज्य से संबंधित पत्र-व्यवहार, सार-लेखन, टिप्पणी, विचार या भाव-विचार आदि कुशलताओं के विकास पर बल देना होगा। जो रचना के समुचित अभ्यास के माध्यम से ही संभव है।

(3) ज्ञान-विज्ञान के विस्तार के लिए:— आजकल ज्ञान-विज्ञान की विभिन्न विधाओं का विकास हो रहा है। जीवन के हर क्षेत्र में वैज्ञानिक दृष्टिकोण का प्रतिपादन किया जा रहा है। इनका स्थायीत्व प्रदान करने के लिए रचनात्मक रूप दिया जा रहा है। जब हम अपने विद्यालयों में विद्यार्थियों को वैज्ञानिक विधाओं में मौलिक लेखन के लिए उचित अवसर प्रदान करेंगे तो उनकी रचनात्मकता आगे बढ़ेगी। उन्हें निबंध की शैलियों से परिचित कराएँ तथा जटिल शब्दावली को सहज एवं सरल भाषा में प्रकट करना सिखाएँ।

(4) राष्ट्रीय जीवन के लिए:— हमारी प्रजातांत्रिक संसदीय प्रणाली में लिखित व्यवहार का बहुत महत्व है। हमारा संविधान, न्यायिक प्रक्रिया और शासकीय पद्धति लिखित रूप में ही है। इन पहलुओं में हर शब्द का अपना ही अर्थ है। विद्यालयों पर यह दायित्व है कि विद्यार्थियों को शब्द के सूक्ष्म भेदों-उपभेदों के प्रति सचेत करें।

उनका उचित प्रयोग करना सिखाएँ ताकि वे अपने मत को सुस्पष्ट और सारगर्भित शब्दों में प्रकट कर सकें।

(5) सृजनात्मक साहित्य के विकास के लिए:— विज्ञान के युग में मानव हृदय कठोर होता जा रहा है। मशीनों के व्यामोह में उसके हृदय का स्पंदन अपनी संवेदनशीलता खोता जा रहा है। प्राकृतिक स्रोतों का अमानवीय दोहन उसकी स्वार्थपरता पर अकुंश नहीं लगा पाता। भारतीय मनीषियों ने बिना स्टेथेस्कोप यंत्र की सहायता से धरती का अनुभव किया था, किंतु सिसमोग्राफ जैसे यंत्रों का आविष्कार करके भी वैज्ञानिक पृथ्वी के स्पंदन की अनुसूची कर रहा है।

साहित्य की विभिन्न विधाएँ:—

कविता, उपन्यास, कहानी, नाटक, एकांकी, संस्मरण, अनुच्छेद, जीवनी, निबंध, डायरी, पत्र, प्रपत्र, टिप्पणी और संक्षेपण तथा पल्लवन आदि हैं जो साहित्य का समन्वित रूप है। प्रत्येक की रचना जीवनाधारित है और इनका विकास ही साहित्य का स्वरूप है जो रचना प्रक्रिया का मूल मंतव्य है।

रचना शिक्षण के उद्देश्य:—

भाषा की शुद्धता, विषय-सामग्री की सुसंबद्धता और विचारों में क्रमबद्धता किसी भी रचना का सामान्य उद्देश्य होता है। रचना के विविध अंगों में तालमेल होना चाहिए। रचना किसके लिए लिख रहे हैं, इस बात को ध्यान में रखकर भाषा का स्तर, विषय वस्तु का चयन, उसका विस्तार, संयोजन तथा कलेवर होना चाहिए।

रचना शिक्षण के द्वारा ही विद्यार्थी रचना के विविध रूपों एवं उनके उद्देश्यों को जान और समझ सकता है। पत्रों, प्रपत्रों, निबंध, जीवनी, कहानी, संवाद आदि से परिचित होते हैं और रचना करने की योग्यता का विकास करते हैं।

मुख्यतः निर्देशित रचना के विविध रूपों की रचना-प्रक्रिया से अवगत होकर उन्हें लिखने में सक्षम बनाना। स्वतंत्र रचना के विविध रूपों विशेषतः कहानी और

संवाद लेखन की प्रक्रिया से अवगत होकर उन्हें लिखित रूप में प्रस्तुत करना। इस प्रकार लिखित रचना शिक्षण के महत्वपूर्ण उद्देश्यों को भली-भाँति समझकर उन्हें रचना कार्य में उत्प्रेरित करना ही मुख्य उद्देश्य है।

रचना शिक्षण की विधियाँ:—

रचना शिक्षण की प्रमुख विधियाँ निम्नलिखित हैं—

(1) आदर्श अनुकरण विधि:—

किसी विशेष प्रकार की रचना का आदर्श या नमूना देखकर उसके अनुकरण के आधार पर रचना कार्य करना अनुकरण विधि का प्रयोग कहा जाता है। इसे “देखो और लिखो” विधि भी कहते हैं। प्राथमिक स्तर या उच्च प्राथमिक स्तर पर रचना कार्य सिखाने के लिए यह विधि उपयुक्त मानी जाती है। पत्र रचना शिक्षण, संक्षेपण और पल्लवन करना, प्रपत्र भरना, टिप्पणी और डायरी लिखना आदि के नमूने प्रस्तुत करके उन पर विद्यार्थियों से चर्चा की जाती है। प्रश्नोत्तर के आधार पर आवश्यक बिंदुओं को श्यामपट्ट पर लिखकर उन्हें रचना करने को कहा जाता है।

(2) चित्र वर्णन विधि:—

चित्रों के आधार पर किसी घटना का वर्णन करने अथवा कहानी लिखने की विधि चित्र वर्णन विधि कहलाती है। इस विधि में किसी एक चित्र को अथवा एक से अधिक चित्रों को क्रम से प्रस्तुत करते हुए उनपर प्रश्न पूछे जाते हैं। इस विधि के प्रयोग की सफलता चित्रों पर शिक्षक द्वारा पूछे गए प्रश्नों पर निर्भर है। इस प्रश्नोत्तर की प्रक्रिया में उभरे हुए मुख्य बिंदुओं को बताकर कहानी की रूपरेखा बना ली जाती है।

(3) रूपरेखा विधि:—

इस विधि में एक निश्चित रूपरेखा अथवा संकेत सूत्र देकर विद्यार्थियों को रचना कार्य करने के लिए कहा जाता है। जो विषय विद्यार्थियों के लिए कठिन या अज्ञात होने से उनपर रचना कार्य कराने के लिए यह विधि उपयोगी मानी जाती है। इस विधि को सूत्र विधि या प्रबोधन विधि भी कहा जाता है।

(4) परिचर्चा या तर्क विधि:—

उच्च प्राथमिक स्तर पर विबंध रचना के लिए इस विधि का प्रयोग खासतौर से किया जाता है। रचना में वांछित विषय सामग्री के लिए शिक्षक विद्यार्थियों के साथ परिचर्चा, विचार-विमर्श तथा तर्क-वितर्क करता है जिससे विषय के संबंध में पर्याप्त सामग्री एकत्र हो जाती है। विद्यार्थी को भी खुलकर चर्चा में भाग लेने और अपने भाव, विचारों एवं मत प्रकट करने के अवसर मिलते हैं।

(5) स्वाध्याय विधि:—

इस विधि में रचना की विषय सामग्री पुस्तकों तथा पत्र-पत्रिकाओं में ढूढ़ने और उनका चयन करने के लिए विद्यार्थियों को प्रोत्साहित किया जाता है। शिक्षक आवश्यक पुस्तकें और पत्र-पत्रिकाएं विद्यार्थियों को दे देता है और सामग्री चयन, संकलन और संयोजन में उनकी सहायता करता है। इस विधि से लाभ यह होता है कि विद्यार्थियों में स्वाध्याय की प्रवृत्ति विकसित होती है तथा विषय सामग्री की स्वयं खोज करने और उसके आधार पर रचना करने में उन्हें संतोष का अनुभव होता है।

इस प्रकार इन विधियों के विषय में इस बात का ध्यान रखना अत्यंत आवश्यक है कि केवल एक विधि रचना शिक्षण के लिए पूर्णतः सिद्ध नहीं होती है। अतः शिक्षक को चाहिए कि रचना विधि की आवश्यकता के अनुसार अपने विवेक का प्रयोग कर विद्यार्थियों को रचना प्रक्रिया में जोड़ें।

रचना शिक्षण में होने वाली अशुद्धियाँ:

लिखित रचना शिक्षण संबंधी अशुद्धियाँ निम्न स्तरों पर देखी जाती हैं—

- (1) भाषिक शुद्धता
- (2) विषय सामग्री
- (3) रूप और शैली

(1) भाषिक शुद्धता:— रचना शिक्षण में भाषिक शुद्धता का विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए। इसके अंतर्गत लिपि, वर्तनी, शब्द, वाक्य रचना, लिंग, वचन, विभक्ति, पदक्रम, अन्विति, विराम चिह्न, अनुच्छेदीकरण तथा शुद्ध भाषा प्रयोग में अशुद्धियाँ हो सकती हैं। इस पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए।

(2) विषय सामग्री:— इसके अंतर्गत निम्नलिखित बिंदुओं पर ध्यान दिया जाना अनिवार्य है—

1. रचना की दृष्टि से अपेक्षित विषय वस्तु की पर्याप्तता, अपर्याप्तता, तथ्यों तथा विचार सामग्री की पूर्णता—अपूर्णता संबंधी अशुद्धियाँ प्रायः अपेक्षित हो सकती हैं।
2. विषय सामग्री का क्रमायोजन, प्रस्तुतीकरण, सुसंबद्ध अथवा विखरा हुआ रूप।
3. विद्यार्थी की रचना की मौलिकता झलकती है या नहीं। उसमें उसके अपने विचार हैं और प्रक्रियाओं और दृष्टिकोण की अभिव्यक्ति हुई या नहीं इत्यादि पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए।

(3) रूप और शैली:— रचना के विभिन्न प्रकारों का अपना—अपना रूप तथा अपनी शैली होती है। रचना की अपनी अनुकूल रूप और शैली का ठीक—ठीक निर्वाह हुआ है या नहीं इत्यादि में अशुद्धियाँ हो सकती हैं।

इस प्रकार रचना—शिक्षण के उत्तरोत्तर विकास के लिए उसमें आगत अशुद्धियों पर विशेष ध्यान रखकर रचना को परिष्कृत किया जा सकता है।

अनुच्छेद रचना:

सुन्दर पच्चीकारी में जो स्थान एक बूटे का है, बड़े लेख में वही महत्व एक अनुच्छेद का है। एक-एक अनुच्छेद विस्तृत रचना के रूप को निखारता है, अनुच्छेद लेखन, मौलिक रचना की पहली आधारभूत कड़ी है।

अनुच्छेद एक ऐसा वाक्य समूह है, जिसमें भावों एवं विचारों को श्रृंखलाबद्ध रूप में प्रस्तुत किया जाता है। हर अनुच्छेद में एक मुख्य विचार होता है। इस प्रकार एक विचार बिंदु जितने वाक्यों में लिखा जाता है उस वाक्य समूह को अनुच्छेद कहते हैं अर्थात् एक रचना कई अनुच्छेदों से मिलकर बनती है।

अनुच्छेद की विशेषताएँ:—

एक अच्छे अनुच्छेद की निम्नलिखित विशेषताएँ होती हैं—

- (अ) एक अनुच्छेद में एक ही विचार अभिव्यक्त हो।
- (ब) अनुच्छेद के सभी वाक्य-विचार की दृष्टि से परस्पर संबद्ध हो।
- (स) अनुच्छेद का मूल भाव अनुच्छेदों के प्रारंभ या अंत के वाक्य में अवश्य आ जाना चाहिए।
- (द) अंतिम अनुच्छेद में रचना का निष्कर्ष होना चाहिए।

अनुच्छेद के विषय:—

अनुच्छेद के मुख्य दो ही विषय निर्धारित किए गए हैं।

(क) वर्णनात्मक तथा अनुभवगम्य:—

आरंभ में अनुच्छेद लेखन के विषय विद्यार्थियों के अनुभवगम्य होने चाहिए।
उदाहरण स्वरूप — स्कूल का बगीचा, बगीचे के फूल, प्यारी तितली, विद्यालय की आधी छुट्टी आदि।

विद्यार्थियों से उनकी सुनी हुई, स्पर्श की हुई, सूंघी हुई या चखी हुई वस्तुओं पर अनुच्छेद लिखवाए जाएं। इन्द्रियों से प्राप्त अनुभवों के वर्णन में विद्यार्थियों को अपनी व्यक्तिगत अनुभूति प्रकट करने का अवसर मिलता है। यदि विद्यार्थी को अपने 'जीवन अनुभव प्रकट करना आ गया' तो अवश्य ही एक बड़ी उपलब्धि होगी। व्यक्तिगत अनुभूति का प्रकटीकरण ही तो सृजनात्मक रचना है।

छोटी कक्षाओं में सृजनात्मक रचना के विषय वर्णनात्मक होने चाहिए। उन्हें धीरे-धीरे अपनी अनुभूतियों का मिश्रण लेखन में करना सिखाना चाहिए।

(ख) काल्पनिक विषय:—

माध्यमिक तथा उच्चमाध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थियों को काल्पनिक विषयों पर लिखने का अभ्यास दिया जाना चाहिए।

1. प्रातःकाल का दृश्य।
2. ये ओस की बूंदें।
3. विज्ञान
4. अपना विद्यालय
5. प्रिय नेता।

यह आवश्यक नहीं है कि हर विद्यार्थी इस प्रकार के लेखन के लिए मानसिक रूप से तैयार हो। यदि अवस्था में विद्यार्थी को संकेत में कुछ बताया जाए। उनकी कल्पना शक्ति को जागृत किया जाए।

यदि इन काल्पनिक विषयों पर अनुच्छेद लिखवाने से पहले मौखिक रूप से चर्चा की जाए तो विद्यार्थियों को सुगमता रहेगी। मौलिक लेखन या रचना सुविचारित मौखिक अभिव्यक्ति का ही व्याकरण सम्मत लिपिबद्ध रूप है। इतना ही

नहीं अनुच्छेदों में उपयुक्त शब्दावली तथा लोकोक्ति—मुहावरों के प्रयोग पर बल देना चाहिए। अनुच्छेद में विषय की गंभीरता की प्रतिच्छाया भी प्रतिबिंबित होनी चाहिए।

निबंध रचना:

निबंध का अर्थ है भली प्रकार से बंध हुआ। निबंध एक ऐसी रचना है, जिसमें विषय—विशेष पर व्यक्ति अपने विचार सुनियोजित विधि से लिखित रूप में अभिव्यक्ति करता है। निबंध आत्मप्रकाशन का एक सुनियोजित प्रयत्न है। यह आत्म—प्रकाशन जितना सरल, स्वतंत्र और सजीव होगा, उतना ही प्रभावशाली एवं सराहनीय होगा।

मुख्यतः निबंध के तीन अंग हैं— (1) आरंभ (2) मध्य (3) अंत

(1) आरंभ:—

निबंध के आरंभ में निबंध के शीर्षक के भाव को स्पष्ट किया जाता है। इसमें सामान्य प्रस्तावना भी होती है, जिन आयामों को निबंध में समेटा जाएगा या विषय के जिन पक्षों पर मध्य भाग में चर्चा की जाएगी निबंध का आरंभ किसी सुंदर लोकोक्ति, मुहावरे अथवा किसी सुंदर वाक्य से हो, अच्छा है, ताकि पाठक इसको पढ़ने को लालायित हो सके।

(2) मध्य:—

निबंध के मध्य भाग में मुख्य निबंध विषय का विवेचन किया जाता है। इस विवेचन को विभिन्न अनुच्छेदों में विभाजित किया जाता है। पहले अनुच्छेद का अंतिम वाक्य अगले अनुच्छेद की पहली पंक्ति संबंधी हो तो पाठक को लेख में भावों की लहरें उठती और गिरती नजर आने लगती है। यह साहित्य क्रमिक होना चाहिए। निबंध में कथ्य विषय तर्क—संगत होना चाहिए इसमें व्यक्तिगत अनुभव भी संजोए जा सकते हैं।

(3) अंतः—

निबंध का अंत अथवा समापन ऐसा हो, जिसमें पाठक को लगे कि जिस विषय का विस्तार से प्रतिपादन हुआ है उसका समाहार युक्तियुक्त तथा तर्कसंगत है। ऐसा कोई विषय नहीं बचा है, जिसे उठाया न गया हो और उसके प्रति न्याय नहीं हो पाया हो।

अच्छे निबंध के गुणः—

निबंध लिखते समय निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना आवश्यक है। ये बातें निबंध के कलापक्ष और भावपक्ष को निखारती हैं—

(1) कला पक्षः—

1. विषयानुसार शब्दावली का प्रयोग।
2. सरल वाक्य रचना।
3. भावानुकूल भाषा।
4. विचारों की क्रमबद्धता।
5. विचारों की एकता।
6. विषय—वस्तु के विस्तार के प्रति न्याय।
7. रचना की सरलता तथा सजीवता।
8. पुनरावृत्ति का वहिष्कार।
9. विषयांतर त्याग।
10. निजी शैली।

(2) भाव पक्षः—

1. विचारों की नूतनता।
2. मौलिकता।

3. कल्पना—प्रवणता ।
4. व्यक्तित्व की छाप ।
5. प्रभावोत्पादकता ।

निबंध शिक्षण की विधियाँ:—

अध्यापक के समक्ष सदा यह चुनौती बनी रहती है कि विद्यार्थियों को किन विधियों से निबंध लिखवाए जाएं जिसमें गुणवत्ता बनी रहे। जैसे कुंभ के समय पुण्य तीर्थों पर स्नान के लिए पहुँचने के अनेक साधन और मार्ग हैं। ठीक उसी प्रकार निबंध सरिता में अवगाहन की कई शैलियां हैं। कक्षा के स्तर और विषय की आवश्यकता के अनुसार इसमें से किसी का भी चुनाव किया जा सकता है जो निम्नलिखित है—

(1) चित्र वर्णन विधि:—

इस विधि के अनुसार विद्यार्थियों को लिखे जाने वाले विषय से संबंधित एक या अनेक चित्र दिखाए जाते हैं ये चित्र किसी व्यक्ति के जीवन, घटनाक्रम के विकास अथवा अन्य पक्ष से संबंधित हो सकते हैं। पहले इन चित्रों पर मौखिक रूप से चर्चा होती है और फिर इन्हें क्रमिक रूप से प्रदर्शित किया जाता है। विद्यार्थी इनका वर्णन अपनी सूझ-बूझ और कल्पना के अनुसार करता है।

इस विधि का प्रयोग उच्च प्राथमिक कक्षाओं में सफलतापूर्वक किया जा सकता है। इस विधि से बच्चों में मौलिक लेखन तथा स्वानुभूति प्रकट करने का सुनहरा अवसर मिलता है। इस विधि से विषयों की विविधता बनी रहती है। और बच्चों को रटने की आदत से बचाया जा सकता है। इस विधि से बच्चों के अंदर निहित अभिव्यक्ति क्षमता को उभारने में सहायता मिलती है।

(2) प्रश्नोत्तर विधि:—

प्रश्नोत्तर विधि का संबंध चित्र विधि से भी है। अध्यापक चित्र के किसी भी पहलू पर प्रश्न पूछता है और विद्यार्थी उसका उत्तर देता है। इस प्रकार क्रमिक प्रश्नों का निर्माण और उनका क्रमिक उत्तर निबंध का रूप ले लेता है। चित्र के अभाव में विषय पर प्रश्न पूछने से उस कार्य की आंशिक सिद्धि हो जाती है।

इस विधि से विद्यार्थियों में चिंतन शक्ति का विकास होता है। तथा वे क्रमवद्ध रूप से सोचना सीखते हैं। इस विधि के माध्यम से बच्चों के अंदर लेखन के प्रति आत्म विश्वास जागृत हो जाता है।

(3) रूप रेखा विधि:—

जिस प्रकार बच्चे को पैदल चलना सिखाने के लिए किसी सहारे आदि का आश्रय देकर पद संचालन क्रिया को रोचक बनाया जा सकता है और उसे गिरने या चोट लगने के लिए आश्वस्त किया जा सकता है। उसी प्रकार निबंध जैसे ग्लेशियर को पार करने के लिए स्केटिंग पादुका या यष्टियों का काम निबंध की रूपरेखा से लिया जाता है।

इस विधि के अनुसार निबंध का आरम्भ, मध्य तथा समापन वाक्यांशों की रूपरेखा के माध्यम से दे दिया जाता है। ऐसे में विद्यार्थी को कुछ वाक्यों में रिक्त स्थानों की पूर्ति करनी पड़ती है, कुछ वाक्यों का निर्माण करना पड़ता है और कुछ वाक्यों से विषय के विस्तार में सहायता मिलती है।

यह विधि सभी स्तरों पर सफलतापूर्वक अपनाई जा सकती है। आवश्यकता मात्र रूपरेखा को विस्तृत अथवा संक्षिप्त करने की होती है।

प्रवचन विधि:—

इस विधि के अनुसार अध्यापक विषय के बारे में प्रवचन द्वारा पूरी जानकारी विद्यार्थियों के समक्ष रखता है, विद्यार्थी सुनते हैं तथा अपने-अपने सामर्थ्य के

अनुसार व्यक्तिगत पुट मिलाकर निबंध लिखते हैं। इस विधि को प्राथमिक स्तर के बच्चों के लिए उत्तम नहीं मानी जाती है।

स्वाध्याय विधि:—

इस विधि को प्राथमिक तथा उच्च कक्षाओं में स्तरानुसार अपनाया जा सकता है। अध्यापक तथा विद्यार्थियों दोनों को सक्रिय रहना पड़ता है। इस विधि से विद्यार्थियों के ज्ञान में वृद्धि होती है तथा विषय-सामग्री के स्वाध्याय के समय उनका विभिन्न लेखन शैलियों से परिचय हो जाता है। इस विधि से लेखन की अपनी शैली का निर्माण हो जाता है।

परिचर्चा विधि या विचार विधि:—

विश्लेषण पृष्ठभूमि के आधार पर देखा जाय तो परिचर्चा विधि स्वाध्याय विधि का ही अगला चरण है। पहले तो विद्यार्थी विवेच्य विधि के बारे में स्वाध्याय करें तथा फिर सामूहिक चर्चा करें। चर्चा करने से विचारों में स्पष्टता आती है और विषय के प्रति प्रतिबद्धता को जगाया और प्रवृत्त किया जा सकता है।

पत्र लेखन

पत्रों का जहाँ व्यक्तिगत, सामाजिक तथा व्यावसायिक महत्व है, वहाँ यह साहित्य की भी एक सशक्त विधा है। इस विधि की समुन्नति के लिए अध्यापक को सचेत रहना चाहिए। इसके शिक्षण में सुनियोजित वैज्ञानिक प्रणाली अपनानी चाहिए।

रूप की दृष्टि से पत्र-लेखन एक नियम-बद्ध रचना है। इसके सुनिश्चित अंग हैं। उन अंगों का यथास्थान नियोजन का एक विधान है। वैयक्तिक पत्रों के विषय मुक्त-रचना के विषय बन सकते हैं अर्थात् उनमें कल्पना, हास-परिहास का पुट संजोया जा सकता है।

पत्रलेखन के उद्देश्य:—

पत्र लेखन शिक्षण के निम्नलिखित उद्देश्य हैं—

1. व्यक्तिगत या पारिवारिक पत्र लिखना सिखाना, माता—पिता, भाई—बहन तथा अन्य संबंधियों तथा मित्रों को।
2. व्यावसायिक पत्र लिखना सिखाना, दुकान, फर्म, ऐजेंसी आदि से लेन—देन संबंधी।
3. कार्यालयीय पत्र लिखना सिखाना, विभिन्न अधिकारियों को प्रार्थना—पत्र आदि।
4. सरल, स्पष्ट, संक्षिप्त तथा शिष्ट भाषा में पत्र लेखन सिखाना।

पत्र के अंगः—

पत्र लेखन शिक्षण के लिए विद्यार्थियों को पत्र के विभिन्न अंगों के बारे में जानकारी देना आवश्यक है। मोटे रूप से पत्र के निम्नलिखित रूप हैं—

1. **स्थान तथा तिथिः—** पत्र के ऊपरी किनारे पर दाहिनी ओर पहली पंक्ति में पत्र भेजने वाले का स्थान तथा उसके पत्र लिखने की तिथि होनी चाहिए।
2. **प्रशस्तिः—** पत्र आरम्भ करने से पूर्व दाईं ओर पत्र लेखक के संबंध के अनुसार संबोधन का प्रयोग करना चाहिए। यथा— आदरणीय भाई साहब आदि। संबोधन के बाद अर्धविराम (;) का चिह्न लगाना चाहिए।
3. **शिष्टाचारः—** प्रशस्ति के नीचे की पंक्ति में कुछ दाईं ओर संबंध के अनुसार शिष्टाचार का शब्द लिखना चाहिए। जैसे— प्रणाम, नमस्कार आदि।
4. **मूल विषयः—** शिष्टाचार शब्द की अगली पंक्ति से मूल—विषय आरंभ करना चाहिए मूल विषय की लंबाई विषय के अनुसार हो। छोटे—छोटे अनुच्छेदों में विभाजित करना चाहिए।
5. **पत्र की समाप्तिः—** पत्र की समाप्ति दाईं ओर पत्र लिखने वाले से अपना संबंध द्योतन अथवा अन्य विनम्र शब्द लिखना चाहिए। यथा— आपका पुत्र,

रुनेही, हितैषी आदि। सरकारी पत्रों में बहुधा भवदीय या भवदीया शब्द लिखा जाता है। इसके नीचे स्पष्ट हस्ताक्षर का नियम है।

6. **पता:—** पोस्टकार्ड या लिफाफे पर जिसे पत्र भेजना है, उसका पूरा नाम तथा पता लिखना चाहिए। आजकल पिनकोड लिखने से डाक-विभाग को बहुत सुविधा होने लगी है। तथा पत्र भी गंतव्य पर शीघ्र पहुँचता है।

पत्र लेखन सिखाने की विधि:—

पत्र लेखन प्रार्थना के रूप में तीसरी या चौथी कक्षा से आरम्भ हो जाता है और विषय भिन्नता के साथ उच्च कक्षाओं तक इसका अभ्यास कराया जाता है। प्रशिक्षणार्थी के समक्ष यह समस्या बनी रहती है कि वह विद्यार्थियों को पत्र लेखन कैसे समझाएँ। पत्र लेखन के लिए निम्नलिखित विधियाँ अपनाई जा सकती हैं—

आदर्श विधि:—

इस विधि के अनुसार विद्यार्थियों के समक्ष पत्र का नमूना या आदर्श प्रस्तुत किया जाता है। छोटी कक्षाओं में पत्र के विभिन्न अंगों तथा इन अंगों को लिखने की विधि को समझाना बड़ा कठिन है। विद्यार्थी आदर्श पत्र के नमूने को लिखित रूप में श्यामपट्ट पर देखते हैं और उसकी नकल कर लेते हैं। अध्यापक हर पंक्ति के लिखने की विधि की ओर उसका ध्यान दिलाता है। यह पत्र सामान्यतः विद्यालय के प्रधानाचार्य या प्रधानाध्यापक के नाम विद्यालय से अवकाश लेने के लिए प्रार्थनापत्र के रूप में लिखवाया जाता है। आरंभ में इस प्रणाली का उपयोग करने से बच्चे आसानी से समझ लेते हैं।

खंडशः पत्र लेखन विधि:—

इस विधि के अनुसार विद्यार्थियों के समक्ष पत्र के एक-एक खंड पर विचार किया जाता है। अध्यापक विद्यार्थियों से प्रश्न पूछता है। जैसे—

यह प्रार्थना पत्र किसके नाम लिखना है?

उस अधिकारी का पद क्या है?

वह किस विद्यालय का अधिकारी है?

वह विद्यालय कहाँ स्थित है?

विद्यार्थी एक-एक प्रश्न का उत्तर देता है और अध्यापक उसे उचित स्थान पर श्यामपट्ट पर लिखता जाता है। इस प्रकार विद्यार्थी के सामने पत्र का एक खंड स्पष्ट रूप से उभर कर आता है।

इसके बाद प्रशस्ति खंड आता है। यहाँ भी अध्यापक प्रश्न पूछता है— उस अधिकारी को हम किस सम्मानजनक शब्द से संबोधित करते हैं? अध्यापक स्वयं उस शब्द का परिचय दें। यथा— महोदय, श्रीमान आदि।

अब पत्र का मूल विषय संबंधी खंड अभ्यास आरम्भ होगा। यहाँ भी अध्यापक प्रश्न पूछे—

हमारे निवेदन का क्या विषय है?

हमें निवेदन की क्यों आवश्यकता है?

हमें कब से अवकाश चाहिए?

हमें कब तक अवकाश चाहिए?

इसी प्रकार के प्रश्न कक्षा स्तर के अनुसार पूछे जाने चाहिए। इन प्रश्नों के उत्तर श्यामपट्ट पर लिखते जाएं। प्रश्नों द्वारा मूल-विषय का नमूना विद्यार्थियों के सम्मुख उभर कर आ जाएगा। इस विधि से कक्षा में क्रियाशीलता भी बनी रहेगी और उन्हें ऐसा भी अनुभव नहीं होगा कि पत्र लेखन कोई कठिन काम है।

इसी प्रकार पत्र को समाप्ति खंड पर भी प्रश्न पूछे जा सकते हैं। खंडशः पत्र लेखन विधि से विद्यार्थियों के समक्ष पत्र का सारा नमूना आदर्श रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है।

खंड-पत्र विश्लेषण विधि:-

पत्र के हर एक खंड पर एक-एक करके चर्चा की जा सकती है। यथा-

क्र.सं.	संबोधन	प्रशस्ति	समाप्ति स्वनिर्देश
1	अपने से बड़े, अध्यापकों, नेताओं आदि के लिए	सादर प्रणाम	भवदीय
	श्रद्धेय गुरुजी, श्रद्धेय आचार्यजी आदि।	सादर प्रणाम	आपका आज्ञाकारी
2	अपने से बड़े संबंधियों के लिए	सादर प्रणाम	आपका प्रिय भाई
	आदरणीय भाई साहब, आदरणीय माताजी	सादर चरण-स्पर्श	आपका प्रिय पुत्र आदि।
3	समान आयु वालों के लिए प्रिय	सप्रेम नमस्ते	तुम्हारा प्रिय मित्र आदि
4	अपने से छोटों के लिए- चिरंजीव प्रिय पुत्र	प्रसन्न रहो	तुम्हारा शुभ चिंतक
	प्रिय पुत्र	सदा सुखी रहो	तुम्हारा हितैषी

इस प्रकार खंड-विश्लेषण से पत्र के सभी खंडों का उद्देश्य विद्यार्थी के सम्मुख स्पष्ट हो जाता है। आवश्यकता पड़ने पर थोड़े परिवर्तन के साथ वह पत्र का नमूना स्वयं बना सकता है।

रूपरेखा विधि:-

पत्र लेखन सीखने के लिए पत्र की रूपरेखा विधि भी अपनाई जा सकती है। इस विधि के अनुसार अध्यापक विद्यार्थियों को यह निर्देश दे सकता है-

1. पत्र जिसे लिखा जाना है।
2. उचित संबोधन।
3. उचित प्रशस्ति।

4. पत्र के विषय की रूपरेखा।
5. समापन।
6. पता।

विद्यार्थी को इस रूपरेखा के आधार पर पत्र लिखवाने चाहिए।

इकाई – 3

हिंदी-शिक्षण संबंधी सहायक सामग्री एवं सहगामी क्रिया-कलाप

शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया को सुचारु रूप से सम्पन्न करने के लिए अनेक प्रकार की सामग्री की आवश्यकता होती है। अध्यापन के दौरान पाठ्य-सामग्री को समझाते हुए शिक्षक जिन-जिन सामग्रियों का प्रयोग करता है वह सहायक सामग्री कहलाती है। किंतु आधुनिक शिक्षा प्रणाली में सहायक सामग्री के संबंध में कई नवाचार हुए हैं जिनकी सहायता से अध्ययन को रोचक व प्रभावपूर्ण बनाया जा सकता है। सहायक सामग्रियों द्वारा अर्जित ज्ञान अधिक स्थायी होता है। कोरी व्याख्या या भाषण अमनोवैज्ञानिक होते हैं जबकि उपकरण या संचार-माध्यमों के उपयोग से हम मनोवैज्ञानिक तरीके से शिक्षण-अधिगम को रुचिकर और मनोरंजक बना सकते हैं। सहज परिवेश में प्रत्यक्ष अनुभवों द्वारा अनुकरण करके सीखने में विषय वस्तु सरल, सुस्पष्ट, एवं सुग्राह्य होती है। सहायक-सामग्री के माध्यम से अमूर्त, जटिल एवं सूक्ष्म बातों को मूर्त, सरल एवं स्थूल बनाने में तथा विद्यार्थियों को उनका प्रत्यक्ष अनुभव करवाने में उपयोगी सिद्ध होते हैं। सहायक सामग्री के प्रयोग के समय शिक्षक भी अपने अध्यापन के प्रति उत्साहित रहता है। परिणामस्वरूप कक्षा का वातावरण हमेशा सकारात्मक बना रहता है। वर्तमान समय में वही शिक्षक छात्रों के लिए आदर्श होता है और उसी शिक्षक का शिक्षण आदर्श शिक्षण कहलाता है जो अपनी पाठ्य सामग्री को रोचक सहायक-सामग्री के माध्यम से प्रस्तुत करता है।

ऐसे में ये न केवल छात्रों का ध्यान केन्द्रित करती है बल्कि उन्हें उचित प्रेरणा भी देती है। चाहे वह वास्तविक वस्तु हो, चित्र, चार्ट उपकरण इन सभी से छात्रों के मस्तिष्क में एक विंब निर्माण करता है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि वर्तमान शिक्षण में नवीनता लाने के लिए सहायक-सामग्री का प्रयोग शिक्षक के लिए वांछनीय ही नहीं बल्कि अनिवार्य भी है।

सहायक सामग्री की परिभाषाएँ (Definition of Aids) :-

अनेक विद्वानों एवं भाषा वैज्ञानिकों ने अपने विचारों एवं सरोकारों को इस प्रकार रखा है कि शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया में इनकी आवश्यकता, उपयोगिता एवं सार्थकता ही महत्वपूर्ण है। कुछ विचारक इस प्रकार हैं—

डेण्ड के अनुसार:- “सहायक सामग्री वह सामग्री है जो कक्षा में या अन्य शिक्षण परिस्थितियों में लिखित या बोली गयी पाठ्य सामग्री को समझने में सहायता प्रदान करती है।”

एल्विन स्ट्रॉंग के अनुसार:- “सहायक सामग्री के अनुसार या अन्तर्गत उन सभी साधनों को सम्मिलित किया जाता है जिसकी सहायता से छात्रों की पाठ में रुचि बनी रहती है तथा वे उसे सरलतापूर्वक समझते हुए अधिगम के उद्देश्य को प्राप्त कर लेते हैं।”

कार्टर ए.गुड के अनुसार:- “कोई भी सामग्री जिसके माध्यम से शिक्षण प्रक्रिया को उद्दीप्त किया जा सके अथवा श्रवणेन्द्रिय संवेदनाओं के द्वारा आगे बढ़ाया जा सके वही सहायक सामग्री कहलाती है।”

उपरोक्त परिभाषाओं से यह स्पष्ट होता है कि ‘सहायक सामग्री वह सामग्री’ उपकरण तथा उक्तियाँ हैं जिनके प्रयोग करने से विभिन्न शिक्षण परिस्थितियों में छात्र समूहों के मध्य प्रभावशाली ढंग से ज्ञान का संचार होता है।

भाषा शिक्षण में प्रयुक्त सहायक सामग्री या उपकरणों के प्रकार एवं उनकी उपयोगिता:—

शिक्षण के उपकरणों का क्षेत्र बहुत व्यापक है। इनका वर्गीकरण विभिन्न विद्वान अपने-अपने ढंग से अनेक प्रकार से करते हैं जो इस प्रकार है— मुद्रित तथा अमुद्रित उपकरण, व्ययहीन, अल्पव्ययी तथा व्यय साध्य उपकरण, परंपरागत तथा नवीन उपकरण, दृष्य, श्रव्य तथा दृष्य-श्रव्य उपकरण, प्रक्षेपित तथा अप्रक्षेपित उपकरण इत्यादि। इन उपकरणों का एक व्यापक वर्गीकरण निम्नांकित तरीके से किया जा सकता है— (1) मुद्रित उपकरण या सहायक सामग्री।

(2) अयांत्रिक उपकरण या सहायक सामग्री। (3) यांत्रिक उपकरण या सहायक सामग्री।

(1) मुद्रित उपकरण या सहायक सामग्री:—

मुद्रित उपकरणों से तात्पर्य कक्षा शिक्षण में प्रयुक्त होने वाले उन साधनों से है जो मुद्रित या प्रकाशित सामग्री के रूप में उपयोग में लाए जाते हैं। इनके अन्तर्गत पाठ्यपुस्तकें, सहायक पुस्तकें, अभ्यास पुस्तिकाएँ, पूरक पुस्तिकाएँ आदि आते हैं। इस प्रकाशित सामग्री का उपयोग आधारभूत सामग्री के रूप में भी किया जाता है। चित्र, दृष्टांत, परिभाषा आदि के रूप में पाठ्यवस्तु को अधिक स्पष्ट करने एवं ज्ञान में पूर्णता लाने के लिए सहायक या पूरक सामग्री के रूप में किया जाता है। शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया को सुचारु रूप से संपन्न करने के लिए मुद्रित सामग्री की आवश्यकता सर्वोपरि है। मोटे तौर पर कक्षा-शिक्षण सामग्री को दो वर्गों में अंतर कर देख सकते हैं। पहले वर्ग में वह सामग्री आती है, जिनका शिक्षक तथा शिक्षार्थी दोनों ही नियमित रूप से प्रयोग करते हैं। पाठ्य पुस्तक, पूरक पुस्तक, तथा अभ्यास-पुस्तिका खासतौर से प्राथमिक स्तर पर। वस्तुतः इस प्रकार की

सामग्री शिक्षण—अधिगम प्रक्रिया का अभिन्न अंग है, क्योंकि शिक्षक तथा शिक्षार्थी दोनों को ही इसके प्रयोग की आवश्यकता होती है।

दूसरे वर्ग में वह सामग्री आती है जो कक्षा में प्रस्तुत विषय वस्तु को विद्यार्थियों के लिए सुस्पष्ट, सुबोध, सुग्राह्य एवं सजीव बनाने में शिक्षक की सहायता करती है। ये सामग्री श्यामपट्ट, चार्ट, चित्र, मॉडल जैसे पारंपरिक उपकरण तथा स्लाइड, पारदर्शी चित्र, टेप (कैसेट) जैसे आधुनिक उपकरण और रेडियो, दूरदर्शन, चलचित्र जैसे संचार माध्यम आते हैं। इस प्रकार पहले वर्ग की सामग्री केन्द्रिक अथवा मूलभूत सामग्री कहलाती है। तथा दूसरे वर्ग की सामग्री सहायक सामग्री या उत्प्रेरक सामग्री। वैसे प्रचलित शब्दावली में पहले वर्ग की सामग्री को शैक्षणिक सामग्री कहा जाता है तथा दूसरे वर्ग की सामग्री को सहायक सामग्री अथवा शैक्षणिक उपकरण कहा जाता है।

(2) अयांत्रिक उपकरण या सहायक सामग्री:—

ऐसे शिक्षण साधन जिनमें यंत्रों अथवा मशीनों की आवश्यकता नहीं होती अयांत्रिक उपकरण कहलाते हैं। इन्हें अप्रक्षेपित उपकरण भी कहा जाता है। इनमें परंपरागत व्ययहीन और अल्पव्ययी दृष्य साधनों को सम्मिलित किया जाता है। जैसे—

(क) परंपरागत उपकरण या सहायक सामग्री:—

वे शिक्षण उपकरण जो प्राचीन काल से कक्षा—शिक्षण की स्थिति में प्रयोग में आते रहे हैं उन्हें ही परंपरागत सहायक सामग्री या उपकरण कहते हैं। ये कक्षा शिक्षण के अनिवार्य अंग हैं। इनके अभाव में कक्षा शिक्षण की प्रक्रिया को दृष्य रूप नहीं दिया जा सकता है। इनमें श्यापट्ट, रोलर बोर्ड, डस्टर, चॉक और कक्षा स्थिति में अनायास उपलब्ध होने वाली अन्य वस्तुओं को भी सम्मिलित करके शिक्षण प्रक्रिया को प्रभावशाली एवं यथार्थपरक बनाया जाता है। प्राचीन काल से अध्यापक

श्यामपट्ट पर चॉक के टुकड़े की सहायता से अपनी वाणी को सजीव रूप देते चला आ रहा है। ये उपकरण आज भी उतने ही उपयोगी हैं जितने कि पहले थे। विद्यार्थी श्यामपट्ट पर लिखित विषयवस्तु की रूपरेखा, शब्दार्थ, सारांश आदि को लिखकर अच्छी तरह समझ लेते हैं।

(ख) अल्पव्ययी उपकरण या सहायक सामग्री:—

अल्पव्ययी उपकरण कक्षा शिक्षण में प्रयुक्त होने वाले वे साधन हैं जिनका निर्माण ऐसी साधारण वस्तुओं से होता है जो हमें अपने परिवेश में आसानी से मिल जाती है। और जिनपर बहुत कम लागत आती है। अल्पव्ययी साधनों में फ्लैश कार्ड, रेखाचित्र, चार्ट, चित्र, डायग्राम, कटआउट्स, पोस्टर, नक्शे, फ्लैनलग्राफ, यथार्थ वस्तुओं के नमूने, प्रतिरूप आदि साधनों को शामिल किया जाता है।

भाषायी कक्षा शिक्षण के संदर्भ में सहायक सामग्रियों का संदर्भ तो परम्परागत है ही पर यथार्थता के आधार पर सुलभ पर पूर्णतः निदेशित वर्गीकरण इस प्रकार सुस्पष्ट एवं प्रचलित है—

1. **दृश्य साधन:—** दृश्य का अर्थ है देखने योग्य। इसका अभिप्राय यह हुआ कि ये वे उपकरण हैं जिन्हें छात्र देख सकते हैं। इनका संबंध नेत्रों से है यथा— श्यामपट्ट, चित्र, मानचित्र, मूकचित्र, चित्रविस्तारक आदि।
2. **श्रव्य साधन:—** इनका संबंध कानों से होता है इसलिए इन्हें श्रवणेन्द्रिय भी कहा जाता है। इन्हें श्रवण कर छात्र ज्ञान प्राप्त करते हैं। मुख्य उपकरण— रेडियो, ग्रामोफोन, टेलीफोन, टेप—रिकॉर्ड आदि है।
3. **दृष्य-श्रव्य साधन:—** इन उपकरणों का संबंध छात्रों की आँखों एवं कानों दोनों से है। इसमें दृष्येन्द्रिय एवं श्रवणेन्द्रिय दोनों का एक साथ प्रयोग करके ज्ञान प्राप्त करते हैं। उदाहरण स्वरूप— टेलीविजन, चल-चित्र और नाटक आदि।

संचार उपकरण को दो भागों में बाँटकर निम्नलिखित वर्गीकरण से समझ सकते हैं—

(1) अयांत्रिक उपकरण (2) यांत्रिक उपकरण

(1) अयांत्रिक उपकरण:—

- | | | |
|----------------|-------------|--------------------|
| 1. श्यामपट्ट | 5. चार्ट्स | 9. पोस्टर |
| 2. रोलर बोर्ड | 6. चित्र | 10. नमूने |
| 3. लेष कार्ड्स | 7. डायग्राम | 11. पत्र-पत्रिकाएँ |
| 4. रेखाचित्र | 8. कटआउट्स | 12. प्रतिरूप आदि। |

(2) यांत्रिक उपकरण:—

(अ) श्रव्य उपकरण

1. ग्रामोफोन
2. टेप रिकार्डर / सीडी प्लेयर
3. रेडियो
4. मोबाइल फोन
5. कम्प्यूटर

(ब) दृष्य-श्रव्य उपकरण

- | | |
|---------------------|-------------------------|
| 1. प्राजेक्टर | 9. कम्प्यूटर |
| 2. फिल्म | 10. पावर प्वाइंट |
| 3. टेलीविजन | 11. स्मार्ट बोर्ड |
| 4. वीडियो | 12. ई-लर्निंग लाइब्रेरी |
| 5. डीबीडी / सीडी0 | 13. आनलाइन |
| 6. स्लाइड्स | कम्प्यूनिकेशन या |
| 7. मोबाइल फोन | (आनलाइन संवाद) |
| 8. इंटरनेट का उपयोग | 14. टेली / वीडियो |
| | कॉन्फ्रेंसिंग |

हिंदी शिक्षक एवं सहायक सामग्री:—

हिंदी शिक्षक अनुदेशानात्मक सामग्री की सहायता से हिंदी साहित्य एवं भाषा का ठोस ज्ञान छात्रों को दे सकता है। भाषा, भावों, विचारों को व्यक्त करती है। लेकिन अनुदेशानात्मक सामग्री इन भावों एवं विचारों के सूक्ष्म रूप को ठोस बनाती है। अतः अनुदेशानात्मक सामग्री को प्रयुक्त करते समय शिक्षक को निम्न बातें ध्यान में रखनी चाहिए—

1. शिक्षक को ठोस जानकारी हो, तभी इन साधनों का प्रयोग करें।
2. शिक्षक मनोविज्ञान का ज्ञाता हो।
3. अध्यापक छात्रों के अधिगम को प्रभावशाली बनाने के लिए एक समय में कई साधनों का प्रयोग न करें।
4. उपकरणों के चयन में शिक्षक पर्याप्त सावधानी बरतें।
5. शिक्षक को यह महत्वपूर्ण तथ्य ध्यान में रखना होगा कि उपकरण साधन है, साध्य नहीं।

प्रमुख श्रव्य साधनों की उपयोगिता:—

रेडियो:—

एक अत्यंत उपयोगी एवं सुलभ साधन है। समाचार, नाटक, भजन, गीत, संगीत, साक्षात्कार, कहानी पाठ, कविता पाठ, संवाद नाटक, रूपक, प्रहसन, झलकी, एकांकी, कवि सम्मेलन आदि की रेडियो द्वारा आकर्षक प्रस्तुति से विद्यार्थी मनोरंजक पूर्वक सही उच्चारण एवं अभिव्यक्ति की क्षमता प्राप्त कर सकते हैं। एन0सी0ई0आर0टी0 द्वारा आकाशवाणी से रेडियो पर प्रसारित कार्यक्रम ज्ञानवाणी शिक्षण में अत्यंत उपयोगी है। आकाशवाणी द्वारा विद्यालय के लिए प्रसारित किए जाने वाले प्रसारणों को कक्षा-शिक्षण में प्रयुक्त किया जा सकता है। किसी कारणवश विद्यालय प्रसारण का कार्यक्रम कक्षा में प्रसारित नहीं करवाया जा सके तो टेप-रिकार्डर से टेप करके उक्त प्रसारण को कक्षा में सुनाया जा सकता है।

ग्रामोफोन तथा लिंग्वाफून:—

रेडियो की ही भाँति यह शिक्षण का माध्यम रहा है वर्तमान में इसका प्रयोग कम ही देखने को मिलता है। इसके माध्यम से छात्रों के अशुद्ध उच्चारण को शुद्ध करने में काफी मदद मिलती है।

टेप-रिकार्डर:-

टेप-रिकॉर्डर ध्वनियों के ज्ञान हेतु विशेष भूमिका निभाता है। जिसमें छात्र अपनी ही आवाज को रिकॉर्ड कर बार-बार सुन सकते हैं ताकि शब्दों के सही उच्चारण, बोलने की गति, आरोह-अवरोह, विराम चिन्हों का प्रयोग, अपने वक्तव्य तथा उच्चारण सम्बन्धी त्रुटियों को भली-भाँति समझकर उसमें सुधार कर सकें।

कम्प्यूटर:-

विगत कुछ वर्षों से कम्प्यूटर का उपयोग शिक्षा के क्षेत्र में व्यापक रूप से किया जा रहा है। कम्प्यूटर की प्रक्रिया हार्डवेयर और साफ्टवेयर दोनों ही आगमों पर आधारित है। इस प्रक्रिया को शिक्षा के प्राथमिक स्तर से लेकर उच्च स्तर तक समान रूप से प्रयोग में लाया जा सकता है। प्रक्रिया के अन्तर्गत कम्प्यूटर द्वारा स्क्रीन पर जो अनुदेश प्राप्त किया जाता है, उसका अध्ययन करने के पश्चात् विद्यार्थी को अपनी अनुक्रिया का अवसर उपलब्ध होता है। अनुक्रिया करने हेतु विद्यार्थियों के पास एअर फोन और माइक्रोफोन रहते हैं। विद्यार्थी स्क्रीन पर प्रदर्शित विकल्पात्मक उत्तरों को देखकर अथवा माइक्रोफोन से बोलकर अनुक्रिया करता है। एअरफोन तथा कम्प्यूटर के सहयोग से विद्यार्थियों एवं कम्प्यूटर के मध्य निरंतर संप्रेक्षण और अनुक्रिया होती रहती है।

पैलेटोग्राफ की सहायता से मुख विवर के अगले भाग में जिह्वा के क्रियाकलाप से ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है, मुखरंध्र और स्वरतंत्रियों की कंपन गति को मापने के लिए 'असिलोग्राफ' और 'काइनोग्राफ' का उपयोग किया जाता है। इनके द्वारा सघोष और अघोष ध्वनियों के भेदों को भी प्रदर्शित किया जा सकता है। काइनोग्राफों से ध्वनियों की अनुनासिकता, महाप्राणता तथा दीर्घता आदि नापी जा सकती हैं। ध्वनि विस्तारक यंत्रों की सहायता से ध्वनियों को अलग-अलग

सरलता से गिना जा सकता है। साउन्ड स्पैक्टो ग्राफ से दृश्य मानचित्रों को पुनः ध्वनिमय बनाया जा सकता है।

ध्वनियों के चित्र खींचने उनको महाप्राणत्व अल्पप्राणत्व, संघोषत्व, अघोषत्व, गुरुत्व, लघुत्व, दीर्घता, आरोह—अवरोह, अनुनासिकता, निरनुनासिकता, बलाघात और स्वर—तंत्रियों के कंपन आदि की गति को पहचानने की दृष्टि से ध्वनियंत्रों की उपयोगिता अपरिहार्य है।

प्रक्षेपित दृश्य—श्रव्य उपकरणों के अन्तर्गत फिल्म, टेलीविजन, वीडियो कैसेट, रिकार्डर, फिल्म—प्रोजेक्टर, चित्र विस्तारक यंत्र (एपिडायस कोप), चित्र पट्टियाँ (फिल्मस्ट्रिप्स) दृश्य—श्रव्य कैसेट, स्लाइडस आदि आते हैं। इन उपकरणों की सहायता से एक ओर भाषा के विभिन्न घटकों वाक्य साचों, सूक्तियों, मुहावरों, वाक्यांशों, शब्द, लिपि संकेतों और व्याकरण के तथ्यों का अभ्यास कराया जा सकता है, तो दूसरी ओर भाषा के सामाजिक और सांस्कृतिक तथ्यों की जानकारी भी बड़े प्रभावपूर्ण ढंग से संप्रेषित की जा सकती है।

टेलीविजन एवं फिल्म:—

आधुनिक संचार माध्यमों में 'श्रव्य—दृश्य' माध्यमों के रूप में फिल्म टेलीविजन एवं वीडियो अत्यंत लोकप्रिय है। श्रव्य—दृश्य माध्यमों में ध्वनि के साथ—साथ दृश्यों या चित्रों का भी समावेश होता है। अतः यही कारण है कि इनको देखते—सुनते हुए हमारी सभी इन्द्रियाँ सक्रिय रहती हैं इसलिए इन माध्यमों से पहुँचाए गए संदेश को हम आसानी से ग्रहण कर लेते हैं। फिल्म एवं टेलीविजन की प्रभाव क्षमता अन्य संचार माध्यमों की तुलना में कहीं अधिक है। ये माध्यम प्रमुख रूप से मनोरंजन परक हैं, लेकिन साथ ही साथ ये हमें सूचना और शिक्षा भी देते हैं।

दूरदर्शन:-

दूरदर्शन विश्व की समस्त घटनाओं का आँखों देखा हाल लोगों तक पहुँचाता है। दूरदर्शन मनोरंजन के साथ-साथ शिक्षा भी प्रदान करता है। दूरदर्शन ने पूरी दुनियाँ को एक परिवार के रूप में बदल दिया है। दूरदर्शन और चलचित्रों द्वारा प्रसारित कार्यक्रम, देश-विदेशों की घटनाओं, कार्य-कलापों, साहित्यिक, सामाजिक, सांस्कृतिक गतिविधियों और दृश्यों को सजीव एवं यथार्थ रूप से प्रस्तुत करते हैं। दूरदर्शन के कार्यक्रमों द्वारा विद्यार्थियों में एकता और सद्भावना की प्रेरणा मिलती है। जिससे वे राष्ट्र की मुख्य धारा से जुड़ते हैं। इनके द्वारा समाज की मान्यताओं, जीवन-मूल्यों, सांस्कृतिक परम्पराओं आदि की जानकारी विद्यार्थियों को मिलती है। जिससे उनका चारित्रिक विकास होता है। सूर, मीरा, तुलसी या अन्य कवि अथवा लेखक पर आधारित ब्लू-चित्र, कविता आदि प्रसारण का कक्षा-शिक्षण में उपयोग विद्यार्थियों के लिए हिंदी भाषा शिक्षण में तो उपयोगी होता है, उनकी साहित्यिक समझ को विकसित करने में भी सहायक सिद्ध होता है।

इंटरनेट:-

आज पूरे विश्व में संचार क्रांति एवं तकनीक माध्यम पैर पसार चुके हैं और यह सब संभव हुआ है— एक अत्यंत महत्वपूर्ण संचार तकनीक से जिसे हम इंटरनेट के नाम से जानते हैं। इंटरनेट पूरी दुनियां में फैले हुए कम्प्यूटरों का एक ऐसा संजाल है, जिसके द्वारा सभी कम्प्यूटर आपस में जुड़े हुए हैं और एक दूसरे से संचार करने में सक्षम हैं। इंटरनेट विभिन्न देशों और महाद्वीपों में कम्प्यूटरों का 'वर्ल्ड वाइड नेटवर्क' (विश्व स्तरीय संजाल) है जो एक दूसरे से सर्वर कहे जाने वाले इंटरकनेक्टेड लिंक्स से जुड़े हैं। ये सर्वर शक्तिशाली मशीनें होती हैं, जिसमें वेबसाइट्स होती हैं। यह विश्व के विभिन्न भागों में होते हैं जो 24 घंटे इंटरनेट से जुड़े होते हैं।

इंटरनेट वास्तव में न तो कोई प्रोग्राम है, ना ही हार्डवेयर, न कोई साफ्टवेयर या सिस्टम भी नहीं है। इंटरनेट एक ऐसा मंच या माध्यम है, जहाँ आसानी से सूचनाओं का आदान-प्रदान किया जा सकता है। इंटरनेट विश्व के विभिन्न स्थानों पर स्थापित कम्प्यूटरों के नेटवर्क को टेलीफोन लाइन की सहायता से जोड़कर बनाया गया एक अंतराष्ट्रीय सूचना मार्ग है, जिस पर सूचना-तंत्र मानव की मुट्ठी में बंद होता जा रहा है। इंटरनेट को कई नामों से जाना जाता है, जैसे- साइबर स्पेस, सुपर हाइवे, इनफार्मेशन नेट, या आनलाईन। इंटरनेट द्वारा हिंदी शिक्षण की व्यापक सामग्री प्राप्त हो सकती है।

शिक्षा में इंटरनेट:-

किसी भी विषय के बारे में वृहद एवं नवीन जानकारी इंटरनेट के जरिए भी संभव है। जहाँ किसी भी विषय पर ढेरों जानकारियाँ उपलब्ध हैं। इससे एमय की बचत होती है एवं सोच का दायरा भी बहुत बढ़ता है। सूचना तकनीकी विद्यार्थियों को प्रस्तुतीकरण का महत्व भी ज्ञात करवाती है। घर बैठे दूरस्थ शिक्षण प्रणाली से ज्ञान प्राप्त करना भी इंटरनेट के द्वारा सुलभ हो गया है। इंटरनेट के माध्यम सस्ते में सुलभ है। प्रत्येक विषय पर उनके अध्याय और नोट्स उपलब्ध है। उपलब्ध पुस्तकों एवं दृश्य-श्रव्य कैसेट एवं सीडी की उपलब्धता का पता भी इंटरनेट से ज्ञात हो जाता है। शिक्षा के अतिरिक्त ज्ञान-विज्ञान की नई खोजों और तकनीकी जाकारियाँ इंटरनेट पर उपलब्ध है।

वेबसाइट:-

वेबसाइट कम्प्यूटर का एक अध्याय है। यदि कम्प्यूटर पर किसी विशेष-वस्तु के बारे में जानकारी प्राप्त करनी है तो उससे संबंध अध्याय अर्थात् साइट का नाम टाइप करके कुछ ही क्षणों में वांछित सूचना या जानकारी कम्प्यूटर मॉनीटर पर प्राप्त की जा सकती है। वेबसाइट पते के अन्तिम तीन अक्षर महत्वपूर्ण होते हैं, जो

बताते हैं कि आपने जो साइट खोली है, यह कौन सी है। इंटरनेट को समझने के लिए इससे जुड़े दो अन्य संकेतों की जानकारी जरूरी है— ये प्रत्येक वेबसाइट में लिखे होते हैं] **www** और **http/www** जिसे **w³** या वर्ल्ड वाइड वेब भी कहते हैं। यह केन्द्र है जो इंटरनेट की पूरी दुनियां को नियंत्रित करता है। **www** का कार्यालय अमेरिका के वर्जीनिया शहर में स्थित है। किसी भी साइट को खोलने के लिए उस पते की जानकारी कूटभाषा इस कार्यालय तक पहुँचाना जरूरी है जो उस कूट भाषा **http** अर्थात् हाइपर टेक्स्ट ट्रांसफर प्रोटोकॉल के द्वारा **www** के कार्यालय में पहुँचाई जाती है। इसका अर्थ यह हुआ कि आप जिस साइट को खोलना चाहते हैं, उसे **www** सीधे ग्रहण नहीं कर पाता है **http** आपकी बात उसे कूटभाषा में समझाता है और आप तक वांछित सूचना पहुँचाता है। इस प्रकार इंटरनेट उपयोगकर्ता और **www** के बीच **http** माध्यम का कार्य करता है।

ई-मेल/ इलेक्ट्रॉनिक मेल:—

ई-मेल इंटरनेट के द्वारा संचालित इलेक्ट्रॉनिक मेल एक प्रकार की सेवा है। इस संचार माध्यम के द्वारा कोई भी संदेश/पत्र/शिक्षण सामग्री विद्युत गति से विश्व के किसी भी कोने में स्थिति कम्प्यूटर मॉनीटर पर पहुँचा सकते हैं। वहीं उनका प्रिंट निकाल लिया जाता है। ई-मेल, फैंक्स की अपेक्षा सस्ता और विश्वसनीय संचार माध्यम है। ई-मेल को विश्वभर में कहीं भी, किसी के पास भेज सकते हैं। इसके लिए अपने पास भी अपना ई-मेल एकाउंट होना चाहिए।

कम लागत की शिक्षण—सामग्री या अल्पव्ययी उपकरण:—

अल्पव्ययी उपकरण या कम लागत की शिक्षण सहायक सामग्री कक्षा—शिक्षण में प्रयुक्त होने वाले वे साधन हैं जिनका निर्माण ऐसी साधारण वस्तुओं से होता है जो हमें अपने परिवेश में आसानी से मिल जाती है और जिनपर बहुत कम लागत

आती है। अल्पव्ययी साधनों में फ्लैशकार्ड, रेखाचित्र, चार्ट, चित्र, डायग्राम, कटआउट्स, पोस्टर, नक्शें, फ्लैनलग्राफ, यथार्थ वस्तुओं के नमूने, प्रतिरूप आदि साधनों को शामिल किया जा सकता है। ये उपकरण बाजार से भी खरीदे जा सकते हैं। इन्हें अध्यापक या विद्यार्थी आवश्यकतानुसार बिना पैसे खर्च किए या बहुत पैसे खर्च करके स्वयं भी बना सकते हैं। इनके प्रयोग से शिक्षण प्रक्रिया को रोचक, सरस, बोधगम्य तथा प्रभावपूर्ण बनाया जा सकता है।

अल्पव्ययी उपकरणों के निर्माण में विद्यार्थियों और गाँव के कारीगरों की सहायता भी ली जा सकती है किन्तु शिक्षण सामग्री को समझाने की दृष्टि से अध्यापक की भूमिका सर्वोपरि होती है। जिन पिछड़े इलाकों और गाँवों की परिस्थिति में व्यय साधन उपलब्ध नहीं कराए जा सकते, वहाँ विषय वस्तु के स्पष्टीकरण के लिए अल्पव्ययी तथा व्ययहीन साधनों के निर्माण की आवश्यकता होती है। इनका निर्माण करते समय विषयवस्तु के स्वरूप और स्रोत साधनों को जुटाने की समस्या पर भी गम्भीरता से भी विचार करना चाहिए। उदाहरण के लिए— भाषाई तथ्यों को समझाने, या वर्गीकरण करने की दृष्टि से कागजों, गत्तों, रंगीन पेंसिलों, पंखों, पनियों, फलों के बीजों, बांस की तीलियों, शंखों, बुशों और धागों की सहायता से रंग-विरंगे फ्लैश कार्डों, चार्टों, रेखाचित्रों, प्रतिरूपों, नमूनों आदि का निर्माण आसानी से किया जा सकता है। इसके प्रयोग से वर्ण लेखन, वाक्य रचना, व्याकरण के तथ्यों और भेद-प्रभेदों की झलक सरलता से प्रस्तुत की जा सकती है।

चित्र:-

भाषा के कठिन एवं गहन स्थलों को स्पष्ट करने में चित्रों तथा चित्र-श्रृंखलाओं की उपयोगिता सर्वमान्य है। चित्र शब्दों, वाक्यों, घटनाओं और कहानियों का प्रतिनिधित्व करते हैं। क्रियाशील चित्र-श्रृंखला रचना और कहानी

शिक्षण का अनुपम साधन है। शब्दों और चित्रों का समन्वय भाषा—शिक्षण की प्रक्रिया को जीवंत बना देते हैं।

रेखाचित्र:—

रेखाचित्रों के अंतर्गत चार्टों, पोस्टरों, कार्टूनों, हास्य—व्यंग्य चित्रों, मानचित्रों आदि का समावेश होता है। फ्लैनलग्राफ या खद्दरोग्राफ पर क्रमबद्ध रूप में व्याकरण के लिंग, वचन, कारक, क्रिया, विशेषण आदि के भेदों को चार्ट के रूप में प्रदर्शित किया जा सकता है। मानचित्रों के प्रयोग से प्रदेशों का भाषावार वर्गीकरण दिखाया जा सकता है। पोस्टर, कार्टून और हास्य—व्यंग्य चित्र किसी व्यक्ति विचार एवं स्थिति के चित्र होते हैं जिनका समूह पर गहरा प्रभाव पड़ता है। इनसे उपहासात्मक किंतु विचारपरक हास्य—व्यंग्य एवं अतिशयोक्तिपूर्ण स्थलों के गूढ़ भावों का स्पष्टीकरण होता है। ये विचारों को क्रमबद्ध तथा गतिमय रूप में प्रस्तुत करते हैं। विज्ञापन एवं इशतहार भी भाषा शिक्षण के प्रभावी तथा भावोत्तेजक साधन हैं।

प्रतिरूप, डायोरमा तथा नमूने:—

कक्षा शिक्षण में रोचकता लाने में मूलवस्तु के स्थान पर प्रतिरूप और डायोरमा का उपयोग होता है। ये छोटी से छोटी वस्तु को बड़ी और बड़ी से बड़ी वस्तु को छोटी बना सकते हैं। भाषा रचना, अभिव्यक्ति और कविता शिक्षण में ताजमहल, वायुयान, विधान सभा, रेलगाड़ी आदि के प्रतिरूप उपयोगी सिद्ध होते हैं।

डायोरमा त्रिकोणात्मक ठोस पदार्थ होता है। इसके द्वारा प्राकृतिक दृश्यों, रेगिस्तान, हल्दीघाटी, युद्धरत शिवाजी, चेतक और महाराणा प्रताप आदि से संबंधित कविताओं की अनुभूति उत्तम ढंग से कराई जा सकती है। प्रतिरूप और डायोरमा दोनों से ही प्राकृतिक दृश्यों के सजीव रूप प्रस्तुत किए जा सकते हैं। जहाँ किसी भाव, विचार या तथ्य को यथार्थ एवं सहज—स्थिति में स्पष्ट करना होता है, वहाँ वस्तुओं और पदार्थों के नमूने भी कक्षा में प्रस्तुत करके विषय—वस्तु को सहज रूप

में समझाया जा सकता है। फूल, पत्ती, फल और बीज आदि के नमूने ज्ञान को सही रूप में आत्मसात् करने में बड़े सहायक होते हैं। वस्तुओं के आकार, रूप, रंग आदि के विषय में कोई भ्रम की गुजांइश भी नहीं रहती है।

फ्लैश कार्ड:-

ये अत्यंत साधारण, व्ययहीन और प्रभावशाली दृश्य उपकरण होते हैं। ये चित्रात्मक और लिखित दोनों प्रकार के हो सकते हैं। गतिशील चित्र और उनसे संबंधित वाक्य देकर लिंग, वचन और काल आदि की व्यवस्था सरलता से समझाई जा सकती है। वर्णमाला शिक्षण में फ्लैशकार्डों का विशेष महत्व है। एक वर्ण को सिखाने के लिए फ्लैश कार्ड पर अनेक वर्ण दिए जाते हैं जो उस वर्ण से आरंभ होते हैं। 'क' वर्ण के चित्रात्मक फ्लैश कार्ड का एक नमूना देखें—



फलैश कार्डों में शब्दों के साथ उनके चित्र भी दिए जाते हैं। आरंभिक कक्षाओं में शब्दों और वाक्यों के चित्र सहित फलैश कार्ड अधिक उपयोगी सिद्ध हो सकते हैं। इनसे किसी एक वस्तु, घटना या मूल्य की झलक एक दृष्टि में प्रस्तुत की जा सकती है। वर्तनी सिखाने के लिए फलैश कार्डों का प्रयोग उपयोगी सिद्ध हो सकता है।

यहाँ पर उपयुक्त अयांत्रिक और यांत्रिक सहायक सामग्री का चित्र प्रस्तुत किए जा सकते हैं—

चित्र, रेखाचित्र, फलशकार्ड, रोलर बोर्ड, कम्प्यूटर इत्यादि।

हिंदी—शिक्षण संबंधी सहगामी क्रिया—कलापः—

भाषा—शिक्षण के लिए सामान्यतः पाठ्यपुस्तक तथा पूरक पाठ्य—पुस्तकों का प्रयोग किया जाता है किंतु भाषा एक कौशल प्रधान विषय है और किसी विषय में कुशलता प्राप्त करने के लिए यह आवश्यक होता है कि शिक्षार्थी को ऐसे अधिकाधिक अनुभव प्राप्त हों जिसके द्वारा उसे कुशलता प्राप्ति के अनेकानेक अवसर मिलें। भाषा के संदर्भ में पाठ्यपुस्तक तथा पूरक पाठ्य—सामग्री पर्याप्त नहीं है। इसके लिए हमें शिक्षार्थियों को पाठ्यपुस्तक में निर्धारित सामग्री के अतिरिक्त अन्य ऐसे माध्यम उपलब्ध कराने चाहिए जिसके द्वारा वे अपने आपको मौखिक तथा लिखित रूप से सहज अनुभव प्राप्त कर सकें। भाषा—शिक्षण में सहशैक्षणिक कार्यकलाप इस दृष्टि से अत्यंत उपयोगी सिद्ध हो सकते हैं। ऐसे अनुभव शिक्षार्थियों को सृजनात्मक, आत्मप्रकाशन, चिंतन—मनन, तर्क—वितर्क तथा भाषा के व्यावहारिक प्रयोग के समुचित अवसर देते हैं। साथ ही ये कार्यकलाप पाठ को रोचक बनाने, अभ्यास कराने, विषय को व्यवहार का अंग बनाने या आत्मसात करने में सहायक होते हैं।

व्यवहारागत उद्देश्यः—

सहशैक्षणिक कार्यकलापों के निम्नलिखित उद्देश्य हैं—

1. सहशैक्षणिक कार्यकलापों का महत्व और उद्देश्य बता सकेंगे।
2. सहशैक्षणिक कार्यकलाप के मौखिक रूप— पठन, वाद—विवाद, अंत्याक्षरी, कवितापाठ, कहानी सुनाना आदि कार्यकलापों से संबंधित प्रतियोगिताओं के आयोजन के विधि से अवगत होकर उन्हें कार्यरूप दे सकेंगे।
3. सहशैक्षणिक कार्यकलापों के लिखित रूप— सुलेख, निबंध, कहानी, मौलिक लेखन संबंधी प्रतियोगिताओं का आयोजन कर सकेंगे और उनके संबंध में प्रतिवेदन (Report) लिख सकेंगे।

सहशैक्षणिक कार्य कलापों का महत्व और उद्देश्यः—

इस बात की चर्चा की जा चुकी है कि पाठ्यचर्या के उद्देश्यों की पूर्ति मात्र पाठ्यपुस्तक या कक्षा—शिक्षण से पूरी नहीं हो सकती। केवल ज्ञान या सूचना देने से शिक्षा के उद्देश्य उस समय तक पूरे नहीं हो सकते, तबतक उन्हें व्यवहार का जामा नहीं पहना दिया जाता। मात्र पाठ्यपुस्तक शिक्षण, एकांगी दृष्टिकोण उत्पन्न करता है। सहशैक्षणिक कार्यकलाप व्यक्तित्व को समग्रता प्रदान करते हैं। ये कार्यकलाप लोकतांत्रिक जीवन पद्धति के अनुरूप नागरिक—विकास करते हैं। संक्षेप में कह सकते हैं कि ये कार्यकलाप, विद्यार्थी की शैक्षिक, मनोवैज्ञानिक तथा सामाजिक आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं।

सहशैक्षणिक कार्यकलापों के आयोजन के मुख्य उद्देश्य हैं—

1. विद्यार्थियों के सृजनात्मक शक्ति के विकास के अवसर प्रदान करना।
2. उनको स्वयं अपनी रुचि के क्षेत्र पहचानने के अवसर प्रदान करना।
3. उनकी मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं की पूर्ति करना यथा— व्यक्तित्व की पहचान, अगुआई की भावना, पहल की भावना इत्यादि।

4. पाठ्यक्रम के उन अनुभूतिपरक क्षेत्रों की पूर्ति करना जिनकी पूर्ति कक्षा-शिक्षण से संभव नहीं है।
5. विद्यार्थियों को इन कार्यकलापों के आयोजन की व्यवस्था के अवसर देकर उत्तरदायी पीढ़ी का निर्माण करना।

प्रतियोगिता आयोजन के आधारभूत सिद्धांत:-

अलग-अलग प्रतियोगिताओं के आयोजनों पर चर्चा करने से पहले उनके आधारभूत सिद्धांतों पर विचार कर लें जो सभी प्रतियोगिताओं से किसी न किसी रूप से संबंध रखते हैं।

1) वार्षिक योजना का निर्माण:- प्राप्त साधन, सुविधा, समय और राशि को ध्यान में रखते हुए प्रतियोगिता की वार्षिक योजना का निर्माण करना चाहिए। योजना बनाते समय लोकतांत्रिक विधि अपनायी जानी चाहिए इसकी सुगम विधि यह है कि प्रधानाचार्य सभी अध्यापकों से सुझाव आमंत्रित करें जिनके आधार पर एक समिति इस बात का निर्णय ले कि कौन-कौन सी प्रतियोगिताएँ करनी हैं, क्यों करनी है, कब करनी है और कैसे करनी है आदि।

2) संयोजक समिति को उत्तरदायी बनाना:- हर प्रतियोगिता को हर अध्यापक आयोजित नहीं कर सकता इसलिए अध्यापकों की रुचि के अनुसार छोटी-छोटी समितियों का गठन करना अच्छा रहता है। संयोजक समिति के हर चरण का उत्तरदायित्व सौंपना उचित है।

3) मूल्यांकन:- हर कार्यकलाप का प्रतिवेदन तैयार किया जाना चाहिए। और प्रतिवेदन पर सामूहिक रूप से चर्चा करके उनसे प्राप्त अनुभवों के आधार पर आगामी कार्यक्रम बनाए जाने चाहिए।

4) प्रमाण-पत्र वितरण:- हर प्रतिभागी का विधिवत रिकार्ड रखा जाना चाहिए। मूल्यांकन समिति की रिपोर्ट पर प्रतिभागियों को प्रथम, द्वितीय, तृतीय तथा सांत्वना

पुरस्कार देना चाहिए। पुरस्कार या प्रमाण-पत्र यदि समारोह पूर्वक दिए जाएं तो अच्छा रहेगा। इससे दूसरे विद्यार्थी भी अगली बार प्रयत्न करने को प्रोत्साहित होंगे।

5) सम्मान पट्ट:- यदि हर प्रतियोगिता के लिए अलग से वार्षिक सम्मानपट्ट बना दिए जाए तो उचित होगा। किसी भी प्रतियोगिता के आयोजन के संबंध में यह ध्यान रखें कि उनमें अधिकाधिक विद्यार्थियों को भाग लेने के अवसर दिए जाएँ। उद्देश्य मात्र विद्यार्थियों को प्रतियोगिता द्वारा सहभागिता के अवसर प्रदान करना है।

विभिन्न प्रकार के शैक्षणिक कार्यक्रम:-

भाषा शिक्षण की दृष्टि से शैक्षणिक कार्यकलापों को दो भागों में बाँटते हैं—

(1) मौखिक शैक्षणिक क्रियाकलाप (2) लिखित शैक्षणिक क्रियाकलाप

(1) मौखिक शैक्षणिक क्रियाकलाप:- ये वे कार्यक्रम हैं जिनका संबंध मौखिक या मुख द्वारा की गई अभिव्यक्ति से है।

पठन:- यह भाषा का महत्वपूर्ण पक्ष है। पठन संबंधी क्रियाओं का आयोजन कई स्तर पर किया जाता है। यथा—

1. पुस्तकालय या वाचनालय में अतिरिक्त पठन की व्यवस्था करना।
2. निर्देशित पठन (गाइडिंग रीडिंग) अर्थात् अध्यापक की देखरेख में पठन की व्यवस्था करना।
3. कक्षा के अनुसार पठन गति की प्रतियोगिताओं का आयोजन करना।
4. प्रार्थना सभा के समय समाचार पठन की व्यवस्था करना।
5. भावानुकूल (आदेश, निर्देश, प्रार्थना, अनुरोध, हर्ष-क्रोध आदि) आधारित पठन की प्रतियोगिताएं आयोजित करना।
6. चित्रमय कहानियों का पठन सिखाना।

7. कहानी, जीवनी, निबंध, नाटक आदि की पुस्तकों के विषयानुसार प्रदर्शन का आयोजन करना।
8. गाँधी—जयंती, बाल—दिवस, स्वतंत्रता—दिवस आदि अवसरों पर संबंधित विषय की पुस्तकों की प्रदर्शनी आयोजित करना।

वाद—विवाद:— वाद विवाद संबंधी क्रियाओं का आयोजन निम्न प्रकार किया जा सकता है। यथा—

1. समसामयिक विषयों पर वाद—विवाद के विषयों की सूची बनाना।
2. विद्यालय स्तर पर वादविवाद प्रतियोगिताओं का आयोजन करना तथा विद्यार्थियों द्वारा उनमें भाग लेना।
3. अन्तर्विद्यालय स्तर पर वादविवाद प्रतियोगिताओं का आयोजन करना तथा विद्यार्थियों द्वारा इनमें भाग लेना।
4. शिक्षण अभ्यास के समय वाद—विवाद संबंधी पाठ योजना का निर्माण करना।

इस प्रकार वाद—विवाद के माध्यम से विद्यार्थियों में तर्क—शक्ति, हाजिर—जबाबी, हास्य—व्यंग्य, विनोद—प्रियता, विचारों को संक्षिप्त रूप से अवसर के अनुकूल कहने तथा दूसरे के विचारों को धैर्यपूर्वक सुनने और समझने जैसे गुणों का विकास होता है। पूर्ववक्ता के विचारों पर अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करने की क्षमता भी विकसित होती है। इसमें भाग लेने से वक्ता में आत्मविश्वास उत्पन्न होता है।

वाद—विवाद के विषयों का सावधानीपूर्वक चुनाव करते समय हुए प्रतियोगिताएँ आयोजित करें। स्पष्ट नियम निर्धारित कर उनका पालन भी करें।

भाषण प्रतियोगिता:— दिए गए किसी विषय पर कक्षा में या सभा में अपने विचारों को क्रमबद्ध रूप में व्यक्त करना भाषण है। जिसे एक निश्चित समय में पूरा करना होता है। भाषण श्रोता के भावों और विचारों को उत्प्रेरित तथा प्रभावित करने का साधन है। लोकतांत्रिक व्यवस्था में भाषण का विशेष महत्व होता है। प्रशिक्षण काल

में तात्कालीन भाषण प्रतियोगिता तथा समसामयिक विषयों पर आधारित भाषण कार्यक्रमों में बढ़चढ़ कर भाग लें तथा शिक्षण अभ्यास के समय इस प्रकार के कार्यक्रमों का आयोजन करें। भाषण को प्रभावशाली बनाने के लिए उस विषय का व्यापक अध्ययन करना वांछनीय है क्योंकि सफल वक्ता बनने के लिए विषय का ज्ञाता होना आवश्यक है।

कहानी प्रतियोगिता:— कहानी के माध्यम से बच्चों के अभिव्यक्ति के विकास में सहायता मिलती है। बच्चों को कहानी सुनाना और सुनना बहुत अच्छा लगता है। इन कहानियों के विषय आयु के साथ बदलते रहते हैं। जैसे— आरम्भ में पशु-पक्षियों तथा परियों की कहानी रुचिकर लगती है किंतु धीरे-धीरे साहस, संघर्ष, युद्ध आदि की कहानियों में रुचि होने लगती है। किशोरावस्था में कहानियों के माध्यम से समस्या समाधान बहुत अच्छा लगता है। अतः विद्यार्थियों की रुचि, अवस्था एवं स्तर के अनुरूप कहानी का चयन किया जाना चाहिए। साथ ही साथ चयन में विविधता का भी ध्यान रखना चाहिए जैसे— साहसिक कथाएँ, हास्य कथाएँ, बोध कथाएँ, कल्पनाशील कथाएँ आदि। अर्थात् इन सभी प्रकार की कहानियों का कथानक सरल हो अर्थात् ऐसी कहानियाँ हों जिन्हें बच्चे याद करके स्वयं सुना सकें। अंततः हमारा उद्देश्य तो कहानी के माध्यम से उनकी अभिव्यक्ति का विकास है। कहानी चुनते समय यह भी ध्यान रखना चाहिए कि उसमें हाव-भाव एवं स्वर का उतार-चढ़ाव की पर्याप्त संभावना हो।

कविता वाचन प्रतियोगिता:— छंदबद्ध या छंदयुक्त कविता का सस्वर पाठ मौखिक अभिव्यक्ति की क्षमता के विकास में सहायक होता है। प्राथमिक स्तर की पाठ्यपुस्तकों में प्रायः बालगीतों तथा नाद सौन्दर्यवाली कविताएं दी जाती हैं। स्वयं इन कविताओं को उचित गति, लय एवं भाव के अनुसार पढ़ें तथा विद्यार्थियों को

इसी प्रकार सस्वर पाठ के लिए कहें। इन कविताओं को कंठस्थ करने के लिए भी प्रोत्साहित करें।

इस प्रकार सहगामी क्रिया—कलाप के माध्यम से हिंदी शिक्षण करने से छात्रों में भाषाभिव्यक्ति के प्रति रुचि एवं सीखने की क्षमता का विकास होगा।

(2) लिखित शैक्षणिक क्रियाकलाप

आज के विद्यालयी परिप्रेक्ष्य में पठन सबसे महत्वपूर्ण क्रिया है। 'पढ़ना' शब्द एक प्रकार से शिक्षा प्राप्ति का पर्याय बन गया है। वस्तुतः समस्त विद्यालयी विषयों में निहित ज्ञान की प्राप्ति का सहज सुलभ साधन पठन है। पठन के इस महत्व को देखते हुए यह आवश्यक हो जाता है कि पठन-क्रिया विद्यार्थी जीवन का एक महत्वपूर्ण अंग बन जाए और विद्यालयी जीवन में पड़ी हुई पढ़ने की आदत जीवन भर उसके साथ बनी रहे। ज्ञान-भंडार के प्रतिदिन बढ़ते हुए विस्तार को देखते हुए किसी भी शिक्षक के लिए यह संभव नहीं है कि वह समूचे ज्ञान को इकट्ठा कर विद्यार्थी तक पहुँचा दे। इसके लिए स्वयं विद्यार्थी को स्वयं पढ़ने की आदत/स्वाध्याय का ही सहारा लेना पड़ता है। किन्तु शिक्षक होने के नाते इतना जरूर हो कि विद्यार्थी में किसी न किसी प्रकार पढ़ने की आदत पड़ जाए। एक बार आदत पड़ जाने पर बालक में स्वतः ही स्वाध्याय की प्रवृत्ति विकसित हो जाएगी। वस्तुतः विद्यार्थी में पठनशीलता के गुण का विकास ही भाषा शिक्षक की सफलता की कसौटी है।

विद्यार्थी में पठनशीलता अथवा स्वाध्याय की प्रवृत्ति का विकास वर्ष भर एक या दो पाठ्य-पुस्तक के साथ बंधे रहने से संभव नहीं होता। पाठ्यपुस्तक के दायरे के बाहर पठन का विशाल क्षेत्र है। विद्यार्थियों को इस विशाल क्षेत्र से परिचित कराने के लिए अतिरिक्त पठन की ओर ले जाना होगा।

इस संदर्भ में बालोपयोगी पत्र-पत्रिकाओं तथा अन्य बाल-साहित्य का पठन एक सशक्त साधन सिद्ध हो सकता है। इनके माध्यम से बालक दिन-प्रतिदिन रोचक एवं मनोरंजक सामग्री के सम्पर्क में आकर पठनशीलता की ओर प्रेरित होगा। इनमें प्रकाशित ज्ञान-विज्ञान के नई-नई सामग्री के द्वारा अपने ज्ञान-क्षितिज का विस्तार करेगा। इतना ही नहीं बालक की पठनशीलता, उसकी कल्पनाशक्ति को उद्बुद्ध कर उसकी सर्जनात्मक शक्ति को भी उभारती है।

प्रस्तुत माड्यूल का उद्देश्य हिंदी में प्रकाशित प्रमुख बालोपयोगी पत्र-पत्रिकाओं की जानकारी प्रदान करना तथा भाषा-शिक्षण में उनके समुचित प्रयोग के लिए प्रेरित करना है, जिससे विद्यार्थियों में पठन-रुचि एवं स्वाध्याय की प्रवृत्ति विकसित हो सके और साथ ही उनकी सर्जनात्मकता को उभारने के लिए प्रेरक सामग्री मिल सके।

पत्र-पत्रिकाओं में निहित सामग्री का स्वरूप एवं उनका महत्व:—

बाल साहित्य बाल्यावस्था की शारीरिक, सामाजिक, मानसिक तथा मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर लिखा गया साहित्य है। बाल्यावस्था सामान्यतः 5 से 12 या 14 वर्ष की आयु तक मानी जाती है। इसके आरंभिक वर्ष पूर्व बाल्यावस्था तथा बाद के वर्ष उत्तर बाल्यावस्था कहलाते हैं।

बच्चों की मोटे रूप से शारीरिक आवश्यकताएँ हैं— भोजन, वस्त्र तथा आवास।

सामाजिक आवश्यकता है— अपने आयु-वर्ग के साथियों में खेलना—कूदना, सम्मान पाना।

मानसिक आवश्यकताएँ हैं— जिज्ञासा शांत करना, ज्ञानार्जन द्वारा व्यक्तित्व का प्रदर्शन करना।

मनोवैज्ञानिक आवश्यकता है— प्यार का आदान-प्रदान, स्वतंत्रता तथा सुरक्षा की भावना आदि।

जो साहित्य बाल्यावस्था की इन आवश्यकताओं को आधार मानकर लिखा जाता है वही वास्तविक बाल साहित्य है क्योंकि इस प्रकार के साहित्य में वह आत्मीयता का अनुभव करता है।

पत्र-पत्रिकाओं के संपादकों का यह प्रयत्न रहता है कि उनमें प्रकाशित सामग्री समसामायिक हो। इसके लिए वे वर्ष भर की घटित घटनाओं, तिथियों, दिनों, त्योहारों आदि की अंग्रिम डायरी तैयार करके तत्संबंधी सामग्री तैयार करते रहते हैं। विशेष अवसरों से सम्बंधित चित्रों का संग्रह करते हैं जो बच्चों के लिए रुचिकर एवं आकर्षक युक्त होता है। कुछ स्थितियों में पत्र-पत्रिका के विशेषांक भी प्रकाशित किये जाते हैं। कुछ विशेषांक इतने आकर्षक और उपयोगी होते हैं जो बच्चों के भविष्य एवं चरित्र निर्माण के लिए प्रमुख तत्व होते हैं।

बच्चों की रुचि के अनुसार सामग्री-चयन पत्रिका के महत्व को बढ़ाती है। उनकी रुचि के अनुसार या रुचिकर बनाने के लिए ऐसे संदर्भों का विवरण प्रस्तुत किया जा सकता है जो इस प्रकार हो सकते हैं— कुछ बच्चे सचित्र समाचारों की ओर ध्यान देते हों तो दूसरे संपादक के नाम लिखे गए पत्रों की ओर, कुछ बच्चे पत्रिका की कविताओं के नियमित पाठक हो तो कुछ बालोपयोगी नव प्रकाशित पुस्तकों की जानकारी प्राप्त करते हों। प्रकृति तथा प्राकृतिक पर्यावरण में रुचि रखने वाले बच्चों में भी कमी नहीं है। यदि विद्यार्थियों को पठन तथा पत्रिकाओं के संसार में रमण कराना चाहते हो तो उनकी वैयक्तिक रुचि-भिन्नता का सम्मान करें और रुचि सामग्री चयन में उन्हें पूर्ण स्वतन्त्रता दें।

बहुत संभव है— किसी को चित्रकारी या कशीदाकारी की सामग्री रुचिकर लगे। किसी को खेल समाचार पसंद हो। कोई बच्चा चुटकूले इकट्ठा करना पसंद करे। एक विद्यार्थी वैज्ञानिक आविष्कार के लिए तथा अन्य कार्टून कहानी के लिए

लालायित हो। कोई वैज्ञानिक आविष्कार की कहानी को रुचिकर तो कोई महाभारत और रामयण की कहानियों या प्रसंगों को रुचिकर बनाता है। कुछ बच्चे पशुओं एवं पक्षियों की कहानियों का चयन करना चाहते हैं तो कुछ प्रतियोगिता, पहेली प्रतियोगिता, ज्ञान-विज्ञान प्रश्नोत्तरी प्रतियोगिता आदि का भी रुचिकर सामग्री ढूँढते हैं।

आजकल लगभग प्रत्येक पत्र-पत्रिकाओं में मुख्यतः ज्ञानपहेली, शीर्षक रहता ही है जो बच्चों के अवस्थानुसार ज्ञान-पहेली में भाग लेने के लिए प्रेरित किया जा सकता है। 'शब्द-भंडार बढ़ाइए', 'शब्द-सामर्थ्य विकसित कीजिए' शीर्षक से अनेक अर्थों में से शब्दों के सही अर्थ चुनने के लिए कहा जाता है। कक्षा में प्रतियोगिता के रूप में इस सामग्री का उपयोग करके विद्यार्थियों के शब्द-भंडार को विकसित किया जा सकता है। ज्ञान और तकनीकी प्रगति के इस युग में बालक को नई-नई वैज्ञानिक खोजों नए-नए आविष्कारों से परिचित कराने के लिए पत्र-पत्रिकाओं का सार्थक उपयोग किया जा सकता है।

पठन रुचि के विस्तार के साथ-साथ विद्यार्थियों में स्वयंलेखन की इच्छा भी जाग्रत हो। इस दिशा में उन्हें यथासंभव प्रोत्साहित करें। किसी आपबीती घटना को, किसी रोचक संस्मरण, अथवा चुटकुले आदि को प्रकाशनार्थ भेजकर उनके स्वयंलेखन की जिज्ञासा को उभारा जा सकता है। यदि प्रकाशनार्थ योजना संभव न हो तो विद्यालय में भित्ति पत्रिका के माध्यम से बालकों की रचनाओं को प्रकाश में आने के अवसर दिए जा सकते हैं।

बाल साहित्य परम्परा और परिवेश:-

सामान्यतः बाल-साहित्य के मूल में बच्चों के मानसिक विकास, मार्ग-दर्शन, जिज्ञासा-पुष्टि, कल्पना-प्रस्फुटन और रुचि-परिष्कार आदि को प्रयोजन के रूप में स्वीकार किया जाता है।

विषय-वस्तु का चयन:-

'सुनियोजन' प्रत्येक कार्य को एक गरिमा प्रदान करता है। बाल-साहित्य लिखते समय रचनाकार को एक विशेष प्रयास करना होता है— अपने मस्तिष्क को बाल-रुचि के अनुकूल ढालने का, अपनी भाषा को बाल-समझ के अनुरूप बनाने का। उसे अपनी कलम में वह जादू भरना होता है जो बच्चों की खिलखिलाहट को वाणी का रूप दे सके, उसमें स्फूर्ति और मनोरंजन के भाव का संचार कर सके और उनकी कल्पना को उड़ान दे सके। इन सब बातों के लिए आवश्यक है कि वह लिखने से पूर्व विषय सम्बन्धी महत्वपूर्ण बातों का ध्यान रखें।

(1) बालकों का मानसिक स्तर (2) पठन रुचि (3) परिवेश (4) उपयोगिता (5) आयुवर्ग (बाल-वर्ग एक समान नहीं होता)

(1) बालकों का मानसिक स्तर:—

मानसिक स्तर को ध्यान में रखते हुए बाल-साहित्य की तीन श्रेणियां हो सकती हैं—

1. पहली श्रेणी में 6—8 वर्ष तक की आयु के बच्चों के लिए लिखा गया साहित्य रखा जाये।
2. दूसरी श्रेणी में 9—12 वर्ष की आयु के बच्चों का साहित्य और
3. तीसरी श्रेणी में 13—16 वर्ष तक की आयु के बच्चों का साहित्य।

विषय-चयन के समय लेखक यदि इस बात को ध्यान में रखे कि वह किस आयु वर्ग के लिए लिखने जा रहा है तो उनके अनुकूल ही वह भाव और भाषा के सम्बंध में सोच-विचार कर सकेगा। 6 से 16 वर्ष तक के बालकों का मानसिक स्तर एक सा नहीं होता। जो विषय 6 वर्ष के बच्चे के लिए रुचिकर हो सकता है वह 16 वर्ष के बच्चे के लिए नहीं। भाषा का भी ध्यान लेखक को रखना होगा। अक्सर बाल-साहित्य में 6.8 वर्ष तक के बच्चों के समझने-बूझने के लिए प्रायः बहुत कम साहित्य मिलता है। अतः श्रेयस्कर रहे यदि लेखक विषय चयन करते समय जिस आयु वर्ग के बालक के लिए लिख रहा है, उसके मानसिक स्तर को ध्यान में रखना चाहिए।

(2) पठन रुचि:—

बालकों की रुचि का क्षेत्र सीमित न होते हुए भी बड़ा विचित्र होता है और इस विचित्रता से आत्मसात कर जो लेखक अपने विचारों को रचना में ढालता है, लिखने के लिए विषय का चयन करता है, वहीं बाल-रुचि के अनुकूल लिख पाता है। बच्चों की रुचि उड़न-खटोले में बैठकर चांद की सैर करने में तो होती है, अमेरिका के अंतरिक्ष संबंधी वैज्ञानिक प्रयोग में नहीं। उसे खिलौनों के लिए परस्पर झगड़ने में आनन्द आ सकता है, राजनीतिक दाव-पेचों में नहीं। रचनाकार यदि उसकी इस रुचि को ध्यान में रखकर लिखते हुए विषय को चुने तो उसकी रचना बच्चों के अधिक समीप होगी।

(3) परिवेश:—

पठन-रुचि और बालक के परिवेश में बहुत समानता है। परिवेश में न केवल वे वस्तुएँ और ज्ञान जो उसके चारों ओर के वातावरण में बिखरा पड़ा है, अपितु वह सब विषय और कल्पनाएँ भी समाहित हैं जो नानी-दादी से सुनी हैं और जिन्हें नींद के हिलोरों के साथ भोगा है। यही कारण है कि बालक की दृष्टि उसके अपने वातावरण में तो रहती ही है साथ ही वह परियों के साथ उड़ान भी भरता है,

पशु-पक्षियों के साथ गाता, चहकता, महकता भी है। उसे भौतिक-जगत के थपेड़े और काल्पनिक जगत में उन्मुक्त विचरण के साथ ही वास्तविक जीवन में संबल देने के लिए मनुष्य मात्र को मार्ग दिखाने वाले सूत्र और जगत की कटुताओं को झेलकर सोने से निखरने वाले जीवन-मूल्य भी चाहिए। इसलिए बाल-साहित्य के लेखक को बालक के परिवेश का विस्तार से अध्ययन कर विषय का चुनाव करना चाहिए।

(4) उपयोगिता:-

बाल-साहित्य में मनोरंजन का तत्व जितना अधिक होगा वह बच्चों के लिए उतना ही आकर्षक होगा। छोटे-बच्चों की रुचि फूल, तितली, गुड़िया-गुड्डे में होगी पर इनके माध्यम से लेखक क्या सिखा रहा है यह विचारना भी आवश्यक है। यह सिखाना अथवा रचना की उपयोगिता प्रत्यक्ष न होकर परोक्ष रूप में रचना के अंतर्स में छिपी हो, यही अनिवार्य है। विषय ऐसा होना चाहिए जो बच्चों को कुछ नया सिखा जाय। ऐसे विषय-क्षेत्र जो उनके अनुभव से अछूते हों उनको बाल-साहित्य में सम्मिलित किया जाना चाहिए।

(5) आयुवर्ग के बालकों के स्तरानुकूल:-

बालक के पठन एवं लेखन कौशलों को विकसित करने के लिए बाल साहित्य एक अच्छा साधन है। बाल-साहित्य के रूप में बच्चे को जो भी जानकारी ज्ञान-वर्धन अथवा मनोरंजन हेतु दी जा रही है वह उसकी भाषा से दूर न हो, लेखक को इस बात का ध्यान रखना चाहिए। बच्चों की अपनी भाषा से तात्पर्य उनके मानसिक स्तर या कक्षा स्तर के अनुकूल भाषा से है। लेखक शब्द-भंडार में वृद्धि करने हेतु लेखक अपनी भाषा में अपरिचित भाषा या प्रतिकूल भाषा का प्रयोग करता है तो वह सरासर भूल करता है। इसलिए लेखक को यह कोशिश करनी चाहिए कि बच्चों के स्तरानुकूल भाषा का प्रयोग करे, जिससे उनकी अधिगम क्षमता बनती जाए।

बाल-साहित्य का प्रस्तुतीकरण:- बच्चों के मानसिक स्तर, पठन, रुचि उनके लिए उपयोगी और पर्यावरण के अनुकूल विषय चयन करने के पश्चात् उसे अभिव्यक्त करने का भी अपना एक ढंग होता है। यही प्रस्तुतीकरण है। बाल साहित्य में प्रस्तुतीकरण का पक्ष बहुत ही प्रबल होता है। चयनित विषय को बड़े ही रोचक ढंग से प्रस्तुत किया जाना चाहिए। विषय इस ढंग से प्रस्तुत किया जाना चाहिए कि उसमें बालकों की कल्पनाशक्ति जाग्रत करने की क्षमता हो और अपनी सृजनशीलता को उभार या सृजित कर सके। पुस्तक को आद्योपांत पढ़ने से बालकों की रुचि बराबर बनी रहे तो यही प्रस्तुतीकरण की सबसे बड़ी कसौटी है।

साहित्यिक विधा:- साधारणतया बच्चों को कहानी सबसे प्रिय विधा है। जो बच्चों की रुचि, उत्सुकता एवं ललक को बहुत ही सरल ढंग से उभारती है। उसके

अतिरिक्त भी भारतीय भाषाओं में अन्य ऐसी विधाएं हैं जो बच्चों के रुचि एवं उपयोगिता के लिए महत्वपूर्ण हैं और उस पर भरपूर ध्यान भी देना चाहिए। पत्र, डायरी, रिपोर्टाज, साक्षात्कार बच्चों को समझने और प्रस्तुत करने में उनकी भाषाई क्षमता का विकास उत्तरोत्तर बढ़ता ही जाएगा। अतः बाल साहित्यकारों को जहाँ विषय के अनुरूप विषय का चयन करना चाहिए, वहीं कुछ ऐसी नवीन विधाओं से भी बालकों को परिचित कराते रहना चाहिए।

शैली:— शैली जहाँ विषय के अनुरूप हो, वहीं उसका आकर्षक, सरल और प्रवाहमयी होना भी आवश्यक है। सहजता और स्वाभाविकता शैली के अनिवार्य गुण हैं। सहज एवं स्वाभाविक शैली बालकों की रुचि उत्पादन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

सामग्री का गठन:— प्रस्तुत सामग्री का गठन, चाहे वह पुस्तक में हो, अथवा कहानी विशेष में जो इस प्रकार से होना चाहिए कि उसमें क्रमबद्धता बनी रहे। तथ्यों तथा घटनाओं में एक सम्पर्क सूत्र बना रहे। विषयों के सभी पक्षों में एक संतुलन होना और आदि, मध्य तथा अंत में संतुलन होना भी सामग्री के गठन की दृष्टि से आवश्यक है।

निष्कर्षतः यह साफ हो जाता है कि बाल-साहित्य का लेखक बँधा हुआ नहीं चलता है बल्कि स्पष्ट, साफगोई एवं मर्मज्ञ होता है, जो सम्भव उद्देश्य निर्धारण ही रचना प्रक्रिया की सफलता है।

इकाई – 5

हिंदी शिक्षण में मूल्यांकन

बालक का सर्वांगीण विकास शिक्षा का आधारभूत लक्ष्य है। किंतु सामान्यतः बालक के मानसिक विकास को तथा उसकी ज्ञानोपलब्धि को ही शिक्षा का लक्ष्य मान लिया जाता है। इसी दृष्टि से लिखित परीक्षा में प्राप्तांक बालक के शैक्षिक विकास की कसौटी बन जाते हैं, यद्यपि ये प्राप्तांक उसके ज्ञानोपलब्धि के स्तर के ही सूचक होते हैं। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि ऐसी कसौटी से बालक के व्यक्तित्व के अन्य पहलुओं के विकास-स्तर की जाँच नहीं हो पाती है। शिक्षा पद्धति की इस कमी को दूर करने के लिए बालक के व्यक्तित्व के सभी पक्षों के विकास स्तर का सही-सही मूल्य आँकने के लिए शिक्षाविदों ने एक नवीन उपागम अपनाया है, जिसे ही 'मूल्यांकन' की संज्ञा दी गयी है।

मूल्यांकन का अर्थ, "किसी व्यक्ति, वस्तु अथवा प्रक्रिया का मूल्य निश्चित करना।" बालक की शिक्षा में इस संकल्पना का बहुत ही महत्व है। मूल्यांकन के द्वारा ही हमें पता चलता है कि— बालक के शिक्षा के निर्धारित उद्देश्य, शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया, प्रदत्त तथा अधिगम अनुभव किस सीमा तक बालक में अपेक्षित परिवर्तन लाने में सफल हुए हैं और उनमें क्या संशोधन तथा सुधार वांछनीय हैं। इस दृष्टि से बालक के लिए शिक्षा को अर्थवान बनाने की दिशा में 'मूल्यांकन' एक प्रयोग है। इसलिए यह आवश्यक है कि छात्राध्यापक शिक्षण की कला के साथ-साथ मूल्यांकन की संकल्पना, उद्देश्य, प्रकार, विधियाँ तथा निदान और उपचार की संकल्पना से परिचित एवं प्रायोगिक रूप से सिद्ध हो तभी मूल्यांकन के स्वरूप का पूर्ण रूप दिखेगा। शिक्षण प्रक्रिया के तीन चरण माने जाते हैं। (1) उद्देश्यों का निर्धारण (2) उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए दिए जाने वाले अनुभव (3) अपेक्षित उद्देश्यों की संप्राप्ति की संभावना ज्ञात करने के लिए मापन और मूल्यांकन।

प्रायः विद्यालय में मापन के लिए परीक्षाएं होती हैं। उन परीक्षाओं के आधार पर विद्यार्थी अपने अर्जित ज्ञान एवं परिवर्तित व्यवहार का परिचय देते हैं। मूल्यांकन मनुष्य की अर्जित योग्यता या परिवर्तित व्यवहारों की जानकारी का दस्तावेज है।

मूल्यांकन का उद्देश्यः—

मूल्यांकन के निम्नलिखित उद्देश्य हैं— वर्गीकरण, चयन, निदान।

वर्गीकरण:—

मूल्यांकन का उद्देश्य विद्यार्थियों का वर्गीकरण करना है। परीक्षण के आधार पर विद्यार्थियों को श्रेणियों में विभाजित किया जाता है। अतः किसी परीक्षण में कठिन 20: सामान्य 60: और सरल 20: , इन तीनों स्तरों के प्रश्न होने से, श्रेष्ठ, सामान्य और कमजोर विद्यार्थियों में अंतर किया जा सके। साधारण स्तर के प्रश्न, साधारण और कमजोर विद्यार्थियों में परस्पर अंतर कर सकेंगे और कठिन स्तर के प्रश्नों में प्राप्तांकों की सहायता से श्रेष्ठ, सामान्य तथा कमजोर विद्यार्थियों में अंतर किया जा सकेगा। जो परीक्षण इस अंतर को जितनी भली प्रकार दर्शा सकेगा वह परीक्षण वर्गीकरण की दृष्टि से उतना ही उत्तम होगा।

चयन:—

मूल्यांकन का दूसरा उद्देश्य किसी विशेष प्रयोजन के लिए विद्यार्थियों का चयन करना होता है। छात्रवृत्ति देने के लिए अथवा सृजनात्मक योग्यता का पता लगाने के लिए विद्यार्थियों का चयन करना। ऐसे परीक्षण के प्रश्नों की दो विशेषताएं होनी चाहिए। पहला यह कि वह उद्देश्य के अनुकूल हो। सृजनात्मक योग्यता वाले विद्यार्थियों का चयन करने के लिए प्रश्नों का स्वरूप सृजनात्मक हो। इस दृष्टि से कविता रचना, समस्यापूर्ति मौलिक कहानी अथवा लेखन द्वारा परीक्षण उपयुक्त होगा। अच्छे वक्ताओं का चयन करने के लिए भाषण, परिचय, वाद—विवाद जैसे साधनों का उपयोग किया जा सकता है। दूसरे ऐसे प्रश्न अत्यंत कठिन होने चाहिए क्योंकि बहुत से विद्यार्थियों में से कुछ विद्यार्थियों का चयन अत्यंत कठिन होगा।

निदान:—

मूल्यांकन का तीसरा उद्देश्य शैक्षिक संप्राप्ति में विद्यार्थियों की कमजोरी जानना है और उस जानकारी के आधार पर उपचरात्मक शिक्षण का आयोजन करना है। निदानात्मक प्रश्न—पत्रों का निर्माण संप्राप्ति परीक्षण द्वारा प्राप्त संकेतों के आधार पर किया जाता है। निदानात्मक प्रश्न—पत्र से यह जानकारी हो जाती है कि किस क्षेत्र में तथा किस पक्ष में विद्यार्थी की संप्राप्ति संतोषजनक नहीं है। फिर इस कमजोरी का कारण ज्ञात करके उपचरात्मक शिक्षण के लिए सामग्री तैयार की जाती है।

हिंदी शिक्षण में मूल्यांकन के लिए प्रयुक्त विधियाँ एवं साधन या उपकरण:—

भाषा शिक्षण का उद्देश्य विद्यार्थियों में भाषा के चारों कौशलों— 'सुनना, बोलना, पढ़ना तथा लिखना' की योग्यता का विकास करना है। इनमें से दो का संबंध भाषा के मौखिक रूप से है और शेष दो का संबंध लिखित रूप से। अतएव

भाषा संप्राप्ति के क्षेत्र में मूल्यांकन दो प्रकार से किया जा सकता है— मौखिक एवं लिखित। स्वाभाविक है कि मौखिक कौशलों की योग्यता के मूल्यांकन के लिए मौखिक विधियाँ उपयुक्त होंगी और लिखित कौशलों के लिए लिखित। इन विधियों के अन्तर्गत विभिन्न उपकरणों का प्रयोग किया जाता है—

(1) मौखिक परीक्षा: वार्तालाप, प्रश्नोत्तर और भाषण।

(2) सस्वर वाचन।

लिखित विधि के उपकरण — प्रतिलेख, अनुलेख, श्रुतलेख, लिखित प्रश्न-पत्र
मौखिक विधि के उपकरण या साधन:—

प्रकृति की दृष्टि से वार्तालाप, प्रश्नोत्तर तथा भाषण एक वर्ग में आते हैं क्योंकि इनमें केवल मौखिक अभिव्यक्ति का प्रयोग होता है और उसी की परीक्षा भी होती है पर सस्वर वाचन इन तीनों से दोबातों में भिन्न है, एक— इनमें लिखित सामग्री का प्रयोग होता है और दूसरे इसके दो उद्देश्य हो सकते हैं— सस्वर वाचन की कुशलता का परीक्षण तथा अर्थग्रहण का परीक्षण।

(1) मौखिक परीक्षा:—

मौखिक अभिव्यक्ति के मूल्यांकन के लिए तीन उपकरण या साधन प्रयोग में लाए जाते हैं— वार्तालाप, प्रश्नोत्तर तथा भाषण।

वार्तालाप:— वार्तालाप दो रूपों में होता है।

(1) परीक्षक और परीक्षार्थी के बीच।

(2) परीक्षार्थियों में परस्पर।

ये दोनों रूप अपेक्षाकृत अनौपचारिक होते हैं।

वार्तालाप के प्रथम रूप के अंतर्गत परीक्षकों द्वारा उठाए गए बिंदुओं की सहायता से परीक्षक को परीक्षार्थी का परिचय प्राप्त करना और उनकी झिझक को दूर करना। वार्तालाप के इस रूप का प्रयोग परीक्षकों तथा परीक्षार्थियों में सौहार्दपूर्ण संबंध स्थापित करने के लिए किया जाता है।

दूसरे रूप में विद्यार्थियों द्वारा परस्पर विचार-विमर्श करने के लिए परीक्षार्थियों को वर्गों में विभाजित कर प्रत्येक वर्ग को कोई एक विषय दिया जा सकता है जो शीर्षक के रूप में या अनुच्छेद के रूप में हो सकता है। विषय अथवा अनुच्छेद परीक्षार्थियों को पाँच मिनट पहले दिया जाय। वार्तालाप के ये दोनों रूप सृजनात्मक स्तर की परीक्षा के लिए अधिक उपयोगी होते हैं।

प्रश्नोत्तर:—

लघुत्तरीय प्रश्न किसी भी मौखिक परीक्षा के लिए उपयुक्त होते हैं। इसके अंतर्गत ऐसे छोटे-छोटे सूचनात्मक, विचारात्मक तथा भावात्मक प्रश्न किए जाते हैं

जिनका उत्तर परीक्षार्थी तुरंत या थोड़े समय में ही दे सके। इससे यह लाभ होता है कि विभिन्न पृष्ठभूमि तथा रुचि वाले परीक्षार्थियों के अनुकूल विषयवस्तु पर प्रश्न पूछे जा सकते हैं। इस प्रकार प्रत्यास्मरणात्मक तथा रचनात्मक स्तर की अभिव्यक्ति की परीक्षा के लिए उपयोगी होते हैं।

(1) भाषण:— मौखिक अभिव्यक्ति का परीक्षण करने के लिए परीक्षार्थियों से भाषण दिलवाया जा सकता है। पर भाषण के विषय अभिव्यक्ति के विभिन्न स्तरों के अनुसार ही चुने जाने चाहिए। परीक्षा से पूर्व विषय की जानकारी दे दी जानी चाहिए। भाषण के विषयों में ऐसी समस्याएँ देनी चाहिए कि वे परीक्षार्थियों को तुरंत अभिव्यक्ति के लिए अभिप्रेरित करें।

(2) सस्वर पठन/पाठन:—

यह परीक्षा की ऐसी विधि है जो बहुत कुछ मौखिक परीक्षा जैसा है। समग्र दृष्टि से मौखिक अभिव्यक्ति का यांत्रिक पक्ष तथा सस्वर पठन एक समान है। पर दोनों में अंतर यह है कि सस्वर पठन में परीक्षार्थी को कोई लिखित सामग्री दे दी जाती है और परीक्षार्थी को उस लिखित सामग्री का सस्वर अर्थपूर्ण वाचन करना होता है, जबकि मौखिक परीक्षा में परीक्षार्थी बिना किसी सामग्री के सहारे से बोलता है। सस्वर पठन या वाचन में निम्नलिखित बिंदुओं पर ध्यान देना चाहिए—

(क) सस्वर पठन के माध्यम से एक ओर बलाघात, अनुमान, गति, मुद्रा तथा हाव-भाव की परीक्षा की जाती है।

(ख) परीक्षार्थी की अर्थपूर्ण वाचन क्षमता।

लिखित विधि के उपकरण:—

1) प्रतिलेख:—

प्रतिलेख के अंतर्गत विद्यार्थी से लिपि चिह्नों को अंकित कराया जाता है। इसे नकल करना भी कहते हैं। इसका उद्देश्य यह जानना है कि विद्यार्थी सुपाठ्य लेख लिख पाते हैं या नहीं। इसका उपयोग एकदम प्रारंभिक कक्षाओं के लिए किया जाता है। प्रतिलेख के माध्यम से विद्यार्थियों द्वारा लिखित लेख में निम्नलिखित बातें देखी जाती हैं।

(क) अलग-अलग लिपि चिह्नों का आकार तथा आकृति और विभिन्न रेखाओं की दृष्टि से उसका सुझौलपन पूर्ण वर्ण तथा संयुक्ताक्षर दोनों रूपों में।

(ख) शब्दों में लिपि चिह्नों का आनुपातिक आकार तथा उपयुक्त दूरी।

(ग) वाक्य तथा वाक्यांश में शब्दों का आनुपातिक आकार तथा फासला।

लेख की सुपाठ्यता तथा सुडौलपन के परीक्षण के अतिरिक्त प्रतिलेख की परीक्षा द्वारा यह भी देखा जा सकता है कि किसी लिपि चिह्न के लिए खींची जाने वाली रेखाओं का क्रम तथा उसकी दिशा उपयुक्त है या नहीं। शिक्षण तथा परीक्षण करते समय लेख तथा लेखन-प्रक्रिया दोनों पर ध्यान देना चाहिए।

2) अनुलेख:-

इसमें अध्यापक श्यामपट्ट पर कुछ लिखता जाता है और विद्यार्थी श्यामपट्ट की सामग्री को देख-देखकर उसे अपनी कापी पर उतारते जाते हैं। इसका मुख्य उद्देश्य यह देखना होता है कि विद्यार्थी हस्तलिपि को देखकर लगभग उसी गति से शुद्ध लिखपाता है या नहीं; जिस गति से अध्यापक लिखता है।

3) श्रुतलेख:-

यह विद्या प्राथमिक और उच्च प्राथमिक कक्षाओं में खासकर होती है। वैसे श्रुतलेख का उपयोग तो उच्च कक्षाओं तक भी होता है। श्रुतलेख का मुख्य उद्देश्य सुनी हुई सामग्री को गतिपूर्वक शुद्ध लिखने की योग्यता की परीक्षा करना है। गतिपूर्ण श्रुतलेख की परीक्षा शुद्ध श्रुतलेख के अभ्यास के बाद ही संभव हो सकता है।

मूल्यांकन का लक्ष्य उन तथ्यों को प्राप्त करना होता है जिसके आधार पर हिंदी शिक्षण को सुनियोजित तथा प्रभावशाली बनाया जा सके। मूल्यांकन हिंदी शिक्षण की प्रक्रिया का मूलाधार है। मूल्यांकन के प्रभाव के संबंध में यह भी माना जाता है कि मूल्यांकन में प्राप्त सुचनाएं पाठ्यक्रम तथा चल रही पाठ-योजना को बदलने का कारण भी बन जाता है। विद्यालय में विभिन्न चरणों में विभिन्न स्तरों पर मूल्यांकन की आवश्यकता पड़ती है।

प्रश्न-पत्र निर्माण:-

मूल्यांकन या निरीक्षण प्रश्न-पत्र पर निर्भर करता है। प्रश्न-पत्र भी मापन या परीक्षण का उपकरण है। हिंदी भाषा में या किसी भी विषय में प्रश्न-पत्रों के माध्यम से ही मूल्यांकन की संप्राप्ति सुनिश्चित की जाती है। प्रश्न-पत्र के निर्माण में उद्देश्य, उद्देश्य मान् प्रश्न-पत्र प्रारूप, प्रश्न-पत्र अंक-योजना की प्रक्रियाएं शामिल होती हैं। इससे प्रक्रिया के प्रस्तावित पाठ्यक्रम के उद्देश्यों को प्रश्नों के प्रकार, उनकी संख्या एवं अंक-वितरण के साथ समायोजित किया जाता है। इस वितरण के आधार पर ही प्रश्नों का निर्माण किया जाता है।

प्रश्न-पत्र के उद्देश्य:-

- (अ) प्रश्न-पत्र के उद्देश्यों का स्पष्टीकरण आवश्यक है। ज्ञान के अंतर्गत स्मृति आधारित उत्तर आते हैं। इनमें पहचान और पत्यास्मरण का व्यवहार सम्मिलित होता है। उदाहरण स्वरूप- किसी शब्द की वर्तनी अथवा अर्थ दिए गए विकल्पों में से चुनना प्रत्ययविज्ञान के अंतर्गत आता है।
- (ब) अर्थ-ग्रहण के लिए किसी न किसी पाठ्य-वस्तु का प्रस्तुत होना अनिवार्य शर्त है। अतः किसी दिए गए काव्यांश या गद्यांश पर पूछे गए अर्थ सम्बंधी प्रश्न अर्थग्रहण के उद्देश्य के अंतर्गत आते हैं।
- (स) अभिव्यक्ति इस उद्देश्य के अंतर्गत विद्यार्थी अपने स्वयं ज्ञान और अर्थ-ग्रहण क्षमता को भौतिक कथन अथवा लिखित रचना प्रस्तुत करके प्रदर्शित करता है। अभिव्यक्ति के अंतर्गत भाषा के लिखित अथवा मौखिक स्वरूप के प्रयोग संबंधी समस्त व्यवहार सम्मिलित हैं।

प्रश्नों के प्रकार:-

सामान्यतया प्रश्न-निर्माण करते समय 3 प्रकार के प्रश्नों का प्रयोग किया जाता है-

- 1) अति लघु उत्तर वाले प्रश्न - अति लघूत्तरात्मक प्रश्न - वस्तुनिष्ठ
- 2) लघु उत्तर वाले प्रश्न - लघूत्तरात्मक प्रश्न ।
- 3) विस्तृत उत्तर वाले प्रश्न - निबंधात्मक प्रश्न ।

1) अति लघूत्तरात्मक या वस्तुनिष्ठ प्रश्न :-

वे प्रश्न हैं जिनका उत्तर एक शब्द या एक पद या वाक्य में दिया जा सके। वर्तनी, शब्दार्थ तथा शब्दों के प्रसंगार्थ उत्तर के सामान्य उदाहरण है। इसके अलावा भी जिन प्रश्नों के उत्तरों का मूल्यांकन पूर्णतया वस्तुनिष्ठ रूप में किया जा सकता है, वे प्रश्न वस्तुनिष्ठ कहलाते हैं। इनके मूल्यांकन में व्यक्तिनिष्ठता का कोई स्थान नहीं है। परिणामतः इनका मूल्यांकन विश्वसनीय होता है। वस्तुनिष्ठ प्रश्न मुख्यतः 3 प्रकार के होते हैं।

सत्य/असत्य, हाँ/नहीं, युगलीकरण तथा बहुविकल्पी

- (क) सत्य/असत्य प्रश्नों में कुछ कथन दिए जाते हैं और परीक्षार्थी से पूछा जाता है कि दिए हुए कथनों में से कौन सा सत्य है और कौन सा असत्य।
उदाहरणार्थ-

प्रश्न:- नीचे लिखे कथनों में से जो सत्य है उसके आगे (✓) का और जो असत्य है उसके आगे (x) का चिन्ह बनाओ-

1. प्रेमचन्द्रजी भारतेन्दु काल में हुए थे। ()
2. रामचरित मानस के रचयिता महाकवि सूरदास थे। ()
3. भूषण वीर रस के कवि हैं। ()
4. 'कितनी नावों में कितनी बार' के कवि नार्गाजुन थे। ()
5. 'कामायनी' विहारी की रचना है। ()

(ख) युगलीकरण के प्रश्नों में दो खाने बनाए जाते हैं। कुछ परीक्षण बिंदु बायीं ओर के खाने में रहते हैं और कुछ दाईं ओर के खाने में। दोनों खानों के परस्पर संबंधित बिंदुओं के युगल बनाए जाते हैं। उदाहरणार्थ—

प्रश्न:— बाईं ओर कुछ विशेषण लिखे हैं और दाईं ओर कुछ संज्ञाएँ। जिस संज्ञा के साथ जो विशेषण सही बैठता है उसकी संख्या कोष्ठक में लिखिए—

विशेषण	संज्ञा	विशेषण संख्या
1. काला	दूध	()
2. घनघोर	घोड़ा	()
3. चार किलो	युद्ध	()
4. घमासान	घटा	()

(ग) बहुविकल्पी प्रश्न में एक मूल कथन दिया होता है। जिसमें समस्या दी होती है और उसके समाधान के रूप में चार या पाँच विकल्प दिए होते हैं जिनमें से शुद्ध विकल्प को विद्यार्थी को या तो चिन्हित करना होता है या उसका क्रमांक अक्षर अलग से लिखना होता है। विकल्पों की संख्या जितनी कम होगी उत्तर देने में परीक्षार्थी के अनुमान की मात्रा उतनी ही बढ़ती जाती है। इसीलिए वस्तुनिष्ठ प्रश्नों में बहुविकल्पीय प्रश्नों को उत्तम माना जाता है। उदाहरणार्थ—

प्रश्न:— सुन्दरराम को अपने निकट संबंधी की मृत्यु पर बहुत हुआ। वाक्य में रिक्त स्थान की पूर्ति किस शब्द से ठीक प्रकार से होगी?

(क) दुःख (ख) खेद (ग) क्षोभ (घ) शोक (ङ) विषाद

बहुविकल्पीय वस्तुनिष्ठ प्रश्नों के उत्तरों का मूल्यांकन सरलता से किया जा सकता है। इन प्रश्नों द्वारा किया हुआ मूल्यांकन वैद्य तथा विश्वसनीय होता है।

2) लघूत्तरात्मक प्रश्न :—

वे प्रश्न जिनका अपेक्षित उत्तर 40 या 60 शब्दों की वाक्यावली में दिया जाता है। उन्हें संक्षिप्त उत्तर भी कहते हैं। इसमें परीक्षार्थी निबंधात्मक प्रश्नों की अपेक्षा कम स्वतंत्र होता है। लघूत्तर प्रश्नों में विषय वस्तु की व्याप्ति निबंधात्मक प्रश्नों की अपेक्षा कम होती है। उदाहरणार्थ—

प्रश्न :— महात्मा गांधी की जीवनी के आधार पर उनके बचपन की एक घटना का 40 या 60 शब्दों में वर्णन कीजिए।

लघूत्तरात्मक प्रश्नों की सहायता से निश्चित ज्ञान अथवा कौशल की परीक्षा सुनिश्चित रूप में की जा सकती है। इतना ही नहीं लघूत्तरात्मक प्रश्नों के संबंध में आश्वस्त रहता है कि प्रश्न-पत्र में अधिक से अधिक पाठों पर प्रश्न दिए जायेंगे इसलिए उसे अध्ययन के लिए विषयों का समग्र अध्ययन करना पड़ता है।

3) निबंधात्मक प्रश्न :—

इनमें दीर्घ उत्तर अपेक्षित रहता है। इसमें वर्णन की क्रमबद्धता, संगठन और संप्रेषण योग्यता की शुद्ध अभिव्यक्ति भी बांछित होती है। निबंध रचना, लेखकों का साहित्यिक परिचय, कहानी अथवा नाटक पर पूछे गए समीक्षात्मक प्रश्न, इसी कोटि में आते हैं। उद्देश्यों तथा प्रश्न-पत्र निर्माण के समग्र प्रक्रिया को अपनाने का प्रयास किया जाता है। वैधता और विश्वसनीयता प्रश्न-पत्र के आवश्यक गुण हैं। निबंधात्मक प्रश्न दो प्रकार के होते हैं—

1. निबंध लेखन के लिए पूछे गए प्रश्न ।
2. निश्चित पाठ्य सामग्री पर पूछे गए प्रश्न ।

इस प्रकार निबंधात्मक प्रश्न उत्तर की दृष्टि से मुक्त होते हैं। वस्तुनिष्ठ एवं लघूत्तर प्रश्नों की अपेक्षा निबंधात्मक प्रश्नों के उत्तर लिखने में परीक्षार्थी अपेक्षाकृत अधि स्वतंत्र होता है। ये प्रश्न प्रायः लघूत्तर तथा वस्तुनिष्ठ प्रश्नों के उत्तरों की अपेक्षा बड़े होते हैं। इस प्रकार निबंधात्मक प्रश्न अपनी मुक्त उत्तर-प्रकृति के कारण परीक्षार्थी की रचनात्मक तथा सृजनात्मक स्तर की अभिव्यक्ति की योग्यता का मूल्यांकन करने में सक्षम होते हैं।

प्रत्येक प्रश्न के उत्तर की जाँच के लिए अंक-योजना तैयार की जाती है। उदाहरण के लिए— 7 अंक के गद्यांश की सप्रसंग व्याख्या वाले प्रश्न की अंक योजना इस प्रकार हो सकती है।

सौन्दर्य—लेखक और निबंध का परिचय	$1/2$ अंक + $1/2$ अंक
पूर्व प्रसंग	1 अंक
व्याख्या के प्रमुख चार विंदुओं के आधार पर	3 अंक
शुद्ध भाषा—प्रयोग तथा मौलिक अभिव्यक्ति	3 अंक

तथ्यों की कमी, भाषा—दोष अथवा मौलिकता के अभाव में अंक काटे जा सकते हैं।

इकाई – 6

पाठ योजना – निर्माण

पाठ योजना भाषा शिक्षण का एक आवश्यक एवं अपरिहार्य अंग है। इसके बिना नियोजित शिक्षण प्रदान करना नितांत असंभव है। योजनाहीन अध्यापक उस नाविक की भाँति है, जो दिशाहीन होकर अपने गंतव्य से भटक गया हो। कन्फयूसिस ने कहा था कि— “योजनाहीन व्यक्ति को प्रारंभ में ही विपत्तियाँ घेर लेती हैं और उद्देश्य प्राप्ति उसके लिए कल्पना लोक की वस्तु बन जाती है।” अतः योग्य अध्यापक के लिए पाठ-योजना अत्यंत कारगर और विश्वसनीय साधन है। अतः नियोजित भाषा शिक्षण के लिए पाठ योजना जरूरी है। अध्यापक इसके माध्यम से लक्ष्यों का निर्धारण तथा उनकी प्राप्ति हेतु व्यवस्था, शिक्षा के अधिगम का मापन, और मूल्यांकन करता है। इससे वह समय व शक्ति की बचत करता है और व्यवस्थित ढंग से अपेक्षित ज्ञान बालकों को संप्रेषित करके अपने शिक्षण को प्रभावशाली बनाता है। इस प्रकार समग्र विश्लेषण करें तो पाठ योजना का अर्थ इस प्रकार निश्चित होता है— “पाठ योजना वह व्यवस्था है, जिसमें यह बताया जाता है कि किस पाठ में क्या उपलब्धियाँ प्राप्त करनी हैं और किन साधनों द्वारा कक्षा की क्रियाओं एवं उद्देश्यों को प्राप्त करना है।” अतः पाठ योजना लक्ष्यों के निर्धारण, लक्ष्यों की प्राप्ति, अधिगम और शिक्षण की समस्याओं के समाधान, शिक्षण के मूल्यांकन और उपयुक्त विधियों के प्रयोग की एक कारगर विधि है।

पाठ योजना संबंधी आवश्यक सुझावः—

पाठ योजना का निर्माण अध्यापक का अत्यंत कारगर एवं महत्वपूर्ण कार्य है। इसी पर उसके शिक्षण की सफलता निर्भर करती है। अतः उसके निर्माण में निम्न सावधानी बरतनी चाहिए—

1. अध्यापक कक्षा में पाठ योजना बनाकर ले जाए। यह योजना व्यावहारिक हो न कि काल्पनिक, इसका निर्माण सुविचारित, सुनिश्चित और लिखित हो।
2. यह अध्यापक की मार्गदर्शिका है। पाठ योजना साधन ही रहे, उसे साध्य के रूप में न लिया जाए।
3. प्रारंभ में यह लिखित हो। अनुभव के आधार पर यह प्रारूप अथवा रूप रेखा के रूप में हो सकती है।
4. पाठ योजना शिक्षण प्रकरण, उद्देश्यों, शिक्षण प्रक्रिया आदि के अनुरूप हो।
5. पाठ योजना के माध्यम से अपेक्षित उद्देश्यों का निर्धारण और प्राप्ति हेतु प्रयास किए जाएँ।
6. पाठ योजना में मूल्यांकन की व्यवस्था हो।
7. पाठ योजना के माध्यम से नवीन सूचनाएं छात्रों को अप्रत्यक्ष रूप से दी जाएँ।

8. पाठ योजना की प्रस्तावना रोचक व संक्षिप्त हो, और पूर्वज्ञान तथा अनुभव से उसका स्पष्ट संबंध हो।
9. पाठ योजना में छात्राध्यापक और छात्र क्रियाओं तथा प्रश्नों से संभावित उत्तर आदि की व्यवस्था हो।
10. पाठ योजना में बालकों को अभिप्रेरणा देने की उपयुक्त प्रविधियों का उल्लेख हो।
11. पाठ योजना में प्रसंगानुकूल आवश्यक सहायक सामग्री का उल्लेख हो।
12. पाठ योजना का छात्रों के जीवन से समन्वय स्थापित किया जाए।
13. पाठ योजना में बोध-प्रश्नों की व्यवस्था हो।
14. पाठ योजना संक्षिप्त, सटीक और स्वयं में पूर्ण हो।
15. पाठ योजना में गृहकर्म की भी व्यवस्था हो। गृहकार्य, छात्र में सृजनात्मकता पैदा करने वाला हो।
16. पाठ योजना अगली योजना के लिए आधार का कार्य करने वाली हो।
17. पाठ योजना में लचीलापन हो, ताकि अध्यापक शैक्षिक स्वतंत्रता का उपयोग कर सकें।

उपयुक्त बातों को ध्यान में रखकर हमें पाठ योजना का निर्माण करना चाहिए।

पाठ योजना का प्रारूप या अंगः—

पाठ योजना का प्रारूप या अंग निम्नलिखित है—

विषय :.....

उप विषय :.....

कक्षा :.....

कालांश :.....

समय :..... (मिनट में)

दिनांक :.....

सामान्य उद्देश्य

विशिष्ट उद्देश्य

पूर्वज्ञान

सहायक सामग्री

प्रस्तावना

विषय/उपविषय कथन—

प्रस्तुतीकरण

विशिष्ट उद्देश्य

छात्राध्यापक क्रियाएं छात्र क्रियाएं

मूल्यांकन

पुनरावृत्ति
मूल्यांकन प्रश्न
गृहकार्य

छात्राध्यापक क्रिया में प्रसंगानुकूल एवं स्तरानुकूल आदर्शपाठ, बोध प्रश्न, व्याख्या, विश्लेषण, मूल्यांकन, प्रश्न और गृहकार्य आदि का उल्लेख हो।

इस प्रकार अपनाकर हम भाषा शिक्षा के लिए उपयुक्त पाठ योजना का निर्माण करके शिक्षण को सार्थक एवं अधिक प्रभावशाली बना सकते हैं।

पाठ योजना:—

उपर्युक्त सोपानों या अंगों के आधार पर कविता शिक्षण की एक पाठ योजना का नमूना दिया जा रहा है। यह नमूना अपने आप में अंतिम नहीं है। इसमें परिवर्तन संभव हो सकता है।

एक तिनका (कविता)

घमंडों से भरा ऐंठा हुआ,
एक दिन जब था मुंडेर पर खड़ा।
आ अचानक दूर से उड़ता हुआ,
एक तिनका आँख में मेरी पड़ा।
मैं झिझक उठा, हुआ बेचैन—सा,
लाल होकर आँखें भी दुखने लगी।
मूँठ देने लोग कपड़े की लगे,
ऐंठ बेचारी दबे पाँवों भगी।
जब किसी ढब से निकल तिनका गया,
तो 'समझ' ने यों मुझे ताने दिए।
ऐंठता तू किसलिए इतना रहा,
एक तिनका है बहुत तेरे लिए।

पाठ योजना

विषय: हिंदी कविता
उप-विषय: एक तिनका

कक्षा: सातवीं
कालांश: तीसरी

समय: 40 मिनट

दिनांक: 05.07.2015

सामान्य उद्देश्य:

1. कविता के प्रति छात्रों में रुचि जागृत करते हुए उनमें भावों को ग्रहण करने और रसास्वादन करने की क्षमता उत्पन्न करना।

2. छात्रों की कल्पना-शक्ति का विकास करना।
3. भावों एवं विचारों के साथ पूर्ण तादात्म्य कराकर तर्कशक्ति एवं सहजभाव का बोध कराना।
4. कवि के भावों, कल्पनाओं तथा अभिव्यक्तियों के सौन्दर्य की परख-योग्यता उत्पन्न करना।
5. भाव-भंगिमाओं तथा स्वर के उतार-चढ़ाव के साथ कविता-पाठ कराना।
6. विविध शैलियों का परिचय कराना एवं उनके विकास के लिए प्रयास करना।

विषिष्ट उद्देश्य:-

1. कवि अयोध्यासिंह उपाध्याय द्वारा रचित 'एक तिनका' पढ़कर छोटे और बड़े के प्रति भावों को बताना और उसका एक सुखद सुविचार दर्शाना का ज्ञान कराना है।
2. कविता पूर्णतः वैचारिक पृष्ठभूमि पर आधारित है। छोटे-बड़े का गुमान आज के समाज की अहम सोच है का ज्ञान कराना और उसके प्रति सहानुभूति का भाव विकसित करने के लिए उत्प्रेरित करना।
3. कविता के द्वारा समरसता का भाव पैदा करने की ओर उन्मुख करना।
4. कविता के माध्यम से न्यायिकता के प्रति सोच उत्पन्न करके समाज में फैली इस अव्यावहारिकता को दूर करने के लिए सोच में ढकेलना।
5. कविताई भाषा के प्रति उन्मुख करना।
6. कविता के मर्म एवं उससे उत्पन्न भाव के प्रति सतर्क करना।

पूर्वज्ञान:-

उच्च प्राथमिक स्तर तक आते-आते बच्चे संवेदनात्मक हो जाते हैं। इतना ही नहीं छोटे-बड़े का अनुपातिक ज्ञान भी आ जाता है। देखना या परखना है कि प्रस्तुत कविता के प्रति बच्चों के अंदर कितना ज्ञान है? इसके लिए तत्संबंधित कविता से कुछ प्रश्नों के आदान-प्रदान से यह निश्चित हो जाता है कि बच्चों में कविता के प्रति कितनी जानकारी या समझ है।

सहायक सामग्री:-

लपेट श्यामपट्ट (Rolling blockboards) पर अंकित कविता, कक्षोपयोगी छोटे-बड़े का भावात्मक चित्र।

प्रस्तावना:—

इसमें विद्यार्थी के पूर्वज्ञान के आधार पर विषय का परिचय होना चाहिए। प्रस्तावना विषय से संबंधित आगामी उद्देश्यों की ओर अग्रसर होती हुई हो। इसका अर्थ यह हुआ कि बालक को विषय के प्रति आकृष्ट करना तथा विषयानुकूल वातावरण का निर्माण करना है। प्रस्तावना बच्चों को उद्दीप्त करने वाली हो जिससे बच्चों को पाठ की तरफ मोड़ा जा सके। यथा—

1. बच्चों! शरीर का कौन सा अंग सबसे मुलायम और संवेदनशील है। ('आँख' बच्चों की तरफ से)
2. 'आँख' में कुछ भी पड़ जाने या उसे आहत होने पर कैसा लगता है? (आँख दुखने लगती है और अँधेरा छा जाता है)।
3. 'तिनका' का क्या अभिप्राय है? (छोटी सी वस्तु जो हवा के झोंके से उड़ सकता है। और असावधान रहने पर अचानक तकलीफ भी दे सकता है।)

उद्देश्य कथन:—

प्रस्तावना के उपरान्त शिक्षक क्या पढ़ाने जा रहा है बच्चों को स्पष्ट करते हुए अपने उद्देश्य को उद्घोषित करता है कि 'बच्चो आज हम लोग 'एक तिनका' के माध्यम से छोटे-बड़े के मनोभावों पर आधारित कविता पढ़ेंगे। समय आने पर छोटी चीज भी उपयोगी सिद्ध होती है। इसलिए उसका अनादर नहीं करना चाहिए।

प्रस्तुतीकरण:—

जब बालक में नए ज्ञान प्राप्त करने की उत्सुकता जागृत हो जाती है तब अध्यापक को समय का लाभ उठाकर नवीन पाठ को प्रस्तुत करना चाहिए। मूल पाठ की स्थापना करने के लिए बालकों में कवि-हृदय में विद्यमान अनुभूति को जागृत करने के लिए अध्यापक को आदर्श कविता पाठ करना चाहिए। अध्यापक के आदर्श-वाचन के पश्चात् छात्रों द्वारा अनुकरण वाचन करवाना चाहिए जिससे बच्चों के अंदर पठन-क्षमता और रसास्वादन की अनुभूतियों का पता चलता है।

बोध-परीक्षा:—

बालक के पठन-क्रिया को केन्द्रित करने के लिए तथा कविता-पाठ और मौन-पाठ की जानकारी की जाँच करने के लिए उनसे बोध-विषयक प्रश्न पूछे जाने चाहिए। जिससे पता चले कि बच्चा कविता का रसास्वादन ले रहा है।

काठिन्य-निवारण:—

कविता में कुछ स्थल या स्थान ऐसे होते हैं जो छात्रों की समझ के बाहर होते हैं जिनका निवारण-अर्थ-कथन, पदान्वय, विलोम कथन, पर्याय-कथन आदि द्वारा दूर करना चाहिए। युक्तियाँ या उदाहरण विषयानुसार ही होना चाहिए।

सस्वर पाठ:—

बच्चों को कविता-पाठ कराते समय 'सस्वर पाठ' पर पूरा ध्यान देना चाहिए। कविता-पाठों में अनुभूति की प्रधानता के कारण 'मौन-वाचन' उपयुक्त नहीं होता है। अनुभूति जागृत करने के लिए समुचित रूप में भाव-भंगिमाओं के साथ कविता पढ़ाई जाये तो अनुभूति रसास्वादन बढ़ जाता है।

भाव-विश्लेषण:—

छात्रों को क्रियाशील बनाए रखने, भावों तथा सूक्ष्म अनुभूतियों को स्पष्ट करने एवं बालकों को रसानुभूति कराने के लिए उनसे यथा-योग्य प्रश्न पूछने चाहिए जिससे कविता के भाव बालकों को पूर्णतया स्पष्ट हो जायें। रसास्वादन के अवसर पर अन्य कवियों के समान भावों के अनुरूप उद्धरण आना स्वाभाविक ही नहीं बल्कि वांछनीय है। इसके अभाव में कक्षा में अनुकूल वातावरण नहीं बन पाता है।

आदर्श-पाठ:—

अध्यापक को आदर्श पाठ सुर, लय एवं ताल के साथ करनी चाहिए। भाव-भंगिमा इतनी स्वाभाविक एवं सजीव हो कि कविता-पाठ के समय ही विद्यार्थी कविता के भावों में डूबने लगे।

अनुकरण वाचन:—

अनुकरण वाचन बालकों को छन्द-भावों के साथ उचित आरोह-अवरोह एवं भाव-भंगिमाओं के साथ शुद्ध-भाव पूरी चेष्टाओं के साथ का अभ्यास कराना होता है।

निर्दिष्ट बिंदुओं के आधार पर ही प्रस्तुत पाठ योजना का विश्लेषण करेंगे ताकि भावानुभूति एवं पाठ संदर्भित संवेदनाओं, भावों, विचारों एवं कल्पनाओं का समुचित चित्रण एवं प्रायोजन हो सके।

निर्दिष्ट शिक्षण इकाई या पाठ या कविता	अध्यापक-संक्रियाएं Teachers activities	छात्र/छात्रा Pupils activities	श्यामपट्ट कार्य Blackboard activities	मूल्यांकन
निर्दिष्ट कविताओं को	सर्वप्रथम शिक्षक कविता का	छात्र पूर्णतः श्रवण करेंगे	कविता में आए कठिन शब्दों	बीच-बीच में अधिगम

चार्ट के
माध्यम से
बच्चों के
सामने रखा
जाए, या
पुस्तक के
माध्यम से
उनको
दर्शाया जाये
या ब्लैक बोर्ड
पर किनारे
लिखा जाए।

आदर्श—पाठ पूरी
सुर, लय, ताल
और भंगिमाओं के
साथ प्रस्तुत
करेगा।

का समाधान
भी शिक्षक
बीच-बीच में
करता चलता
है। शब्दार्थ
युक्ति—प्रकरण
या अन्य संदर्भों
का विश्लेषण

प्रभावित होता
है कि नहीं
इससे संबंधित
प्रश्नों का
होना चाहिए।

—	शिक्षक	या	बच्चे	शिक्षक	एंट	मूल्यांकन
	अध्यापक	पुनः	के		अचानक	प्रश्न
	बच्चों का निरीक्षण	निर्देशानुसार				बीच-बीच में
	करेगा कि कौन	अनुकरण				चलता रहेगा।
	बच्चा ठीक से पढ़	करते हैं।				
	रहा है या नहीं।					
	बच्चों द्वारा ठीक					
	से नहीं पढ़ने पर					
	उनका संशोधन					
	करेंगे।					
	इसके बाद शिक्षक	बच्चे ध्यान से		कठिन—शब्दों		
	कविता का	सुनते हैं।		का निवारण		
	भाव—विश्लेषण एवं			एवं		
	रसानुभूति आदि			विश्लेषणात्मक		
	पहलुओं की			संदर्भों का		
	विस्तृत व्याख्या			विवेचन चलता		
	करता है।			रहेगा।		

अध्यापक क्रियाएँ

1. कविता में कवि 'मैं' का प्रयोग किसके लिए किया है?

छात्रों की क्रियाएँ

अहंम या घमंड के लिए किया है
अथवा स्वयं अपने लिए।

2. मुंडेर पर कौन खड़ा था?
3. दूर से उड़ता हुआ क्या आया?

अध्यापक द्वारा विश्लेषण एवं व्याख्या:—

कवि स्वयं कह रहा है कि घमंडों से भरा हुआ व्यक्ति मानवीय पक्ष को भूल जाता है। इतरा कर चलना, छोटे-बड़े का विचार न करना उसकी स्वाभाविकता बन जाती है। पर उसके इस घमंड को दूर करने और एहसास दिलाने के लिए एक छोटा सा तिनका ही पर्याप्त होता है जो हवा के झोंके से उड़कर उसके आँख में आ पड़ा।

बच्चे ध्यान से सुनते हैं।

कविता के दूसरे खंड की व्याख्या करने के पहले शिक्षक बच्चों से प्रथम कविता के अधिगम पक्ष प्राप्ति को जानने के लिए बच्चों से कुछ प्रश्नों को पूछता है। बच्चे कुछ प्रश्नों के उत्तर भली-भाँति देते हैं तो कुछ प्रश्नों के उत्तर एक-एक कर देते हैं। इससे बच्चों का अधिगम मूल्यांकन भी होता चलता है। और शिक्षण प्रक्रिया भी आगे बढ़ती जाती है।

दूसरे और तीसरे पद्य खण्ड कठिन शब्दों का निवारण करते हुए कुछ प्रश्नों के माध्यम से पद्य-सम्बंधी भाव एवं उसमें निहित संदर्भों एवं प्रसंगों की चर्चा करते चलते हैं, जिससे उनकी समझ और अधिगम अनुक्रिया बढ़ती जाती है।

बच्चे ध्यान से सुनते हैं और बीच-बीच में पूछे गए प्रश्नों का उत्तर भी देते हैं।

पद्य खंडों की व्याख्या एवं विश्लेषण करते हुए शिक्षक यह समझाता है कि जब तिनका आँख में पड़ता है तो आँख दुखने लगती है, लाल हो जाती हैं और असहनीय दर्द देने लगती है। अर्थात् आँख दुखने लगती है, अर्थात् आँख जीवन है। उसके बिना जीवन अंधकारमय है। मैं अर्थात् घमंड खुशी जीवन को भी दुखी बना देता है। इसका एहसास उड़ते हुए तिनका उसकी आँख में पड़कर उसकी स्थिति का भान करा देता है। अर्थात् छोटे और बड़े का भाव समझ में आने लगता है कि एक छोटा सा तिनका और कहाँ मैं। किसी ढंग से दुःखती आँख से तिनका निकल जाने के बाद स्वयं मैं अर्थात् घमंड को यह समझ आने लगता है कि 'नगण्य वस्तु भी समय आने पर समर्थवान हो जाती है जैसे एक तिनका। मनुष्य की समझ के रूप में घमंड ने यही सोचा था। जीवन में बड़ा-छोटा एक समान है।

इसी प्रकार घमंडी को चेतावनी कबीर ने भी दिया है—

तिनका कबहु न निंदिए, पॉव तले जो होय ।
कबहुँ उड़ि आँखिन पड़े, पीर घनेरी होय ।।

बच्चे कविता—विश्लेषण उनकी व्याख्या ध्यान से सुनते हैं। मुख्य—मुख्य बिंदुओं को अपनी अभ्यास पुस्तिका में भी लिखते जाते हैं।

इस प्रकार कविता का विश्लेषण कर बच्चों को समझाना चाहिए। पूर्वानुशीलन (Recaptitation) विश्लेषण एवं व्याख्या के पश्चात् बच्चों से यह जान लेना चाहिए कि उनकी पूरी अधिगम हुई है या नहीं। इसके लिए विभिन्न प्रश्नों के माध्यम से समझा जा सकता है जैसे—

1. इस कविता में किस घटना की चर्चा की गयी है, जिससे घमंड नहीं करने का संदेश मिलता है।
2. कविता में घमंडी को उसकी 'समझ' ने क्या चेतावनी दी।
3. घमंडी की आँख से तिनका निकालने के लिए उसके आस—पास के लोगों ने क्या किया?

गृहकार्य:—

1. कविता याद करो।
2. 'ऐंठ' और 'समझ' शब्दों का प्रयोग कीजिए।
3. 'मैं' का शब्दिक अर्थ बताओ।

संदर्भ:—

पाठ्य—पुस्तक वसंत भाग—2 (एन.सी.ई.आर.टी.)

प्रशिक्षक का हस्ताक्षर

प्रशिक्षणार्थी का हस्ताक्षर

सुधारात्मक वर्तनी शिक्षण पाठ

दिनांक : विषय : अंतर :
कक्षा : शीर्षक : ड-ड़ : ढ-ढ़ की वर्तनी अवधि

सामान्य उद्देश्य:-

- छात्रों को सुंदर और सुझौल लिखने का अभ्यास कराना।
- छात्रों की वर्तनी संबंधी गलतियों को दूर करना।
- छात्रों में उचित गति के साथ लिखने की कुशलता का विकास करना।
- छात्रों को मानक वर्ण-रचना सिखाना।
- छात्रों में सुनकर लिखने की कुशलता का विकास करना।

विशिष्ट उद्देश्य:-

- वर्ण बनावट की दृष्टि से ड-ड़ और ढ-ढ़ में समानता है। अंतर केवल नुक्ता का है।
- उच्चारण की दृष्टि से ड-ड़ और ढ-ढ़ के उच्चारण स्थान में समानता है। अंतर केवल उच्चारण प्रयत्न का है।
- छात्र लेखन में एक स्थान पर दूसरे वर्ण का प्रयोग करते हैं तथा लेखन में वर्तनीगत अशुद्धियाँ करते हैं।
- दोनों वर्णों का सही उच्चारण कराते हुए इनके लेखन के स्तर पर शुद्ध वर्तनी सिखाना इस पाठ का उद्देश्य है।

सहायक सामग्री : चार्ट/तालिका/आरेख
पूर्वज्ञान : छात्र ड-ड़ तथा ढ-ढ़ से बने कुछ शब्द पढ़ चुके हैं।
प्रस्तुतीकरण :
प्रस्तावना : निर्देश-सुनिए और लिखिए
1) डर के मारे बूढ़ा पेड़ पर चढ़ गया।
2) थोड़ी ही देर में वह धड़ाम से गिर पड़ा।

आदेश:-

एक दूसरे से कापियाँ बदल लीजिए और श्याम पट्ट पर लिखे वाक्य को देखकर शब्दों की वर्तनी से भिन्न वर्तनी वाले शब्दों को रेखांकित कीजिए।

उद्देश्य कथन:-

(गलतियों का पता लगाने के बाद) आप में से बहुत छात्रों ने बूढ़ा, पेड़, थोड़ी, घड़ाम, पड़ा शब्दों की वर्तनी अशुद्ध लिखी है। आज हम ड-ड़ और ढ-ढ़ वर्णों से युक्त शब्दों की वर्तनी का अभ्यास करेंगे। वर्तनी में इन वर्णों के प्रयोग के नियम जानेंगे।

शिक्षण अधिगम प्रक्रिया:-

अभ्यास 1 :- मेरे साथ वाचन कीजिए-

ड

डर

डोरा

डकार

ड़

लड़का

सड़क

गाड़ी

इन शब्दों को अपनी कापी में लिखिए।

अभ्यास 2 :- मेरे साथ वाचन कीजिए-

ढ

ढक्कन

ढोल

ढेर

ढ़

पढ़ाई

कढ़ाई

अनपढ़

इन शब्दों को अपनी कापी में लिखिए।

अभ्यास 3 :- चार्ट को देखकर शब्द बनाइए और पढ़िए-

अ

तो

पे

पहा

मो

रग

ल

का

ग

च

चि

डे

प

बा

ड़

ढ़

अभ्यास 4 :- (चार्ट दिखाते हुए) इन वाक्यों को अपनी कापी में लिखिए-

डर के मारे लड़का पेड़ पर चढ़ गया।

बूढ़ा आदमी लड़ नहीं सकता।

इस साड़ी की कढ़ाई बढ़िया है।
चमड़ी जाए पर दमड़ी न जाए।
बुढ़ापे के कारण बूढ़ा पहाड़ पर नहीं चढ़ सकता।
वह पढ़ाई-वढ़ाई नहीं करता,
अपने बड़प्पन की डींग मारता है।

अभ्यास 5 :- इन वाक्यों को मेरे साथ-साथ वाचन कीजिए—
पुनरावृत्ति / दृढ़ीकरण :-

नियम:- (1) ड और ढ वर्णों को शब्द के शुरू में प्रयोग करते हैं।
(2) ङ और ढ वर्णों का प्रयोग शब्द के बीच में और अंत में किया जाता है।

आदेश:- इन नियमों को अपनी कॉपी में लिखो।

पुनरीक्षण / मूल्यांकन:-

(क) अशुद्ध वर्तनी के शब्दों को रेखांकित करो।

लड़ना	पढ़ाई	ढोल
ड़र	पढ़	ढेर
लड़ाई	लड़	अनाडी
पेड़	डेढ़	डरपोक
ढिलाई	बूढ़ा	

(ख) रेखांकित शब्दों को शुद्ध वर्तनी में लिखो।

गृहकार्य:- (1) ड और ङ वर्णों से युक्त 10-10 शब्द लिखकर लाओ।
(2) ढ और ढ वर्णों से बने 10-10 शब्द लिखकर लाओ।